ISBN No. : 978-93-5980-316-6

# उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों के लिए अंगूरबाग क्रियाएं
# Grape vineyard practices for tropical regions

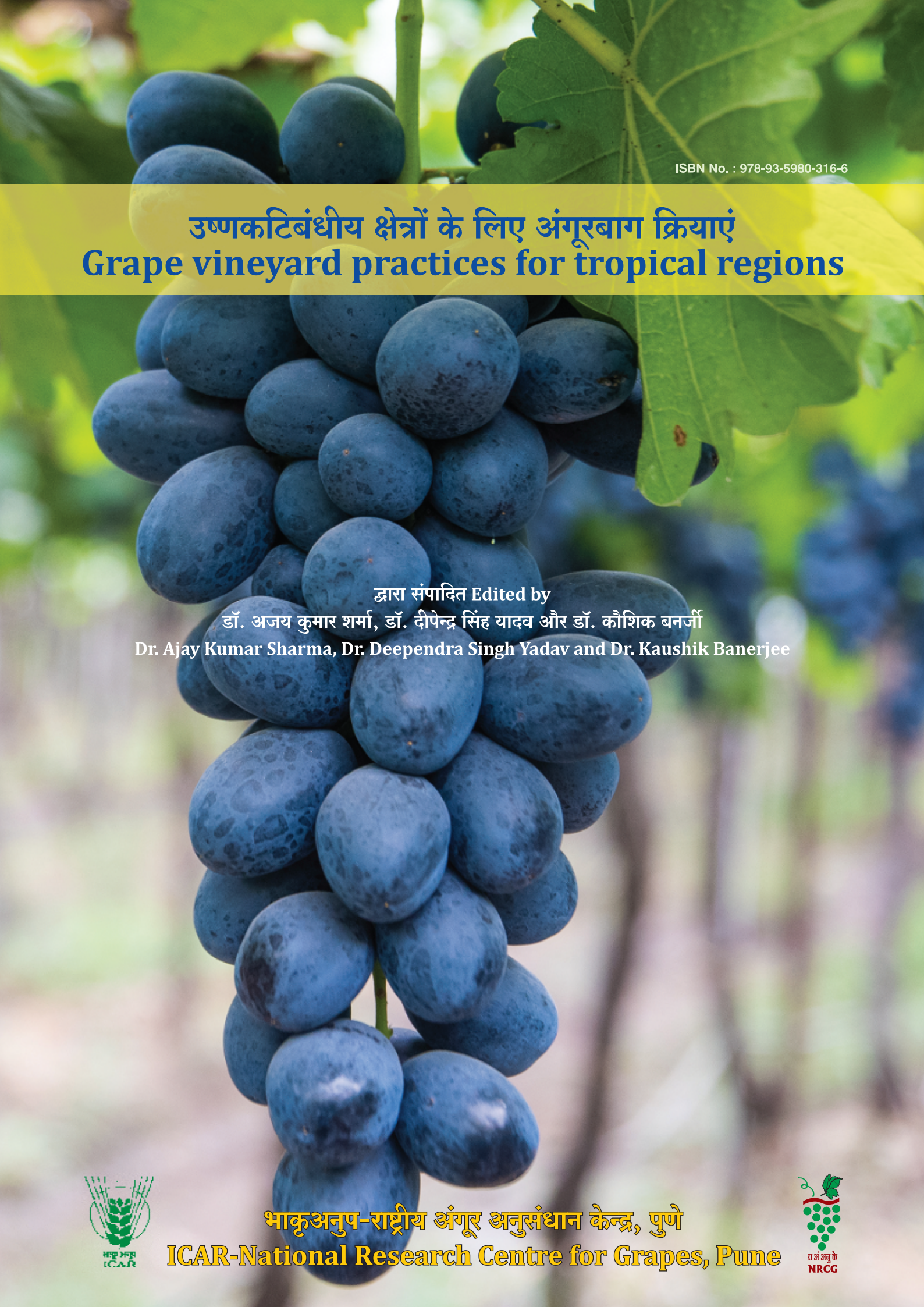

द्वारा संपादित Edited by
डॉ. अजय कुमार शर्मा, डॉ. दीपेन्द्र सिंह यादव और डॉ. कौशिक बनर्जी
Dr. Ajay Kumar Sharma, Dr. Deependra Singh Yadav and Dr. Kaushik Banerjee

भाकृअनुप-राष्ट्रीय अंगूर अनुसंधान केन्द्र, पुणे
ICAR-National Research Centre for Grapes, Pune

ISBN No. : 978-93-5980-316-6

# उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों के लिए अंगूरबाग क्रियाएं

# Grape vineyard practices for tropical regions

भाकृअनुप-राष्ट्रीय अंगूर अनुसंधान केन्द्र
डाक पेटी सं. 3, मांजरी फार्म डाक घर, सोलापुर मार्ग, पुणे – 412307
ICAR-National Research Centre for Grapes
P. B. No. 3, Manjari Farm P. O. , Solapur Road, Pune – 412307

**उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों के लिए अंगूरबाग क्रियाएं / Grape vineyard practices for tropical regions**

**Editors:** Dr. Ajay Kumar Sharma, Dr. Deependra Singh Yadav and Dr. Kaushik Banerjee

**Citation:** Sharma, A. K; Yadav, D. S. and Banerjee, K. 2023. Grape vineyard practices for tropical regions. Published by ICAR- National Research Centre for Grapes, Pune. Pp:112.

**Copyright:** © 2023. ICAR-National Research Centre for Grapes-412307

यह पुस्तक अंगूर उत्पादकों, सरकारी अधिकारियों, छात्रों, अनुसंधान अध्येताओं, कृषि क्षेत्र तथा सम्बद्ध क्षेत्र के शिक्षाविदों हेतु एबीआई द्राक्षा, भाकृअनुप–राष्ट्रीय अंगूर अनुसंधान केन्द्र, पुणे द्वारा संपादित एवं प्रकाशित की गई है। यह पुस्तक भाकृअनुप–राष्ट्रीय अंगूर अनुसंधान केन्द्र, पुणे द्वारा आयोजित प्रशिक्षण कार्यक्रमों में दिए गए व्याख्यानों पर आधारित है। इस पुस्तक में प्रकाशित जानकारी केवल शैक्षिक और ज्ञान साझा करने के उद्देश्य से है। ई–पुस्तक में निहित तरीकों, निर्देशों या विचारों के किसी भी उपयोग से व्यक्तियों या संपत्ति को किसी भी क्षति या चोट या आर्थिक नुकसान के लिए न तो प्रकाशक और न ही योगदानकर्ता, लेखक और संपादक कोई दायित्व लेते हैं। प्रकाशकों की पूर्व अनुमति के बिना इस प्रकाशन का कोई भी भाग पुनरुत्पादित या प्रसारित नहीं किया जा सकता है।

This book is edited and published ABI Draksha, ICAR-National Research Centre for Grapes, Pune to grape growers, Govt. officers, students, research scholars, academicians in the field of agriculture and allied sectors. This book is based on lectures delivered in training programs organized by ICAR-National Research Centre for Grapes, Pune. The information published in this book is for educational and knowledge sharing purpose only. Neither the publisher nor the contributors, authors and editors assume any liability for any damage or injury or economical loss to persons or property from any use of methods, instructions, or ideas contained in this e-book. No part of this publication may be reproduced or transmitted without prior permission of the publishers.

प्रकाशक / Publisher: निदेशक The Director,
भाकृअनुप–राष्ट्रीय अंगूर अनुसंधान केन्द्र, पुणे / ICAR-NRC for Grapes, Pune

## योगदानकर्ता Contributors

| क्रमांक S. No. | नाम Name | पद Designation |
|---|---|---|
| 1 | डॉ. कौशिक बनर्जी<br>Dr. Kaushik Banerjee | निदेशक<br>Director |
| 2 | डॉ. रा. गु. सोमकुवर<br>Dr. R. G. Somkuwar | प्रधान वैज्ञानिक (बागवानी)<br>Principal Scientist (Horticulture) |
| 3 | डॉ. अजय कुमार उपाध्याय<br>Dr. Ajay Kumar Upadhyay | प्रधान वैज्ञानिक (मृदा विज्ञान)<br>Principal Scientist (Soil Science) |
| 4 | डॉ. स. द. रामटेके<br>Dr. S. D. Ramteke | प्रधान वैज्ञानिक (पादप कार्यिकी)<br>Principal Scientist (Plant Physiology) |
| 5 | डॉ. अजय कुमार शर्मा<br>Dr. Ajay Kumar Sharma | प्रधान वैज्ञानिक (बागवानी)<br>Principal Scientist (Horticulture) |
| 6 | डॉ. सुजॉय साहा<br>Dr. Sujoy Saha | प्रधान वैज्ञानिक (पादप रोग विज्ञान)<br>Principal Scientist (Plant Pathology) |
| 7 | डॉ. दीपेन्द्र सिंह यादव<br>Dr. Deependra Singh Yadav | वरिष्ठ वैज्ञानिक (कीट विज्ञान)<br>Senior Scientist (Entomology) |
| 8 | डॉ. रोशनी समर्थ<br>Dr. Roshni Samarth | वरिष्ठ वैज्ञानिक (पादप प्रजनन)<br>Senior Scientist (Plant Breeding) |
| 9 | डॉ. युक्ति वर्मा<br>Dr. Yukti Verma | वैज्ञानिक (मृदा विज्ञान)<br>Scientist (Soil Science) |

प्रस्तावना III
Preface V

## विषयसूची


| | | |
|---|---|---|
| 1. | अंगूर की प्रमुख किस्में | 1 |
| 2. | गुणवत्तापूर्ण अंगूर उत्पादन के लिए वितान व्यवस्थापन पद्धतियाँ | 3 |
| 3. | अंगूर की खेती के लिए मृदा और जल की गुणवत्ता का आंकलन | 10 |
| 4. | सिंचाई समयबद्धन और नमी संरक्षण तकनीकियां | 13 |
| 5. | चूनेदार तथा सोडिक मृदाओं में पोषक तत्व प्रबंधन | 18 |
| 6. | अंगूर में पादप वृद्धि नियामकों का विवेकपूर्ण उपयोग | 24 |
| 7. | मौसम पूर्वानुमान और रोग प्रबंधन में इसका महत्व | 27 |
| 8. | अंगूर के बागों में कीट प्रबंधन | 36 |
| 9. | अंगूर में तुड़ाई उपरांत प्रबंधन | 43 |
| 10. | निर्यात योग्य अंगूर के लिए कीटनाशक अवशेष निगरानी योजना | 46 |
| | अनुबंध–5 | 51 |


## Contents


| | | |
|---|---|---|
| 1. | Major table grape varieties | 59 |
| 2. | Canopy management practices to produce quality grapes | 61 |
| 3. | Appraisal of soil and water quality for grape cultivation | 68 |
| 4. | Irrigation scheduling and moisture conservation techniques | 70 |
| 5. | Nutrient management in calcareous and sodic soils | 75 |
| 6. | Judicious use of Plant Growth Regulators in Grapes | 80 |
| 7. | Weather forecasting and its importance in disease management | 83 |
| 8. | Insect-pest management in vineyards | 93 |
| 9. | Post-harvest management in grapes | 100 |
| 10. | Pesticide residue monitoring plan for exportable grapes | 103 |
| | Annexure-5 | 108 |

# प्रस्तावना

उष्णकटिबंधीय परिस्थितियों में उगने वाले अंगूर को विभिन्न प्रकार के अजैविक और जैविक तनावों का सामना करना पड़ता है। इन तनावों के प्रबंधन में अंगूर उत्पादकों के लिए अधिक लागत और कम वित्तीय लाभ शामिल है। इसलिए, अंगूर की खेती में स्थिरता अक्सर चुनौतीपूर्ण प्रतीत होती है। पुस्तक उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों के लिए अंगूरबाग क्रियाएं, उष्णकटिबंधीय कृषि–जलवायु परिस्थितियों के तहत किए गये वैज्ञानिक अध्ययनों एवं क्षेत्रीय अनुभव के आधार पर उत्पन्न ज्ञान प्रदान करती है। यह पुस्तक अंगूर की लताओं के लचीलेपन और अनुकूलनशीलता के साथ–साथ उन लोगों के समर्पण और सरलता का प्रमाण है जो इन हरित और जीवंत क्षेत्रों में अंगूर की खेती करने का साहस करते हैं।

हमारा उद्देश्य आपको उष्णकटिबंधीय अंगूर उगाने वाले वातावरण में फलने–फूलने के लिए आवश्यक ज्ञान और व्यावसायिक दृष्टिकोण प्रदान करना है। यह पुस्तक एक सहयोगात्मक प्रयास है जो अंगूर की खेती करने वालों, शोधकर्ताओं और उत्पादकों की विशेषज्ञता जो खुद को उष्णकटिबंधीय अंगूर की खेती की जटिलताओं में पाते हैं। साथ में, हमने दशकों के अनुभव और शोध परिणामों को एक व्यापक मार्गदर्शिका में संकलित किया है, जो उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में अंगूर गतिविधियों के लिए एक समग्र दृष्टिकोण प्रदान करता है।

अंगूर की सही किस्म का चयन सफल अंगूर उगाने का अधार है, और यह पुस्तक महत्वपूर्ण किस्मों के बारे में बहुमूल्य जानकारी प्रदान करती है। वितान प्रबंधन, अंगूर की खेती का महत्वपूर्ण पहलू है, उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों की विशिष्ट परिस्थितियों के अनुरूप तकनीकों पर विशेष ध्यान देते हुए इस पर विस्तार से परिचर्चा की गई है। मृदा और जल प्रबंधन के सर्वोपरि महत्व को ध्यान में रखते हुए, इस पुस्तक में प्रभावी मृदा और पोषण प्रबंधन रणनीतियों और पैन वाष्पीकरण और फलाद्गमिकी अध्ययनों के आधार पर सिंचाई की अनुसूची के माध्यम से मार्गदर्शन किया गया है। गुणवत्तापूर्ण अंगूर के गुच्छों के उत्पादन के लिए वृद्धि नियामकों के अनुप्रयोगों पर पर्याप्त रूप से चर्चा की गई है। पुस्तक, सुरक्षित पौध संरक्षण रसायनों के अनुप्रयोगों के माध्यम से कीटों और रोग प्रबंधन पर भी दिशा देती है। उसी समय, जैव नियंत्रण कर्मकों के अनुप्रयोगों का वर्णन किया गया है।

तुड़ाई उपरांत संभलाव अपने आप में एक कला है, खासकर उष्णकटिबंधीय जलवायु में जहां अंगूर तेजी से खराब हो सकते हैं। पुस्तक में अंगूर की ताजगी और गुणवत्ता बनाए रखने, भंडारण और परिवहन के लिए नवाचारी तकनीकों का वर्णन किया गया है। पुस्तक का एक मुख्य आकर्षण 'अवशेष–मुक्त अंगूर' के उत्पादन पर एक अध्याय है। ऐसे युग में जहां उपभोक्ता सुरक्षित और पर्यावरण–अनुकूल उपज की अधिक मांग कर रहे हैं, हम जैविक और टिकाऊ प्रथाओं पर ध्यान केंद्रित करते हैं जो किसानों को न्यूनतम रासायनिक अवशेषों के साथ अंगूर की खेती करने की अनुमति देते हैं, जो बाजार और पर्यावरण दोनों मानकों को पूरा करते हैं।

उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों के लिए अंगूरबाग क्रियाएं सिर्फ एक पुस्तक से कहीं अधिक है; यह अंगूर उत्पादकों या उन लोगों की मूल आवश्यकता को पूरी करेगी जो उष्णकटिबंधीय अंगूर की खेती की क्षमता को पहचानने के लिए उत्साहित हैं। हिंदी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं में पुस्तक की उपलब्धता की विशिष्टता पूरे भारत में फैले इच्छुक हितधारकों तक इसकी पहुंच बढ़ाएगी।

**सम्पादक**

❄❄❄

# Preface

Grape growing under tropical conditions faces different type abiotic and biotic stresses. Management of these stresses involves a high input cost and low financial return to grape growers. Hence, sustainability in viticulture often appears challenging. The book "Grape Vineyard Practices for Tropical Regions," provides knowledge generated based on scientific studies and field experience under tropical agro-climatic conditions. This book is a testament to the resilience and adaptability of grapevines, as well as the dedication and ingenuity of those who dare to cultivate grapes in these lush and vibrant regions.

Our aim is to equip you with the knowledge and practical insights needed to thrive in the tropical grape-growing environment. This book is a collaborative effort that draws upon the expertise of viticulturists, researchers, and growers who have immersed themselves in the complexities of tropical grape cultivation. Together, we have distilled decades of experience and research outputs into a comprehensive guide, offering a holistic approach to grapevine activities in tropical regions.

Choosing the right grape variety is the foundation of successful grape growing, and this book provides valuable insights about important cultivars. Canopy management, a critical aspect of grape cultivation, is addressed in detail, with a focus on tailoring techniques to suit the specific conditions of tropical regions. Considering the paramount importance of soil and water management, this book will guide through effective soil and nutrient management strategies and irrigation scheduling based on pan evaporation and phenological studies. The applications of growth regulators are adequately discussed for producing quality grape bunches. The book also deliberates management of insect-pests and diseases through applications of safer plant protection chemicals. Sametime, applications of biocontrol agents have been described.

Post-harvest handling is an art in itself, particularly in tropical climates where grapes may deteriorate rapidly. The book has described innovative techniques to maintain the freshness and quality of grapes, storage and transportation. One of the book's highlights is a chapter on the production of residue-free grapes. In an era where consumers increasingly demand safe and eco-friendly produce, we delve into organic and sustainable practices that allow growers to cultivate grapes with minimal chemical residues, meeting both market and environmental standards.

"Grape Vineyard Practices for Tropical Regions" is more than just a book; it will serve the basic need to grape growers or those who are passionate about harnessing the potential of tropical grape cultivation. The uniqueness of availability of the book in both Hindi and English will enhance its reach to interested stakeholders spread pan India.

**Editors**

# अंगूर की प्रमुख किस्में

डॉ. रोशनी समर्थ

अंगूर आर्थिक रूप से लाभकारी फल फसलों में से एक है और यह फल विभिन्न देशों के समशीतोष्ण से गर्म जलवायु वाले क्षेत्रों में उगाया जाता है। विश्व स्तर पर प्रमुख रूप से इसे वाइन के उद्देश्य हेतु उगाया जाता है, लेकिन भारत में अंगूर की खेती का अधिकांश क्षेत्र ताजे उद्देश्य हेतु किया जाता है। बीजरहितता, कड़कीली मणि और पतली त्वचा के साथ-साथ आकर्षक गुच्छा की उपस्थिति, विपणन के लिए महत्वपूर्ण मानदंडों में से एक है। जबकि अंगूर उत्पादक प्राकृतिक रूप से बड़ी मणि, ढीले गुच्छों और अच्छी शेल्फ लाइफ की मांग करते हैं। वाइन अंगूर की तुलना में, ताजे अंगूरों में शर्करा कम और गूदा सामग्री अधिक होती है। यहाँ पर कुछ प्रमुख खाने वाली अंगूर किस्मों की मुख्य विशेषताओं पर चर्चा की गई है।

## थॉमसन सीडलैस

यह दुनिया भर में उगाई जाने वाली अंगूर की एक प्रमुख किस्म है। व्यावसायिक तौर पर छह से सात दशकों से भारत में ताजे अंगूर के प्रयोजन हेतु बड़े पैमाने पर इस किस्म की खेती की जा रही है। इस किस्म का उपयोग किशमिश बनाने के लिए भी किया जाता है। इससे प्रति हेक्टेयर 20-24 टन गुणवत्ता वाले अंगूर पैदा हो सकते हैं और फलत छंटाई के बाद से तुड़ाई तक लगभग 130-145 दिनों की आवश्यकता होती है। पादप वृद्धि नियामकों के उपयोग से मणि का औसत आकार 20-22 मिमी व्यास का हो सकता है। थॉमसन सीडलैस से क्लोनल चयन से प्राप्त अन्य किस्में जैसे तास-ए-गणेश, माणिक चमन, सोनाका, 2ए क्लोन, एच-5, इत्यादि भी देश में व्यापक रूप से उगाई जा रही हैं।

## रैड ग्लोब

यह किस्म कैलिफ़ोर्निया विश्वविद्यालय, डेविस, संयुक्त राज्य अमेरिका में विकसित की गई है और यह 1985 के दौरान भारत में लाई गई थी। यह देर से पकने वाली, बीजयुक्त, रंगीन किस्म है और गुच्छों की तुड़ाई हेतु लगभग 135-150 दिनों की आवश्यकता होती है। यह अपने बड़े गुच्छों (गुच्छे का औसत वजन 800-1000 ग्राम) और बहुत मोटी मणियों के कारण लोकप्रिय है। मणियाँ लाल, गोल, गूदेदार होती हैं जिनका औसत आकार 22-25 मिमी व्यास का होता है। इसकी तुड़ाई 17 से 18 °ब्रिक्स शर्करा सामग्री पर की जाती है। यह किस्म अच्छी शेल्फ लाइफ के लिए जानी जाती है और इसे आसानी से कम से कम तीन महीने तक संग्रहित किया जा सकता है। इसकी फल उपज क्षमता 20-25 टन प्रति हेक्टेयर है।

## क्रिमसन सीडलैस

यह संयुक्त राज्य कृषि विभाग, कैलिफोर्निया में विकसित एक संकर है। यह देर से पकने वाली रंगीन किस्म है और छंटाई से लेकर गुच्छों की तुड़ाई तक 135 दिन से अधिक समय लेती है। लताओं की प्रकृति ओजस्वी होती है। गुच्छे मध्यम आकार और शंकाकार आकृति के होते हैं। मणियां लाल, बेलनाकार-अंडाकार, बीज रहित और बड़ी होती हैं। मणियों में सख्त गूदा, मोटी त्वचा और तटस्थ स्वाद होता है। इस किस्म में गुच्छों का विरलन करने या मणि आकार हेतु जिब्रेलिक अम्ल की आवश्यकता नहीं/न्यूनतम होती है। गुच्छों और मणि विकास के लिए हाथ द्वारा गुच्छों के न्यूनतम विरलन की आवश्यकता हो सकती है। तुलनात्मक रूप से फल अम्लीय होते हैं और घरेलू बाजार के लिए 25 से अधिक शर्करा: अम्ल अनुपात पर तोड़े जाते हैं। अच्छी शेल्फ लाइफ के कारण इसे 20 सप्ताह तक संग्रहित किया जा सकता है।

## फ्लेम सीडलैस

इस किस्म को फ्रेस्नो विश्वविद्यालय, कैलिफोर्निया, संयुक्त राज्य अमेरिका में संकरण कार्यक्रम के माध्यम से विकसित किया गया है। यह जल्दी पकने वाली किस्म है और फलों को छंटाई के 110–115 दिन बाद तोड़ा जा सकता है। लतायें ओजस्वी होती हैं और प्रति एकड़ औसतन 10–12 टन उपज देती हैं। गुच्छे अच्छी तरह से भरे हुए, मध्यम से बड़े आकार के और शंकाकार आकृति के होते हैं। चूंकि उत्तर भारतीय परिस्थितियों में थॉमसन सीडलैस जैसी अन्य व्यावसायिक किस्मों के फल पकने के समय पर बारिश होती है, इसलिए यह ऐसी जलवायु व्यवस्था के लिए उपयुक्त है। यह मस्कट के स्वाद को बनाए रखने के साथ–साथ पकने की स्थिति ठंडी परिस्थितियों के साथ मेल खाती है और बेहतर रंग प्राप्त किया जा सकता है। रख–रखाव के प्रति संवेदनशील होने के कारण यह दूर के बाजार के लिए उपयुक्त नहीं है और ठंडी परिस्थितियों में फलों को 10 सप्ताह तक भंडारित किया जा सकता है।

## फैंटासी सीडलैस

यह किस्म यूएसडीए, फ्रेस्नो, कैलिफ़ोर्निया में संकरण कार्यक्रम का परिणाम है। यह कम अवधि वाली किस्म है और छंटाई के बाद फलों की तुड़ाई तक 115 से 125 दिन का समय लगता है। लता के ओजस्वी चरित्र के कारण, मूलवृंत का चयन, जल और पोषक तत्व नियंत्रण फलन के लिए महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। विरलन और आकार देने हेतु जिब्रेलिक अम्ल की कोई आवश्यकता नहीं है। गुच्छे मध्यम आकार के और प्राकृतिक रूप से ढीले होते हैं। मणि बीज रहित, काली, मध्यम से मोटे आकार की होती हैं, जिनका औसत आकार 16–18 मिमी, पतली त्वचा और गूदा सख्त होता है। यह किस्म ठंड या अत्यधिक आर्द्र परिस्थितियों में मणि तिरकने हेतु संवेदनशील है। इस किस्म की भंडारण क्षमता कम है और इसे 8 सप्ताह तक ठंडे स्थान पर संग्रहित किया जा सकता है।

## शरद सीडलैस एवं क्लोन

शरद सीडलैस की उत्पत्ति 1980 के दशक के दौरान रूसी किस्म किशमिश चर्नयी से प्राकृतिक चयन के माध्यम से हुई है। छँटाई के बाद फलों की तुड़ाई के लिए लगभग 125 दिनों की आवश्यकता होती है और प्रति हेक्टेयर लगभग 22–26 टन उपज प्राप्त होती है। मणियां नीली काली, बीजरहित, आयताकार से अण्डाकार आकृति की और दृढ़ होती हैं। इस किस्म की तुड़ाई 18–20 °ब्रिक्स पर 0.5–0.7 प्रतिशत अम्लता के साथ की जाती है। अधिकांश व्यावसायिक रूप से उगाई जाने वाली काली बीज रहित किस्में शरद सीडलैस से उत्पन्न हुई हैं जैसे नानासाहेब पर्पल सीडलैस, सरिता सीडलैस, कृष्णा सीडलैस, नाथ सीडलैस, जय सीडलैस, आदि। ये सभी मणि का बड़ा आकार प्राप्त करने के लिए जिब्रेलिक अम्ल उपचार के प्रति बहुत संवेदनशील हैं। नानासाहेब पर्पल सीडलैस अतिरिक्त बड़ी मणि के लिए लोकप्रिय है, जबकि सरिता सीडलैस और कृष्णा सीडलैस लंबी मणियों के लिए लोकप्रिय हैं।

## गुलाबी

मस्कट हैम्बर्ग किस्म को भारत में गुलाबी के नाम से जाना जाता है। उपलब्ध अन्य व्यावसायिक किस्मों की तुलना में इस किस्म की परिपक्वता अवधि अगेती होती है (फलों की छंटाई के 110–115 दिन बाद)। यह दक्षिणी भारत में लोकप्रिय है और मुख्य रूप से तमिलनाडु में विशेष रूप से थेनी और डिंडीगुल जिलों में उगायी जाती है। स्थानीय स्तर पर यह पनीर द्राक्ष के नाम से लोकप्रिय है। मणियाँ लाल–बैंगनी, गोल और औसत आकार 15–16 मिमी की होती हैं। औसत उत्पादकता 14–16 टन/हेक्टेयर है।

❄❄❄

# गुणवत्तापूर्ण अंगूर उत्पादन के लिए वितान व्यवस्थापन पद्धतियाँ

**डॉ. रा. गु. सोमकुवर**
**प्रधान वैज्ञानिक (बागवानी)**

अंगूर लता एक आरोही है। इसमें कमजोर तने के साथ अनिश्चित वृद्धि होती है। इसे न केवल अपने ऊपरी भागों और फलों का वजन सहन करने के लिए बल्कि वितान स्थापत्य को बनाए रखने के लिए भी सहायता की आवश्यकता होती है। ट्रेलिस और ट्रेनिंग बढ़ती हुई लताओं की वितान संरचना को आकार देती हैं। लताओं की ट्रेनिंग करने के लिए उपयोग की जाने वाली गढ़ी हुई संरचना को ट्रेलिस कहा जाता है जबकि वितान को आकार देने की प्रक्रिया को ट्रेनिंग कहा जाता है। अंगूर की लता को जिस तरह से प्रशिक्षित किया जाता है, वह न केवल लता की वृद्धि, उत्पादकता और गुणवत्ता को प्रभावित करता है बल्कि सूक्ष्म जलवायु में भी बदलाव लाता है। वितान प्रबंधन, किस्म, अंगूरबाग स्थल, मौसमी जलवायु, आगतों और ट्रेलिस प्रणाली की परस्पर क्रिया के साथ शुरू होता है।

बारहमासी वृक्षों के वितान प्रबंधन में मूल अवधारणा बढ़ती उत्पादकता के लिए मृदा और जलवायु कारकों का सर्वोत्तम उपयोग करना है। पादप ओज, उस क्षेत्र में सूर्यप्रकाश, तापमान और सापेक्षिक आर्द्रता जैसे कारक फलों के उत्पादन और गुणवत्ता में बहुत बड़ी भूमिका निभाते हैं।

## वितान व्यवस्थापन

वितान लता संरचना के आकार और आकृति को संदर्भित करता है। लता वितान के घटक इसकी प्राथमिक भुजायें और द्वितीयक भुजायें हैं, जो लताओं, केन, प्ररोह और पत्तियों की स्थायी रूपरेखा बनाते हैं। जबकि वितान का आकार प्राथमिक और माध्यमिक भुजाओं की संख्या और लंबाई, केन संख्या, प्ररोह संख्या और लंबाई और पत्तियों की संख्या और आकार पर निर्भर करता है, वितान की आकृति बाहों एवं प्ररोहों की लंबाई और अभिविन्यास द्वारा निर्धारित की जाती है।

## अनुकूल वितान

अनुकूल वितान के द्वारा निम्नलिखित शर्तों को पूरा किया जाना चाहिए:

1. इसमें पर्याप्त संख्या में केन होने चाहिए, जो कि फलत की इकाइयाँ हैं।
2. वृद्धि मौसम (मई-अगस्त) के दौरान वितान में पर्याप्त प्रकाश और वायु-संचार की अनुमति दे।
3. फलत मौसम (नवंबर-मार्च) के दौरान गुच्छों को पोषण देने और उनकी रक्षा करने के लिए इसमें पर्याप्त कवरेज होना चाहिए।
4. यह प्रत्येक पत्ती द्वारा कुशल प्रकाश संश्लेषण की सुविधा के लिए पत्तियों के अतिव्यापी होने से बचाए।
5. यह कीटनाशकों और वृद्धि नियामकों के छिड़काव को प्रभावी कवरेज दे।
6. यह ऐसी सूक्ष्मजलवायु का निर्माण नहीं करे जो रोग की वृद्धि हेतु अनुकूल हो।

## अंगूर में वितान व्यवस्थापन के उद्देश्य

क. लता की वानस्पतिक वृद्धि को नियंत्रित करने के लिए

ख. फल और पत्तियों का सूर्यप्रकाश के साथ संपर्क में सुधार करने के लिए

ग. वितान में वायु प्रवाह को बढ़ाने के लिए ताकि रोग के दबाव को कम किया जा सके

घ. कीटनाशक अनुप्रयोगों के कवरेज और प्रभावशीलता में सुधार करने के लिए

ड़ आसान कर्षण क्रियाओं जैसे विरलन, डुबोना, छंटाई और तुड़ाई को सुविधाजनक बनाने हेतु

च. फलों की उपज और गुणवत्ता में सुधार हेतु

## कम वितान सूक्ष्मजलवायु के लाभ

1. यह वितान वातावरण में प्रकाश और हवा के आसान प्रवेश में मदद करता है
2. यह आर्द्रता स्तर को कम करके और धूप और हवा द्वारा पत्तियों और फलों को आसानी से सूखने की अनुमति देकर लगभग सभी बीमारियों की घटनाओं को कम करता है।
3. यह वितान के आंतरिक भाग में छिड़काव के प्रवेश को बेहतर बनाने में भी मदद करता है
4. अधिक कुशल प्रकाशसंश्लेषण हेतु यह सूर्य के प्रकाश को आंतरिक वितान में प्रवेश करने की अनुमति देता है
5. यह अंगूर के गुच्छों को बेहतर दिखने में मदद करता है, अंगूर को बेहतर गुणवत्ता वाला बनाता है

## फलत मौसम के दौरान आवश्यकतायें

क. मणि स्थापन तक खुला वितान और अच्छा वायु-संचार।

ख. विरेजन तक पर्याप्त पत्ते।

ग. मणि विकास।

घ. न्यूनतम रोग विकास।

## वितान प्रबंधन में रणनीतियाँ और अभ्यास

वितान प्रबंधन निर्यात गुणवत्ता अंगूर की अधिकतम उपज प्राप्त करने हेतु क्रियाओं को संदर्भित करता है। इन क्रियाओं में लताओं की मजबूत वृद्धि और वृद्धि को उत्पादकता में बदलने की परिकल्पना है। निर्यात गुणवत्ता वाले अंगूरों के उत्पादन हेतु वितान प्रबंधन की रणनीतियों और क्रियाओं की रूपरेखा नीचे दी गई है।

### पत्तियां हटाना

फलत छंटाई के बाद गुच्छों की उपस्थिति में समरूपता आवश्यक है ताकि पौधों पर वृद्धि नियामकों के छिड़काव एक बार में लिए जा सकें। इसे प्राप्त करने के लिए, सभी कलियों का समान रूप से स्फुटन होना चाहिए। इसलिए, वास्तविक फलत छंटाई से 15 दिन पहले पत्तियों को हटा दिया जाता है। यह दो तरीकों से किया जाता है, हाथ के द्वारा या रसायन (इथेफोन) के उपयोग से। पत्ती हटाने से कली सूर्य के प्रकाश के संपर्क में आ जाती है जिससे कली में खाद्य सामग्री का संघटन होता है। यह छंटाई किए जाने से पहले कली को उभारने में मदद करता है। इस प्रकार कली का स्फुटन तेज और जल्दी हो जाता है।

हालाँकि, इस बात का ध्यान रखा जाना चाहिए कि रासायनिक छिड़काव से कम से कम 5-6 दिन पहले सिंचाई का पानी बंद कर दिया जाए। इससे लता को तनाव में रखने में मदद मिलेगी और पत्ती का गिरना प्रभावी होगा। कभी-कभी, इथेफॉन छिड़काव के तुरंत

**चित्र 1. रासायनिक (बाएं) और हाथ (दाएं) से पत्तियां हटाना**

बाद, वर्षा की स्थिति में उत्पादकों को, 3–4 दिनों के बाद दोबारा छिड़काव करना आवश्यक हो जाता है। छिड़काव के बाद, लता में इथिलीन बढ़ जाती है और ऑक्जिन कम हो जाता है। इथिलीन के अनुपात में धीमी वृद्धि के परिणामस्वरूप खाद्य सामग्री को पत्ती से गुच्छों तक ले जाया जाता है। कली को सूर्य के प्रकाश के संपर्क में लाने पर प्ररोह से पत्तियों के डंठल तक अलग हो जाते हैं। प्रभावी परिणामों के लिए, अनुप्रयोग के समय से 10–11 दिनों तक पत्ती के पूर्ण पीलेपन से धीमी पत्ती गिरना बेहतर होगा। जबकि फलत छंटाई से 15 दिन पहले हाथ से भी पत्तियां निकाली जा सकती हैं। हाथ से पत्ती हटाने का कार्य केवल फलन क्षेत्र में ही किया जाना चाहिए, अर्थात 4 से 10 पत्तियों तक हटाना लक्षित कली को बाहर निकालने के लिए पर्याप्त होगा।

## कली परीक्षण

केन पर एक कली छोड़कर, विभिन्न आकार और विभिन्न प्रकार के केन (<6 मिमी, 6–8 मिमी, 8–10 मिमी और उप केन और सीधे केन, आदि) एकत्र करें। फिर केन को एक गीले कपड़े में लपेट कर कली परीक्षण के लिए प्रयोगशाला में भेजा जाय। इससे हमें केन पर स्वस्थ और मजबूत कली की वास्तविक स्थिति जानने में मदद मिलती है। कली परीक्षण छटाई में त्रुटियों से बचने में मदद करता है।

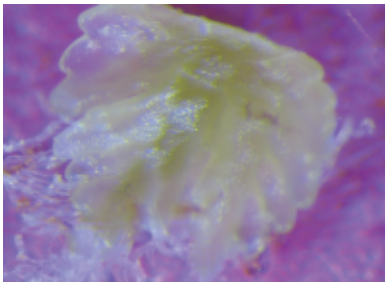

चित्र 2. सूक्ष्मदर्शी के नीचे दिखाया फल

## फलत छंटाई

कली परीक्षण रिपोर्ट के आधार पर और पत्तियों के पूर्णत: गिरने के पश्चात ही फलत छंटाई की जाती है। कली परीक्षण सुविधा की अनुपलब्धता की स्थिति में, अंगूरबाग प्रबंधन का पिछला अनुभव छंटाई के लिए उपयोग किया जाता है। उप केन के मामले में, गाँठ के पास एक कली के ठीक बाद छंटाई करना पर्याप्त है। गाँठ पर उपलब्ध कली को टाइगर बड भी कहा जाता है। यह कली अधिक उपज की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। इस कली में अन्य कलियों की तुलना में अधिक वजन वाला गुच्छा होगा। इसलिए इस कली का स्फुटन महत्वपूर्ण है। सीधे केन की छंटाई के मामले में, छंटाई के लिए कली में आतंरिक लंबाई पर विचार किया जाना चाहिए। यह आमतौर पर एक केन पर 6–7 और 7–8 कलियों की स्थिति में उपलब्ध होता है। हालांकि, 6 मिमी से कम आकार के केन के मामले में, केन पर 4–5 कलियों को छोड़कर छंटाई की जानी चाहिए।

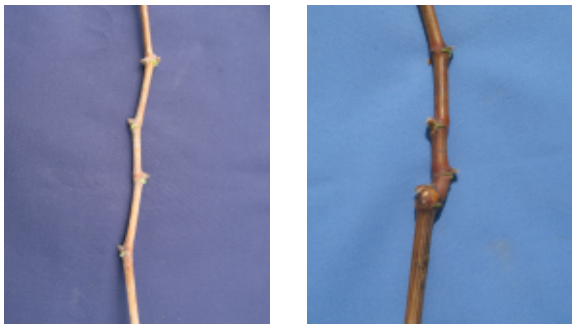

चित्र 3. सीधे केन (बाएं) और उप केन (दाएं)

## हाइड्रोजन साइनामाइड का अनुप्रयोग

हाइड्रोजन साइनामाइड, कली स्फुटित करने वाला रसायन है जिसका उपयोग केवल एकसमान और कलियों के अगेती स्फुटन के लिए किया जाता है। कलियों की स्वेब हेतु उपयोग की जाने वाली सांद्रता मौसम की स्थिति (अवधि के दौरान उपलब्ध तापमान और सापेक्ष आर्द्रता) और केन की मोटाई और छंटाई से पहले पत्ती गिरने पर निर्भर करती है। उपयोग की जाने वाली स्थिति और सांद्रता का विवरण निम्न तालिका में दिया गया है।

**तालिका 1. हाइड्रोजन साइनामाइड सांद्रता के अनुप्रयोग पर तापमान एवं केन व्यास का प्रभाव**

| तापमान | प्रयोग की जाने वाली सांद्रता | केनव्यास (मिमी) | प्रयोग की जाने वाली सांद्रता |
|---|---|---|---|
| 35–40 °सेल्सियस | 30 मिलीलीटर | 6–8 मिमी | 30 मिलीलीटर |
| 30–35 °सेल्सियस | 35 मिलीलीटर | 8–10 मिमी | 35 मिलीलीटर |
| 25–30 °सेल्सियस | 40 मिलीलीटर | 10–12 मिमी | 40 मिलीलीटर |
| 25 °सेल्सियस तक | 50 मिलीलीटर | 12 मिमी | 50 मिलीलीटर या 40 मिलीलीटर दो बार |

## केन को मरोड़ना

एक समान केन उत्पादन हेतु आधारीय छंटाई के समय एक समान कर्षण क्रियाओं का पालन किया जाना चाहिए। हालांकि, वितान प्रबंधन क्रियाओं का पालन करने में कुछ खामियां हो सकती हैं, जिसके परिणामस्वरूप केन के आकार में बदलाव आ जाता है। ऐसी स्थिति में, इन केनों पर असमान कली आकार उपलब्ध होने के कारण सभी केन स्फुटित नहीं होंगी। इसके परिणामस्वरूप अस्थिर और अनियमित कली स्फुटन होगा। इससे बचने के लिए चुनी हुई केन (केवल मोटी केन) पर केन मरोड़ने की क्रिया करनी चाहिए। यह एक समान कली स्फुटन में मदद करेगी।

## कली स्फुटन

फलत छंटाई के 6–7 दिन बाद कली स्फुटन शुरू हो जाता है। कली स्फुटन मौसम की स्थिति, केन व्यास और प्रयुक्त हाइड्रोजन साइनामाइड की सांद्रता पर निर्भर करता है। 32–35 °से तापमान और 80–90% सापेक्षिक आर्द्रता के बीच की स्थिति में, 7वें दिन कली का स्फुटन होगा। कभी-कभी अचानक वर्षा और बादल छाए रहने से वातावरण में सापेक्षिक आर्द्रता बढ़ जाती है। इसके परिणामस्वरूप जिब्रेलिन में वृद्धि होती है और लता में उपलब्ध साइटोकाइनिन स्तर में कमी आती है। लता में जिब्रेलिन की वृद्धि लता के उच्च ओज को दर्शाती है। अंगूर बाग में कली स्फुटन अवस्था के दौरान निरंतर वर्षा होने से जड़ क्षेत्र में संतृप्त सभी रोम छिद्रों को बंद कर देता है। ऐसी स्थिति में फलदार कली पत्ते में परिवर्तित हो जाती है। इसलिए, जड़ क्षेत्र और खेत से रुके हुए पानी को निकालने के लिए देखभाल की जानी चाहिए।

## प्री–ब्लूम चरण

कली के स्फुटित होने के बाद पांचवें पत्ते पर गुच्छा दिखाई देने लगता है। इस अवधि के दौरान तापमान (30–35 °से) और सापेक्ष आर्द्रता (60% से ऊपर) लता की वृद्धि और विकास के लिए आदर्श है। इसलिए, हर तीसरे दिन एक पत्ती के उभरने से वानस्पतिक वृद्धि तेज गति से होगी। पत्तियों की संख्या में वृद्धि होती है जिससे प्ररोह बनता है और इस प्रकार प्ररोह की वृद्धि वितान में परिवर्तित हो जाती है।

### अतिरिक्त प्ररोह और गुच्छों को हटाना

फलत छंटाई के बाद 13–14 वें दिन बाद फूलों का पुष्पक्रम (जिसे गुच्छा भी कहा जाता है) पूरी तरह से दिखाई देने लगता है। इस स्तर पर, अतिरिक्त प्ररोह को हटा दिया जाना चाहिए। इससे खुले वितान के विकास में आसानी होगी। इस वितान के नीचे रोगाणुओं का निर्माण कम होगा।

चित्र 4. अतिरिक्त अंकुरण का चरण

### अवांछित टहनियों को हटाना

10’ × 6’ की दूरी के लिए रखे जाने वाले गुच्छों की संख्या

- मजबूत लता 1 गुच्छा/वर्गफुट (60)
- मध्यम लता ¾ गुच्छा/वर्गफुट (45)
- कमजोर लता ½ गुच्छा/वर्गफुट (30)

**तालिका 2: उद्देश्य के आधार पर गुच्छों और नई शाखायें फूटने की अवधारणा**

| केन की मोटाई | लक्ष्य | | |
|---|---|---|---|
| | स्थानीय बाजार | निर्यात | किशमिश उत्पादन |
| <6 मिमी | एकल गुच्छा और एकल प्ररोह | ऐसे केन हटा देने चाहिए | एकल गुच्छा और एकल प्ररोह |
| 6–8 मिमी | एकल गुच्छा और एकल प्ररोह | एकल गुच्छा और एकल प्ररोह | दो गुच्छा और एकल सहायक प्ररोह |
| 8–10 मिमी | दो गुच्छा और एकल सहायक प्ररोह | एकल गुच्छा और एकल सहायक प्ररोह | तीन गुच्छा और एकल सहायक प्ररोह |
| >10 मिमी | दो गुच्छा और दो सहायक प्ररोह | | |

## प्रत्येक प्ररोह पर पत्तियों की आवश्यकता

चित्र 5. मणि स्थापन तक पत्ती की आवश्यकता

जलवायु परिस्थितियों की एक विस्तृत श्रृंखला के तहत एक फसल अनुपात में वांछनीय पर्ण क्षेत्र में भिन्नता लगभग 10 से 12 सेमी$^2$/ ग्राम मणि वजन हो सकती है। ताजे अंगूर की किस्मों में, पर्ण क्षेत्र लगभग 160–180 सेमी$^2$ होता है। गुच्छा पांचवें पत्ते पर दिखाई देता है और मणि स्थापन तथा तक वृद्धि जारी रहती है जिसके बाद प्ररोह की वृद्धि रुक जाती है। वानस्पतिक वृद्धि चरण के दौरान (प्री–ब्लूम से मणि स्थापन तक), सामान्यतः प्रत्येक टहनी पर 16–17 पत्तियाँ रखी जा सकती हैं। अतः गुच्छों के ऊपर 10–12 पत्ती पर्याप्त मानी जाती हैं। उत्पन्न होने वाली अतिरिक्त पत्तियां सिंक के रूप में कार्य करती हैं और इस प्रकार स्रोत: सिंक संबंध गड़बड़ा जाता है। इसलिए, गुच्छों की उचित वृद्धि को बनाए रखने के लिए, पत्ती की आवश्यकता पर विचार करना जरूरी है।

## फल गुच्छा विकास के लिए स्रोत:सिंक संबंध

प्रकाश संश्लेषण द्वारा उत्पादित कार्बन यौगिकों एवं मृदा से खनिजों के साथ स्रोतों से सिंक में ले जाया जाता है। अंगूर के फलों में शर्करा संचय की भूमिका आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण होती है। अंगूर लता प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया के माध्यम से सक्रिय पत्ती का उपयोग करके खाद्य सामग्री का उत्पादन करती है और लता की वृद्धि, गुच्छों के विकास और तना एवं जड़ों जैसे स्थायी भागों के रखरखाव के लिए सिंक में परिवहन करती हैं।

1. स्रोत: विकासशील गुच्छों को खाद्य सामग्री की आपूर्ति करने वाले लता के हिस्से को स्रोत कहा जाता है।
2. पत्तियां : प्रकाश संश्लेषण के लिए पत्तियां सबसे महत्वपूर्ण अंग हैं, एक प्रक्रिया जिसमें प्रकाश ऊर्जा हरे पौधों (मुख्य रूप से पत्तियों में क्लोरोफिल) द्वारा कब्जा कर लिया जाता है और कार्बन डाइऑक्साइड और पानी से छोटे कार्बन यौगिकों को संश्लेषित करने के लिए उपयोग किया जाता है।
3. केन: वानस्पतिक वृद्धि और फल उत्पादन के बीच संतुलन जरूरी है। सर्वोत्तम गुणवत्ता वाले अंगूरों के लिए उनमें से कुछ केनों को लता से निकालने की क्रिया करना बहुत महत्वपूर्ण है।
4. तना: लता की जमीन के ऊपर वानस्पतिक और फलन संरचना को तना सहायता देता है।
5. भुजाएँ: भुजाएँ मूल रूप से प्राथमिक और द्वितीयक भुजाएँ होती हैं जो तने से व्युत्पन्न होती हैं। लता की द्वितीयक भुजा फलदार केन बनाती है जिसका उपयोग फलत छंटाई के बाद गुच्छों के विकास के लिए किया जाता है।
6. जड़ें: लता को सहारा देने के अलावा, जड़ मिट्टी से पोषक तत्वों और पानी को अवशोषित करती हैं और आगे उपयोग के लिए आवश्यक कार्बोहाइड्रेट और अन्य खाद्य सामग्री को संग्रहित करती हैं। अंगूर की जड़ प्रणाली का अधिकांश हिस्सा शीर्ष मृदा की तीन फुट गहराई के भीतर होता है, हालांकि, जड़ें 5 फीट गहराई तक भी जाती हैं, बशर्ते जड़ सहारे की उचित स्थिति हो। जड़ों का वितरण मिट्टी के प्रकार से प्रभावित होता है।

### तालिका 3. अंगूर में कार्बोहाइड्रेट का संचलन

| क्र.सं. | चरण | सिंक | स्रोत |
|---|---|---|---|
| 1. | कली स्फुटन से पैनिकल उभरने तक | अग्र वृद्धि, अपरिपक्व पत्तियां | केन और भुजा |
| 2. | पैनिकल उभरने से फल स्थापन तक | अपरिपक्व पत्तिया, पुष्पगुच्छ वृद्धि | परिपक्व पत्तियां और केन |
| 3. | फल स्थापन से विरेजन | बढ़ती मणिया, अपरिपक्व पत्तियां | परिपक्व पत्तियां |
| 4. | विरेजन से तुड़ाई तक | प्ररोह | परिपक्व पत्तियां |

**गुच्छा एवं मणियों का विरलन:** अंगूर मणियों में वांछित सुधार प्राप्त करने के लिए, अंगूर उत्पादकों द्वारा मणि विरलन प्रथा का अनुपालन किया जाता है। अंगूर बाजार की आवश्यकता को पूरा करने के लिए मणि एक समान आकार की होनी चाहिए। गुच्छा में मणि विरलन से अन्य मणियों के बीच भोजन के लिए प्रतिस्पर्धा को कम करके मणि का आकार बढ़ता है। मणि विरलन का उपयोग बड़ी मणि, उच्चतम मणि वजन और जल्दी पकने वाले ढीले गुच्छा के लिए किया जाता है। अंगूर की कुछ किस्मों जैसे थॉमसन सीडलैस और इसके क्लोन में हाथ से मणि विरलन एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है क्योंकि यह एक गुच्छा में बेहतर गुणवत्ता प्राप्त हेतु वांछित मणियों को बनाए रखने में मदद करता है।

चित्र 6. मणि विरलन

चित्र 7. प्रकाश संश्लेषण हेतु सक्रिय लता

## प्ररोह ट्रेनिंग

फलत छंटाई के 50 दिन बाद मणि स्थापन पूरा हो जाता है। इस चरण के दौरान, मणि तेजी से बढ़ती है। हालांकि, मणि स्थापन पूरा होने के बाद प्ररोह की वृद्धि रुक जाती है। गुच्छा विकास चरण (8–10 मिमी मणि आकार) के दौरान, पत्तियों के अलावा गुच्छों को प्रकाश संश्लेषण के लिए मणियों पर एक समान धूप की आवश्यकता होती है। इसलिए अधिक भीड़ वाले प्ररोह को एक दूसरे से अलग करने चाहिए तथा पत्तियों को तार पर रख देना चाहिए ताकि प्रत्येक गुच्छा में मणियाँ एवं पत्तियाँ प्रकाश संश्लेषण के लिए एक समान धूप प्राप्त कर सकें। इससे खाद्य सामग्री का उत्पादन करने और विकासशील फल गुच्छे को आपूर्ति करने में मदद मिलेगी।

## गुच्छों का संरक्षण

प्ररोह तथा पत्तियों की वृद्धि मणि स्थापन तक जारी रहती है और उसके बाद मणि विकास चरण शुरू होता है। वितान और मौसम की विभिन्न परिस्थितियों में अंगूर के गुच्छों को सुरक्षा की आवश्यकता होती है। ये शर्तें नीचे दी गई हैं।

चित्र 8. कागज से ढके गुच्छे

## धूप कालिमा

मणि वृद्धि चरण के दौरान कम वितान की स्थिति में, गुच्छा की मणियों में धूप कालिमा लक्षण दिखते हैं। यह स्थिति आम तौर पर 14–16 मिमी मणि वृद्धि चरण के दौरान या मणि नरमाई चरण से पहले भी देखी जाती है। एक बार धूप की तीव्रता से क्षतिग्रस्त मणियाँ खाने के लिए अनुपयुक्त हो जाती हैं। ऐसे गुच्छों में शर्करा वृद्धि बाधित होती है। गुच्छों की सुरक्षा के लिए, आमतौर पर वितान को कवर करने के लिए शेड नेट का उपयोग किया जाता है।

## गुलाबी मणि

अंगूर मणि की वृद्धि 3–4 मिमी अवस्था से विरेजन अवस्था तक जारी रहती है। इस चरण के दौरान, तापमान और सापेक्षिक आर्द्रता

एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। हालांकि, वातावरण में अधिकतम और न्यूनतम तापमान में भिन्नता के परिणामस्वरूप हरे रंग की रंजकता गुलाबी रंजकता में बदल जाती है। सामान्य तौर पर, गुलाबी रंग की अभिव्यक्ति विरेजन अवस्था के समय शुरू होती है। यह चरण आम तौर पर 14–16 मिमी मणि व्यास चरण के साथ मेल खाता है। हरे वर्णक का गुलाबी रंगद्रव्य में रूपांतरण केवल रंगीन किस्मों में देखा जाता है। जब अधिकतम तापमान 35 °सेल्सियस तक चला जाता है और न्यूनतम तापमान 7 °सेल्सियस से नीचे गिर जाता है, तो अधिकतम और न्यूनतम तापमान के बीच अधिक अंतराल पैदा होता है, गुलाबी रंग का विकास अधिक होता है। इससे बचने के लिए अधिकतम और न्यूनतम तापमान के बीच के अंतर को कम करना जरूरी है। यह गुच्छा को कागज से कवर करके प्राप्त किया जा सकता है।

**चित्र 9. निर्यातक्षम अंगूर की गुणवत्ता**

## विरेजन/पानी उतरने से तुड़ाई तक

अंगूर के बाग में मौसम की स्थिति के आधार पर फलत छंटाई के 85 से 95 दिनों के बाद विरेजन चरण शुरू होता है। इस अवस्था को मणि नरमाई स्टेज भी कहा जाता है। सफेद किस्मों में नरम होने के समय मणि को दबाया जा सकता है, जबकि रंगीन किस्मों के मामले में, मणि दबाने के अलावा रंग हरे से गुलाबी रंग में बदलने लगता है। निर्यात गुणवत्ता वाले अंगूरों में, इस स्तर पर मणि का आकार 16 से 17 मिमी के बीच होता है, हालांकि, स्थानीय अंगूरों के मामले में, आकार लगभग 14–16 मिमी हो सकता है। फसल भार सहित अंगूर बाग में प्रबंधन क्रियाएं शर्करा विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। इस चरण के दौरान, रंग की एकरूपता को देखते हुए छाया के नीचे गुच्छों का संरक्षण महत्वपूर्ण है।

❋❋❋

# अंगूर की खेती के लिए मृदा और जल की गुणवत्ता का आंकलन

**डॉ. युक्ति वर्मा**
**वैज्ञानिक (मृदा विज्ञान)**

भारत में अंगूर मुख्य रूप से अर्ध-शुष्क उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में उगाया जाता है, जिसका 90% से अधिक क्षेत्र महाराष्ट्र और कर्नाटक में केंद्रित है। अधिकांश अंगूर लतायें या तो भारी मृदा पर या सीमांत भूमि पर उगाई जाती हैं। हालांकि अंगूर की खेती विभिन्न मृदा की स्थितियों में की जा सकती है, लेकिन 6.5-8.0 पीएच की गहरी और अच्छी जल निकासी वाली मृदा आदर्श होती हैं। इस श्रेणी के ऊपर या नीचे की मृदा का पीएच कुछ पोषक तत्वों की उपलब्धता को प्रतिबंधित करने के लिए जाना जाता है, और इस प्रकार वृद्धि और विकास को रोकता है। एक वर्ष के दौरान बारिश वाले दिन कम ही होते हैं (30-40 दिन), इसके अलावा मौसम ज्यादातर शुष्क रहता है। एक बार रोपने के बाद, लतायें कम से कम 10-15 साल तक रहती हैं। अनुकूल जड़ वातावरण और फलोद्गदिकी की उचित समझ, कुशल जल और पोषक तत्व प्रबंधन की कुंजी है। दो छंटाई और एक फसल होने के कारण, दोनों छंटाई मौसमों के बीच पोषक तत्वों की आवश्यकता भिन्न होती है।

## मृदा की बनावट

यह मृदा की अंतर्निहित संपत्ति है और प्रबंधन क्रियाओं के साथ नहीं बदलती है। हालांकि, अंगूर बाग की स्थापना के लिए 2.5 - 3 फीट गहराई में एक खाई खोलने की आवश्यकता होती है और एफवाईएम मिलाने के बाद खाई को भर दिया जाता है। कभी-कभी ऊपरी मृदा के साथ उप-मृदा को मिश्रित किया जाता है, जिससे बनावट के साथ-साथ मृदा की संरचना भी प्रभावित होती है (चित्र 1)। सामान्य तौर पर, दोमट मृदा जिसमें 30-50% बालू, 30-50% गाद और 7-27% चिकनी मिट्टी, अंगूर की खेती के लिए सबसे उपयुक्त होती है। रेतीली मृदा में वातन अच्छा होता है लेकिन जल और पोषक तत्वों की आपूर्ति करने की क्षमता कम होती है। इसलिए, सूखे के दौरान लतायें प्रभावित होती हैं। चिकनी मृदा में जल धारण और पोषक तत्वों की आपूर्ति करने की अच्छी क्षमता होती है, लेकिन धीमी गति से जल का सेवन और खराब वातन, जड़ की गहराई और जड़ वितरण को सीमित करता है।

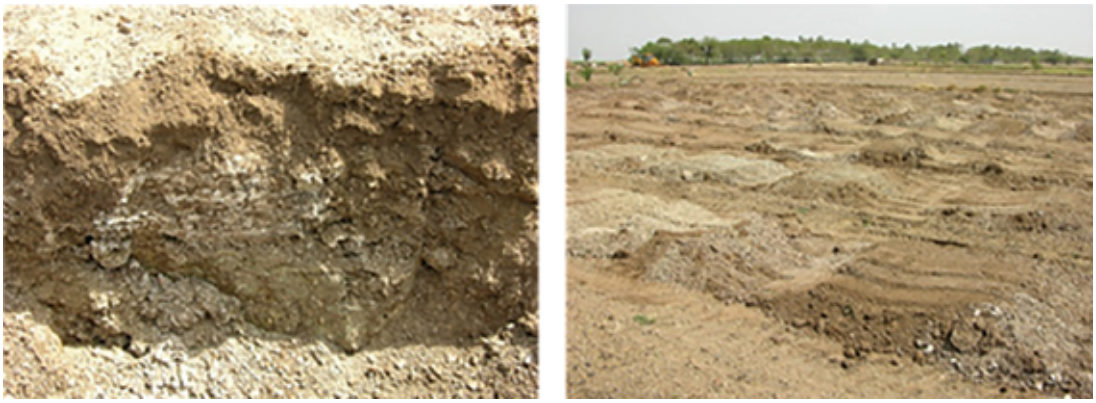

**चित्र 1. मृदा प्रोफ़ाइल और उप-मृदा से ऊपरी मृदा में मृदा के पुनर्वितरण पर खाई का प्रभाव**

## मृदा की गहराई

मृदा की गहराई का जड़ वितरण और इसके प्रवेश के साथ सीधा संबंध है। साथ ही साथ मृदा की बनावट के आधार पर नमी धारण क्षमता के साथ भी सीधा संबंध है। मृदा की गहराई का उत्प्रेरण नमी तनाव पर सीधा प्रभाव पड़ता है, फल कलिका विभेदन की अवस्था के दौरान लताओं के ओज को कम करने की आवश्यकता होती है। मृदा की मध्यम गहराई (2.5 से 3 फीट) लता वृद्धि के लिए उपयुक्त है। अधिक मृदा की गहराई फेंटासी सीडलैस, क्रिमसन सीडलैस आदि जैसी ओजस्वी किस्मों के साथ प्रबंधन में समस्या पैदा करेगी।

## मृदा की संरचना

बालू, गाद रेत और चिकनी मिट्टी के अलग-अलग कणों के संकलन द्वारा यह परिभाषित होती है। एकल कण जब इकट्ठे होते हैं तो बड़े कणों के रूप में दिखाई देते हैं। इन्हें समुच्चय कहते हैं। मृदा की संरचना का जल प्रवेश, उपलब्ध जल क्षमता, जल निकासी, वातन और जड़ प्रवेश पर गहरा प्रभाव पड़ता है। मृदा की संरचना बनावट (बारीक कण महीन छिद्र बनाते हैं), कार्बनिक पदार्थ सामग्री, जैविक गतिविधि (बड़े छिद्र अच्छे होते हैं), रसायन (कैल्शियम 60% विनिमय परिसर में एकत्रीकरण बढ़ जाता है जबकि सोडियम कम हो जाता है), पिछला प्रबंधन (संघनन, जुताई, वानस्पतिक आच्छादन फसल) एवं गीले और शुष्क चक्र,से प्रभावित होती है।

**चित्र 2. विभिन्न मृदाओं में मूल वितरण**

पिकॉक और क्रिस्टेंसन (2000) ने अंगूर की लताओं के लिए मृदा की उपयुक्तता की व्याख्या के लिए दिशानिर्देश विकसित किए जिन्हे तालिका 1 में दिए गया है।

**तालिका 1: अंगूर के लिए मृदा की उपयुक्तता पर प्रयोगशाला की व्याख्या करने के लिए दिशानिर्देश**

| संभावित समस्या और माप की इकाई | कोई समस्या नहीं (10% से कम उपज हानि की उम्मीद) | बढ़ती समस्याएं (10 से 25% उपज हानि अपेक्षित) | गंभीर समस्याएं (25 से 50% उपज हानि अपेक्षित) |
|---|---|---|---|
| पीएच | 5.5-8.5 | - | - |
| लवणता ईसीई (डीएस/मीटर) | 1.5 -2.5 | 2.5 -4 | 4 -7 |
| पारगम्यता ईएसपी (विनिमेय सोडियम प्रतिशत) | 10 के नीचे | 10-15 | 15 के ऊपर |
| विषाक्तता | | | |
| क्लोराइड (एमईक्यू/लीटर) | 10 के नीचे | 10 -30 | 30 के ऊपर |
| बोरॉन (मिग्रा/लीटर या पीपीएम) | 1 के नीचे | 1 -3 | 3 के ऊपर |
| सोडियम(एमईक्यू/लीटर) | -- | 30 (690 पीपीएम) के ऊपर | -- |

Peacock and Christensen (2000) - Interpretation of soil and water analysis (http://iv.ucdavis.edu/files/24409.pdf)

1(डीएस/मीटर) से कम विद्युत चालकता, 1.25 एमईक्यू/ली से कम अवशिष्ट सोडियम कार्बोनेट, 8 से कम सोडियम अवशोषण, 4 एमईक्यू/ली से कम क्लोराइड और 1 पीपीएम से कम बोरॉन वाला सिंचाई जल अंगूर के बागों की सिंचाई हेतु सुरक्षित माना जाता है। हालांकि, सिंचाई के खराब गुणवत्ता वाले जल की उपलब्धता इष्टतम उपज प्राप्त करने के लिए अंगूर के बागों को कुशलतापूर्वक प्रबंधित करने के लिए अंगूर उत्पादकों को काफी चुनौती देता है।

आमतौर पर अंगूर बाग की उत्पादकता, लताओं पर दृश्य लक्षणों पर ध्यान देने से पहले काफी कम हो जाती है। लवणता से निपटने के लिए, डॉगरिज मूलवृंत पर अंगूर की लतायें उगाई जाती हैं। हालाँकि, राष्ट्रीय अंगूर अनुसंधान केंद्र में किए गए अध्ययन से पता चला है कि यह सोडियम को पृथक करने की क्षमता नहीं रखता है। लवणीय सिंचाई के तहत, डॉगरिज मूलवृंत पर कलमित की गई लताओं ने अधिक मात्रा में सोडियम जमा करने की प्रवृत्ति दिखाई है, जिससे पोटाश की कमी, फलन की क्षमता कम हो जाती है और लता के चिरस्थायी भाग मर जाते हैं। मूलवृंत 110आर और बी-2/56 (110आर का एक क्लोन) में सोडियम को बाहर करने का गुण होता है और ऐसी परिस्थितियों में डॉगरिज मूलवृंत की तुलना में अच्छा प्रदर्शन कर सकते हैं। मृदा परीक्षण प्रतिवेदन के आधार पर हरी खाद, खाद या एफवाईएम के साथ जिप्सम एवं पोटाश के सल्फेट की भारी डोज़ जैसे मृदा संशोधकों का उपयोग इस समस्या को कम करने में मदद करता है।

❄❄❄

# सिंचाई समयबद्धन और नमी संरक्षण तकनीकियां

**डॉ. अजय कुमार उपाध्याय**
**प्रधान वैज्ञानिक (मृदा विज्ञान)**

शुष्क और अर्ध-शुष्क क्षेत्रों में, जो वर्ष के अधिकांश समय के दौरान मुख्यतः शुष्क रहते हैं, जल के साथ भूमि भी उत्पादन के लिए सबसे सीमित संसाधन बन जाती है। ऐसी परिस्थितियों में, भूमि उपयोग की तुलना में प्रति इकाई जल उपयोग से उत्पादकता बढ़ाना एक महत्वपूर्ण रणनीति बन जाती है। जल की कमी और पोषक तत्वों की कम उपलब्धता अक्सर कृषि-पारिस्थितिकी तंत्र में फसल की वृद्धि और उत्पादन क्षमता को सीमित कर देती है क्योंकि अधिकांश फसलें विभिन्न महत्वपूर्ण चरणों के दौरान जल और पोषक तत्वों की कमी के प्रति संवेदनशील होती हैं। साथ ही जल का अधिक उपयोग उत्पादन की लागत को बढ़ाता है और साथ ही पर्यावरण प्रदूषण का कारण भी बन सकता है। अंगूर भी कोई अपवाद नहीं है। अंगूर के गुणवत्तापूर्ण उत्पादन के लिए वितान, पोषक तत्व, जल, कीट और रोग प्रबंधन और उनका समय पर संचालन महत्वपूर्ण है। आगतों के बीच जल उच्च, उत्पादन प्राप्त करने की कुंजी है और फसल की आनुवंशिक क्षमता को साकार करने में 60-70% योगदान करने के लिए जाना जाता है। जलवायु परिवर्तन एक वास्तविकता बन रहा है। भले ही किसी दिए गए क्षेत्र के लिए कुल वर्षा समान रहती है, फिर भी, बरसात के दिनों की संख्या कम हो रही है और कम अवधि में उच्च तीव्रता वाली बारिश अधिक बार हो रही है। यह परिस्थितियाँ फसल की आवश्यकता को पूरा करने हेतु जल के उचित उपयोग की मांग करती हैं।

**एक उत्पादक को क्या समझना चाहिए**

क. आधारीय छंटाई के साथ-साथ फलत छंटाई मौसम में सिंचाई जल की कुल आवश्यकता है क्या?

ख. अधिकांश जड़ें मृदा के शीर्ष दो फीट में स्थित होती हैं क्योंकि यह फसल ड्रिप सिंचित होती है। मृदा के प्रकार और उसकी गहराई का जड़ प्रसार तथा जल और पोषक तत्वों के उपयोग पर सीधा प्रभाव डालता है।

ग. क्या मैं सिंचाई के लिए उपलब्ध जल की गुणवत्ता को समझता हूँ?

घ. मेरी सिंचाई प्रणाली की स्थिति और दक्षता क्या है?

ङ. जल बचाने की कौन-सी तकनीकें हैं जिन्हें छंटाई के मौसम में अपनाना चाहिए?

## लता वृद्धि अवस्था और जल प्रबंधन के लिए उनका महत्व

जल की आवश्यकता, फसल की वृद्धि के विभिन्न चरणों के साथ बदलती रहती है। लता के कुछ चरणों के लिए नमी तनाव लाभदायक होता है और कुछ चरणों के लिए यह हानिकारक।

आधारीय छंटाई से लेकर कली विभेदन अवस्था (आमतौर पर मध्य अप्रैल से मई) तक की अवधि वाले चरण के दौरान जल की आवश्यकता अधिकतम होती है। वांछित केन मोटाई (8-10 मिमी) और पर्याप्त वितान प्राप्त करने हेतु लता को तनाव नहीं देना चाहिए। कली विभेदन अवस्था पर उचित कली विभेदन प्राप्त करने हेतु सिंचाई में कमी की जानी चाहिए। प्ररोह की परिपक्वता और फल-कलिका विकास चरण वर्षा मौसम के समय आते हैं लेकिन फिर भी लताओं को सिंचाई करने की आवश्यकता होती है क्योंकि वर्षा अत्यधिक अनिश्चित होती है और वितरण समान नहीं होता है। साल में मुश्किल से 40-50 बरसात के दिन होते हैं। अधिकांश मृदायें भारी बनावट के साथ कम अंतःस्पदंन दर की होती हैं और वर्षा का अधिकांश जल अपवाह के रूप में नष्ट हो जाता है। वर्षा के बाद जब तक मृदा क्षेत्र क्षमता (वाप्सा) पर न आ जाए, तब तक सिंचाई रोक देनी चाहिए।

आधारीय छंटाई के दौरान प्ररोह वृद्धि से लेकर वितान परिपक्वता अवस्था तक जल तनाव का प्रभाव लता की फलदायिता को कम कर सकता है। वर्ष 2013 के दौरान भारी मृदा में भाकृअनुप-राअंअनुकें पर किए गए अध्ययनों से स्पष्ट रूप से पता चला है कि

अनुशंसित समय के 50% पर सिंचाई करने के बाद फल कलिका विभेदन चरण के दौरान कोई सिंचाई नहीं करने से थॉमसन सीडलैस लताओं की उपज अनुशंसित सूची से 10% कम हो जाती है। इसके बाद, अगले वर्ष, यह देखा गया कि फल कलिका विभेदन अवस्था के दौरान 100 दिनों तक फसल वृद्धि के दौरान कोई सिंचाई नहीं करने और अनुशंसित सूची के 50% पर सिंचाई करने से फलत 25% कम हो गई।

फलत छंटाई के दौरान (सामान्य रूप से अक्टूबर के दौरान) मजबूत प्ररोह वृद्धि में बढ़ोत्तरी एवं पर्याप्त पर्ण क्षेत्र हेतु पर्याप्त सिंचाई मिलनी चाहिए। प्री-ब्लूम चरण के दौरान जल की कमी से असमान और कम स्फुटन होता है जिससे गुच्छों की संख्या पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। मणि स्थापन से खंडित होने की अवस्था के दौरान हल्का तनाव मणि स्थापन को कम करने में मदद करता है अन्यथा इनका विरलन करना पड़ता है। मणि वृद्धि से विरेजन अवधि तक का चरण सबसे महत्वपूर्ण होता है और इस स्तर पर जल तनाव मणि आकार और उपज को कम कर देता है। विरेजन से तुड़ाई की अवधि के दौरान मणि के तिरकने तथा तुड़ाई में देरी से बचने के लिए लताओं की अधिक सिंचाई नहीं की जानी चाहिए। मृदा में जमा जल के आधार पर मणि में शर्करा की मात्रा बढ़ाने के लिए तुड़ाई से एक सप्ताह पहले सिंचाई बंद कर दी जा सकती है। इस चरण पर नमी तनाव के परिणामस्वरूप मणि गिरती हैं। पकने के दौरान जल के गंभीर तनाव के कारण शर्करा संचयन कम होता है, जो गुणवत्तावाले किशमिश उत्पादन के लिए महत्वपूर्ण है। भाकृअनुप-राअंअनुकें में वर्ष 2013 के दौरान किए गये प्रयोगों में यह देखा गया कि भारी मृदा में तुड़ाई के लिए मणि वृद्धि चरण में अनुशंसित सिंचाई अनुसूची का 50% सिंचाई करने से अनुशंसित सिंचाई की तुलना में उपज में 8.90% की कमी आई। हल्की मृदा संरचना में उपज हानि अधिक हो सकती है, जैसी कि इन मृदाओं में भारी मृदा की तुलना में जल धारण क्षमता कम होती है।

## अंगूर उत्पादन में जल की गुणवत्ता से सम्बन्धित कारक

1. लवणता: सिंचाई के जल से मृदा में लवण मिल जाते हैं और मृदा में संचयित हो जाते हैं।

2. मृदा की पारगम्यता: खारे जल या अपेक्षाकृत उच्च सोडियम जल, मृदा की पारगम्यता को कम कर सकते हैं।

3. विषाक्तता: पत्तियों में क्लोराइड और बोरॉन संचयित हो जाते हैं। अत्यधिक संचय से पत्ती जल जाती हैं और उपज कम हो जाती है। यदि सापेक्षिक आर्द्रता 30-40 प्रतिशत से अधिक रहती है तो पर्णअवशोषण से नुकसान बहुत कम होता है।

4. जल पीएच के 8.4 से ऊपर या 6.5 से नीचे होने से आमतौर पर विषाक्तता, पोषण संबंधी असंतुलन या मृदा की पारगम्यता से संबंधित समस्याएं जुड़ी होती हैं। नाइट्रोजन जैसे पोषक तत्व अत्यधिक ओज़ और कम उपज का कारण बन सकते हैं। जल में उच्च बाइकार्बोनेट के परिणामस्वरूप पत्तियों या मणियों पर चूने का एक आपत्तिजनक सफेद जमाव हो सकता है। सिंचाई के जल में उच्च बाइकार्बोनेट से संबंधित समस्याओं को नियंत्रित दर पर सल्फ्यूरिक अम्ल मिलाकर जल के पीएच को 6.50 तक कम किया जा सकता है।

औसत अंगूर बाग प्रबंधन के तहत, अंगूर के लिए 1 डीएस/एम से कम ईसी के जल को उत्कृष्ट माना जाता है। ईसीडब्ल्यू 1 डीएस/एम से अधिक जल की लवणता भी संतोषजनक हो सकती है यदि उपयुक्त मृदा प्रबंधन कियाओं को अपनाया जाता है।

एक कहावत है 'कठोर जल से नर्म मृदा और मृदु जल से कठोर मृदा पैदा होती है'। बहुत कम खारे जल के परिणामस्वरूप जल भेदन खराब होता है। अपेक्षाकृत उच्च सोडियम, जल के अंतःस्पदंन को कम करता है और कैल्शियम इसमें सुधार करता है। रेतीली दोमट की तुलना में चिकनी मृदा में मृदा की पारगम्यता पर लवणता का प्रभाव अपेक्षाकृत कम होता है। कम पारगम्यता वाली मृदा को अधिक बार या लंबी अवधि के लिए सिंचित किया जाना चाहिए।

## अंगूर में जल उपयोग दक्षता में सुधार के लिए रणनीतियाँ

### 1. आवश्यकता आधारित सिंचाई प्रदान करें

अंगूर की खेती के लिए जगह चुनने से पहले सिंचाई के जल की पर्याप्तता भी सुनिश्चित की जानी चाहिए। अंगूर की जल आवश्यकता वायुमंडलीय शुष्कता और लताओं की वृदधि अवस्था के साथ बदलती रहती है। जल का निर्धारण पैन वाष्पीकरण रीडिंग पर आधारित

होना चाहिए, जो पौधे से खोए हुए जल का सूचकांक है। इसके अलावा, जल की मात्रा एक निश्चित चरण में फसल की आवश्यकता के अनुरूप होनी चाहिए। यह सिंचाई अनुसूची कहलाती है।

मूलवृन्तों पर कलमित किए गए अंगूरों में, गहरी मृदा परतों से नमी के दोहन के लिए बेहतर जड़ प्रणाली होती है और इसलिए स्वमूलित लताओं की तुलना में सिंचाई जल की कम आवश्यकता होती है। इस संस्थान में उत्पन्न प्रायोगिक आंकड़ों के आधार पर, लवणीय सिंचाई के तहत मूलवृंत पर अंगूर की कलमित लताओं के लिए सबसे अच्छी अनुसूची तालिका 1 में दी गयी है। यदि सिंचाई के जल की गुणवत्ता अच्छी है, तो लगभग 20% कम सिंचाई जल की आवश्यकता होगी। पैन वाष्पीकरण रीडिंग के आधार पर, अंगूर की जल आवश्यकता को फसल विकास के चरण के अनुसार निकाला जा सकता है।

### तालिका 1. पैन वाष्पीकरण के आधार पर अंगूर के लिए अनुशंसित सिंचाई अनुसूची

| विकास की अवस्था | अपेक्षित अवधि (छँटाई पश्चात दिन) | जल की आवश्यकता (लीटर/ दिन/ हेक्टेयर प्रति मिमी वाष्पीकरण) | संचालन का महीना | विभिन्न अंगूर उगाने वाले क्षेत्रों में अनुमानित मासिक पैन वाष्पीकरण (मिमी) | अनुमानित जल (लीटर/ हेक्टेयर/दिन) |
|---|---|---|---|---|---|
| **आधारीय छंटाई** | | | | | |
| प्ररोह विकास | 1–40 | 4200 | अप्रैल–मई | 8–12 | 33,600–50,400 |
| फल कली विभेदन | 41–60 | 1400 | मई–जून | 8–10 | 11,200–14,000 |
| केन की परिपक्वता और फल कलियों का विकास | 61–120 | 1400 | जून से अगस्त | 0–6 | 0–8,400 |
| 121 दिन – फलत छंटाई* | 121– | 1400 | अगस्त–फलों की छंटाई | 0–6 | 0–8,400 |
| **फलत छंटाई** | | | | | |
| प्ररोह विकास | 1–40 | 4200 | अक्टूबर–नवंबर | 6–8 | 25,200–33,600 |
| खिलने से टूटने तक | 41–55 | 1400 | नवंबर–दिसंबर | 4–6 | 5,600–8,400 |
| मणि वृद्धि और विकास | 56–105 | 4200 | दिसम्बर–जनवरी | 3–6 | 12,600–25,200 |
| पक्वन से तुड़ाई तक | 106–तुड़ाई | 4200 | जनवरी–मार्च | 8–10 | 33,600–42,000 |
| विश्राम अवधि | तुड़ाई से आधारीय छंटाई (20 दिवस) | – | मार्च–अप्रैल | 8–10 | – |

* उपरोक्त वृद्धि अवस्थाएं आमतौर पर बरसात के मौसम के साथ मेल खाती हैं और भारी मिट्टी में सिंचाई की आवश्यकता नहीं हो सकती है।

** खारे पानी (1.7–1.8 डीएस/एम से लेकर ईसी) का उपयोग करते हुए भारी और चूनेदार मृदा में किए गए प्रयोग के आधार पर अनुसूची पर काम किया गया है और इसलिए इसे अन्य प्रकार की मृदा के लिए चरणवार सिंचाई के लिए दिशानिर्देश के रूप में लिया जा सकता है। जो यहाँ निर्दिष्ट है।

**ध्यान दें:**
- जल गुणवत्ता के आधार पर, आवश्यक जल की मात्रा बदल सकती है। बारिश के बाद मृदा को क्षेत्र क्षमता तक पहुंचने तक सिंचाई नहीं करनी चाहिए।
- यदि कम लवणता वाले जल (1.0 डीएस/एम से कम ईसी) का उपयोग किया जाता है तो ऊपर दी गई अनुसूची की तुलना में सिंचाई की आवश्यकता 20% कम होगी।

## 2. जल बचत तकनीक

### क. एंटीट्रांसपाइरेंट्स और पलवार का उपयोग

पलवार और एंटीट्रांसपाइरेंट्स मृदा के वाष्पीकरण के साथ-साथ पत्ती से वाष्पोत्सर्जन से जल के नुकसान को कम करते हैं। कई प्रकार की सामग्री, जैविक और अकार्बनिक, पलवार के रूप में उपयोग की जा सकती है (चित्र 1)। जैविक पलवार की ऊंचाई कम से कम 2 इंच होनी चाहिए और लता के दोनों किनारों पर जमीन से कम से कम 1.5 फीट की ऊंचाई पर होनी चाहिए। प्लास्टिक पलवार का भी उपयोग किया जा सकता है, हालांकि, उड़ने से रोकने के लिए उन्हें जमीन पर ठीक से लगाया जाना चाहिए। प्लास्टिक की मोटाई कम से कम 25 माइक्रोन होनी चाहिए। प्लास्टिक और जैविक पलवार दोनों ही अंगूर के बागों में खरपतवार के प्रकोप को कम करते हैं।

एंटीस्ट्रेस एक जैव-विघटीय ऐक्रेलिक पॉलीमर है जिसको पौधों पर छिड़काव करने पर वाष्पीकरण-वाष्पोत्सर्जन के माध्यम से होने वाली जल हानि को कम करता है। अच्छी कर्षण क्रियाओं आदि के आधार पर इसके अनुप्रयोग के लिए एंटीस्ट्रेस या किसी एंटीट्रांसपाइरेन्ट के उपयोग की जाँच की जानी चाहिए। आधारीय छंटाई के दौरान थॉमसन सीडलैस लताओं पर तीन छिड़काव यानी 4-6 मिली एंटीस्ट्रेस/लीटर 30, 60 और 90 दिन छंटाई के बाद और दो छिड़काव 4 मिली एंटीस्ट्रेस/लीटर 25 और 55 दिन फलत छंटाई के बाद बगास पलवार के संयोजन से 25% सिंचाई जल को बचाया जा सकता है।

**चित्र 1. अंगूर के बागों में पलवार**

### ख. सिंचाई की उपसतह विधि

सिंचाई जल की कम उपलब्धता की वर्तमान समस्या, किसानों को कम जल की उपलब्धता के साथ अधिक उपज बनाए रखने के कठिन प्रश्न के साथ प्रस्तुत करती है। समाधानों में से एक उप-सतह सिंचाई हो सकता है, जिसमें सिंचाई जल को सीधे जड़ क्षेत्र में पहुँचाया जाता है। इस विधि में पाइप के सभी किनारों पर छेद के साथ मृदा से नौ इंच नीचे रखे एक फीट लंबे पीवीसी पाइप (2.5

1 फीट पीवीसी पाइप 9 इंच गहराई पर रखा गया है

इंच व्यास) का उपयोग शामिल है (चित्र 2)। मौजूदा ड्रिप लाइनों से जुड़ी माइक्रो ट्यूब को सीधे पाइप में रखा जाता है। यह सतह से वाष्पीकरण के नुकसान को कम करता है। इसके अलावा, जड़ें लवणता के प्रभाव से बच जाती हैं क्योंकि अधिक जड़ें जल अनुप्रयोग स्रोत के पास यानी उपसतह पर वितरित हो जाती हैं। इस विधि से 25 प्रतिशत सिंचाई जल की बचत की जा सकती है।

### ग. आंशिक मूलक्षेत्र शुष्कन

इस तकनीक में, जड़ प्रणाली का आधा भाग (एक तरफ का) हमेशा शुष्क या शुष्क अवस्था में रहेगा जबकि दूसरा आधा (दूसरी तरफ का) सिंचित होगा। जड़ प्रणाली के गीले और सूखे पक्षों को बारी-बारी से मृदा के प्रकार के आधार पर 7 से 15 दिनों के चक्र पर लगाया जाता है। जो जड़ें सूख रही हैं, वहाँ एब्सिसिक एसिड का संश्लेषण होता है और इसे पत्तियों तक पहुँचाया जाता है। इससे स्टोमेटा के एपर्चर के कम होने की प्रतिक्रिया होती है और जल के वाष्पोत्सर्जन को कम किया जाता है। इससे जल की मात्रा कम होने पर भी लाभदायक उपज की प्राप्ति होती है।

### घ. अन्य कर्षण क्रियाओं का पालन किया जाना

- कोकोपीट का उपयोग: हल्की मृदा में जल धारण क्षमता कम होती है और कोकोपीट के उपयोग से इसमें सुधार होता है। कोकोपीट में अपने वजन के अनुपात में 6-8 गुना जल पकड़ के रखने की क्षमता होती है और यह पोषक तत्वों को संग्रह कर, पौधों को लंबे समय तक प्रदान भी कर सकता है। यह मृदा के वायु संचारण में भी सुधार करता है जो स्वस्थ जड़ विकास के लिए महत्वपूर्ण है। नमी बनाए रखने के लिए कोकोपीट को ड्रिपर के ठीक नीचे की मृदा में कम से कम 3-4 इंच गहराई में रखना चाहिए। खाद के उपयोग के आधार पर प्रति लता 1.5-2 किलो (सूखे वजन) कोकोपीट की आवश्यकता होती है।

- पोषक तत्वों का उपयोग: कई अंगूर के बागों में मृदा की स्थिति खराब होती है और इसलिए मृदा में जल संचयन और पोषक तत्वों को बनाए रखने की क्षमता सीमित होती है। गोबर की खाद/हरी खाद/कम्पोस्ट/वर्मी कम्पोस्ट के अनुप्रयोग से मृदा के भौतिक-रासायनिक और जैविक गुणों में सुधार होगा। आमतौर पर पौधों में पोषक तत्वों के लिए मृदा की नमी महत्वपूर्ण होती है क्योंकि पोषक तत्व जल में घुल जाते हैं और फिर पौधे द्वारा ले लिए जाते हैं। नमी का तनाव लताओं में पोषक तत्वों के अवशोषण को प्रभावित करता है, विशेष रूप से पोटेशियम, कैल्शियम, मैग्नीशियम और सूक्ष्म पोषक तत्व। सीमित सिंचाई जल की उपलब्धता के तहत सीधे मृदा में उर्वरकों की भारी खुराक की सिफारिश नहीं की जाती है क्योंकि अप्रयुक्त उर्वरक की उपस्थिति से मृदा की लवणता बढ़ जाएगी। इससे लताओं को नमी की उपलब्धता और कम हो जाती है। इसलिए लताओं को पोषक तत्वों की आपूर्ति फर्टिगेसन और बार-बार पर्ण अनुप्रयोग अनुशंसित तरीका है। परिपक्व पत्तियों पर उर्वरक का छिड़काव 0.50% से अधिक नहीं होना चाहिए। नई पत्तियों पर कम और बार-बार उर्वरक का छिड़काव अधिक लाभप्रद होता है।

- यदि सिंचाई का जल खारा है, तो लवणता को कम करने का एकमात्र तरीका लवणों के निक्षालन के लिए अधिक जल लगाना है। जब सिंचाई के लिए जल की उपलब्धता कम हो तो जड़ क्षेत्र के नीचे के लवणों को निकालने के लिए छंटाई से ठीक पहले जड़ क्षेत्र को संतृप्त या जल से भर दें, ताकि स्फुटन और प्रारंभिक वृद्धि प्रभावित न हो। पत्तियों की उम्र के साथ, बाद की अवस्था में विकसित लवणता का प्रभाव कम होगा। इसके अलावा मेंड़ को संतृप्त करने के तुरंत बाद मृदा को नम रखने के लिए पलवार का प्रयोग करें।

- समय पर तुड़ाई - अंगूर की तुड़ाई जब वे तैयार होते हैं, तभी करनी चाहिए क्योंकि फसल की कटाई के बाद जल का उपयोग कम हो जाता है।

❋❋❋

# चूनेदार और सोडिक मृदा में पोषक तत्व प्रबंधन

**डॉ. अजय कुमार उपाध्याय**
**प्रधान वैज्ञानिक (मृदा विज्ञान)**

भारत में, अंगूर मुख्य रूप से अर्ध-शुष्क उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में उगाया जाता है। हालांकि, अंगूर की खेती मृदा की विभिन्न स्थितियों में की जा सकती है, लेकिन 6.5-8.0 पीएच की सीमा वाली गहरी और अच्छी जल निकासी वाली मृदा आदर्श होती है। वर्ष के ज्यादातर दिनों में मौसम शुष्क रहता है, और बारिश वाले दिन (30-40 दिन) कम ही होते हैं। दोहरी छँटाई और एकल फसल होने के कारण, छँटाई के दोनों मौसमों के दौरान पोषक तत्वों की आवश्यकता भिन्न होती है। यह क्षेत्र अजैविक तनाव अर्थात् नमी और लवणता तनाव से ग्रस्त हैं।

पौधों में पोषक तत्वों की आवश्यकता मुख्यत: कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, वसा, इलेक्ट्रोलाइट्स के संश्लेषण के लिए होती है। प्रोटीन कार्बन, हाइड्रोजन, ऑक्सीजन, नाइट्रोजन, फास्फोरस और सल्फर से बना है; कार्बोहाइड्रेट कार्बन, हाइड्रोजन और ऑक्सीजन से बने होते हैं और वसा भी कार्बन, हाइड्रोजन और ऑक्सीजन से बने होते हैं। इनके अलावा, क्लोरीन, पोटेशियम, कैल्शियम, मैग्नीशियम, सोडियम और कुछ अन्य तत्व इलेक्ट्रोलाइटिक संतुलन बनाए रखने के लिए आवश्यक हैं। पौधे में लोहा, मैग्नीशियम, मैंगनीज, तांबा, बोरॉन, जस्ता और मोलिब्डेनम वास्तव में एंजाइमी सक्रियता को बढ़ाने के लिए एंजाइम प्रणाली के एक भाग के रूप में आवश्यक हैं।

उपरोक्त सभी तत्वों को आवश्यक पादप पोषक तत्व कहा जाता है और ये कार्बन, हाइड्रोजन, ऑक्सीजन, नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटेशियम, कैल्शियम, मैग्नीशियम, सल्फर, जस्ता, तांबा, लोहा, मैंगनीज, बोरॉन, मोलिब्डेनम, निकल और क्लोरीन हैं।

## अंगूर की उर्वरक आवश्यकताओं का निर्धारण

मृदा के विश्लेषण से पता चल सकता है कि लता के लिए संभावित रूप से मृदा में क्या उपलब्ध है, लेकिन यह मृदा-पौधे की परस्पर क्रिया का सही संकेत नहीं देता है। हालाँकि, जब आवश्यकता पड़ती है, तो उर्वरक दृष्टिकोण को समझने में मृदा का परीक्षण काफी सहायक होता है। लता की जरूरतों को निर्धारित करने के लिए डंठल (पर्णवृंत) का परीक्षण बेहतर तरीका है। आवश्यक उर्वरक डोज की मात्रा विभिन्न प्रकार की मृदा और किस्मों के लिए अलग-अलग होगी, भले ही डंठल परीक्षण मूल्य समान हों।

## फर्टिगेशन क्या है?

सिंचाई जल के माध्यम से पोषक तत्वों के अनुप्रयोग को आमतौर पर फर्टिगेशन कहा जाता है। फर्टिगेशन से पोषक तत्वों को समय से, वृद्धि चरण के अनुसार, सही स्थान और अनुपात में दिया जा सकता है। अंगूर के उत्पादन को बनाए रखने और मृदा और पर्यावरण से संबंधित खतरों को कम करने के लिए फर्टिगेशन समय की आवश्यकता बन गई है। अनुशंसित फर्टिगेशन शेड्यूल तालिका 1 में दिया गया है।

## माध्यमिक और सूक्ष्म पोषक तत्व

- सल्फर की कमी शायद ही कभी अंगूर के बागों में देखी जाती है क्योंकि काफी मात्रा में अप्रत्यक्ष रूप से सल्फेट ऑफ पोटाश जैसे उर्वरकों और सल्फर को कवकनाशी के रूप में दिया जाता है।

- चूनेदार मृदा में कैल्शियम की कमी सामान्यत: नहीं होती है और जब तक मृदा में उच्च पीएच या सोडियम न हो तब तक विशिष्ट उर्वरक अनुप्रयोग की आवश्यकता नहीं होती है। कुछ जलवायु परिस्थितियों (ठंड या बरसात) या मृदा में पोषक तत्वों के असंतुलन से गुच्छों में कैल्शियम की कमी हो सकती है, जिसे पुष्पनपूर्व अवस्था में पत्तों पर छिड़काव द्वारा या मणि स्थापन के बाद 2 से 3 छिड़काव (0.3 से 0.5% कैल्शियम क्लोराइड या कैल्शियम नाइट्रेट) से ठीक किया जा सकता है।

**तालिका 1: लवणीय सिंचाई के तहत अंगूर के लिए फर्टिगेशन शेड्यूल (थॉमसन सीडलैस 2 से 5 वर्ष की आयु) उदाहरण (266 किग्रा एन, 177.50 किग्रा पी$_2$ओ$_5$ और 266 किग्रा के$_2$ओ /हेक्टेयर/वर्ष)**

| वृद्धि अवस्था | अपेक्षित अवधि (छंटाई के पश्चात दिन) | संचालन का महीना | पोषक तत्व अनुप्रयोग (किलो/हेक्टेयर) | | |
|---|---|---|---|---|---|
| | | | N | $P_2O_5$ | $K_2O$ |
| **आधारीय छंटाई** | | | | | |
| प्ररोह वृद्धि | 1–30 | अप्रैल–मई | 60 | – | – |
| प्ररोह वृद्धि | 31–40 | अप्रैल–मई | 20 | 35.5 | – |
| फल कलिका विभेदन | 41–60 | मई–जून | – | 71 | – |
| केन की परिपक्वता और फल कलियों का विकास | 61–120 | जून–अगस्त | – | – | 80 |
| 121 दिन – फलत छंटाई* | 121 – | अगस्त–फलों की छंटाई | – | – | – |
| **फलत छंटाई** | | | | | |
| प्ररोह वृद्धि | 1–40 | अक्टूबर–नवंबर | 80 | – | – |
| फूल खिलने से खंडन तक | 41–55 | नवंबर–दिसंबर | – | 26.5 | – |
| मणि वृद्धि एवं विकास | 56–70 | दिसंबर–जनवरी | – | 26.5 | – |
| मणि वृद्धि एवं विकास | 71–105 | दिसंबर–जनवरी | 80 | – | 80 |
| पक्वन से तुड़ाई तक | 106–तुड़ाई | जनवरी–मार्च | – | – | 80 |
| विश्राम अवधि | तुड़ाई से आधारीय छंटाई (20 दिन) | मार्च–अप्रैल | 26 | 18 | 26 |

**नोट:** फर्टिगेशन में हर वर्ष दी जाने वाली पोषक तत्वों की खुराक को लताओं के डंठल के पोषक तत्व की स्थिति के अनुसार संशोधित किया जाना चाहिए, क्योंकि समय के साथ मृदा में पोषक तत्वों की मात्रा बढ़ने की संभावना होती है।

- हर छँटाई के मौसम में मैग्नीशियम सल्फेट 100 किग्रा प्रति हेक्टेयर को चार भागों में डालें। हालाँकि, अनुप्रयोग केवल तभी किया जाना चाहिए जब डंठल परीक्षण मानक के आधार पर आवश्यकता स्थापित की गई हो क्योंकि भूजल सिंचाई स्रोत कई बागों की मृदा में पर्याप्त मात्रा में मैग्नीशियम का योगदान देता है।
- सूक्ष्म पोषक तत्वों में जिंक और आयरन सबसे कम पाए जाने वाले पोषक तत्व हैं।
- मृदा में कैल्शियम कार्बोनेट के प्रकार और सामग्री में बड़े अंतर के कारण, कोई विशेष सिफारिश उपलब्ध नहीं है। हालांकि, स्थापित कमी की स्थिति के तहत, प्रति मौसम औसतन 50 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर जिंक सल्फेट, फेरस सल्फेट और मैंगनीज सल्फेट को दिया जाना चाहिए।
- सूक्ष्म पोषक तत्वों को अधिमानतः पर्ण अनुप्रयोग के रूप में और डंठल परीक्षण के आधार पर दिया जाना चाहिए। छंटाई के मौसम में, जस्ता, मैंगनीज और लोहा के 0.2–0.4% सल्फेट रूपों के औसतन 3–4 छिड़काव फसल की जरूरतों को पूरा करते हैं।
- डंठल विश्लेषण रिपोर्ट के आधार पर बोरॉन को आवश्यकता अनुसार डाला जाना चाहिए।

## फर्टिगेशन के लिए उपयोग किए जाने वाले उर्वरक और उनके ग्रेड

i) सभी पोषक तत्व मृदा में 6.0–6.5 के पीएच सीमा में इष्टतम मात्रा में उपलब्ध होते हैं। आमतौर पर उपयोग किए जाने वाले तरल उर्वरकों का पीएच और ईसी तालिका 2 में दिया गया है। 3.5 से कम पीएच वाला उर्वरक घोल धातुओं के लिए अत्यधिक संक्षारक है। इसके अलावा, उच्च बाइकार्बोनेट जल में अम्लीय उर्वरकों को मिलाने या कम से कम कैल्शियम कार्बोनेट की अतिसान्द्रता को कम करने के लिए मिलाना चाहिए, जो ड्रिपर्स को रोक सकता है।

**तालिका 2. कुछ उर्वरकों का पीएच और ईसी आसुत जल के 1 ग्राम/लीटर की सांद्रता पर**

| उर्वरक | पीएच | ईसी (डीएस/एम) |
|---|---|---|
| अमोनियम सल्फेट | 5.4 | 1.06 |
| यूरिया | 8.0 | 0.001 |
| तरल अमोनियम नाइट्रेट | 6.6 | 0.87 |
| पोटेशियम नाइट्रेट | 8.5 | 1.00 |
| मोनो–अमोनियम फॉस्फेट | 4.0 | 1.00 |
| मोनो –पोटेशियम फॉस्फेट | 4.5 – 5.0 | 0.75 |

ii) फर्टिगेशन प्रणाली में उपयोग किए जाने वाले उर्वरकों में घुलनशीलता की दर उच्च होनी चाहिए। जैसे यूरिया, अमोनियम नाइट्रेट, अमोनियम सल्फेट, मोनो–अमोनियम फॉस्फेट, फॉस्फोरिक एसिड, पोटेशियम नाइट्रेट बाजार में उपलब्ध कई ग्रेडों में से कुछ के नाम हैं।

iii) दो घुलनशील उर्वरकों के घोल को मिलाने से कभी–कभी अवक्षेप बन सकता है। ऐसे मामलों से संकेत मिलता है कि ये उर्वरक परस्पर संगत नहीं हैं, और उन्हें एक टैंक में मिलाने से बचने के लिए विशेष ध्यान देना होगा। उनके घोल दो अलग–अलग टैंकों में तैयार किए जाने चाहिए। यदि अपेक्षाकृत उच्च जल घुलनशीलता दर वाले दो रासायनिक यौगिकों को मिश्रित किया जाता है और कम घुलनशीलता वाले नए यौगिकों को मिलाकर बनाया जाता है, तो यह हमेशा प्रतिक्रिया की दिशा होगी।

तालिका 3, यह स्पष्ट करती है कि न तो फॉस्फोरिक और न ही सल्फेट उर्वरकों को एक ही टैंक में कैल्शियम उर्वरकों के साथ मिलाया जाना चाहिए। यह पृथक्करण टैंक या पाइपलाइन कैल्शियम फॉस्फेट या कैल्शियम सल्फेट यौगिकों के तलछट को बनने से रोकता है।

**चूनेदार मृदा:** चूनेदार मृदा में उच्च कैल्शियम कार्बोनेट सामग्री होती है जो कि विघटन के परिणामस्वरूप उच्च बाइकार्बोनेट ($HCO_3$-) सांद्रता देती है जो मृदा को 7.5–8.5 की पीएच रेंज में बफर करती है। सामान्य तौर पर, कैल्शियम कार्बोनेट की उपस्थित प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से नाइट्रोजन, फास्फोरस, मैग्नीशियम, पोटेशियम, मैंगनीज, जस्ता, तांबा और लोहे की उपलब्धता और रसायनता को प्रभावित करती है।

चूनेदार मृदा में सुधार के लिए न केवल मृदा के पीएच को कम करने की आवश्यकता होती है, बल्कि मृदा में कैल्शियम कार्बोनेट को निष्क्रिय करने की भी आवश्यकता होती है। इसके लिए सबसे किफायती उपाय है एलीमेंटल सल्फर। प्रत्येक छंटाई के मौसम में प्रति एकड़ के आधार पर 50–100 किलोग्राम एलीमेंटल सल्फर का प्रयोग कैल्शियम कार्बोनेट सामग्री के आधार पर वांछनीय होगा । यदि मृदा में कैल्शियम की मात्रा अधिक है, तो कम से कम 2–3 साल तक नियमित रूप से अनुप्रयोग करने की आवश्यकता होगी। मृदा पीएच में कमी से भी मृदा में फास्फोरस और सूक्ष्म पोषक तत्वों की उपलब्धता में सुधार होगा।

## तालिका 3. घुलनशील उर्वरकों की अंतर–संगतता

| उर्वरक | Abbrl | उर | एएन | एएस | एमए पी | एमके पी | पीएन | पीएन + एमजी | पीएन + पी | एस ओपी | सीएन | सीए सी एल$_2$ | एमजी + एन |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| यूरिया | उर | | | | | | | | | | | | |
| अमोनियम नाइट्रेट | एएन | सी | | | | | | | | | | | |
| अमोनियम सल्फेट | एएस | सी | सी | | | | | | | | | | |
| मोनो–अमोनियम फॉस्फेट | एमएपी | सी | सी | सी | | | | | | | | | |
| मोनो पोटेशियम फॉस्फेट | एमकेपी | सी | सी | सी | सी | | | | | | | | |
| मल्टी–के ( पोटेशियम नाइट्रेट) | पीएन | सी | सी | एल | सी | सी | | | | | | | |
| मल्टी–केएमजी | पीएन+एमजी | सी | सी | एल | एल | एल | सी | | | | | | |
| मल्टी–एनपीके | पीएन+पी | सी | सी | सी | सी | सी | सी | एक्स | | | | | |
| पोटेशियम सल्फेट | एसओपी | सी | सी | सी | सी | सी | सी | सी | सी | | | | |
| कैल्शियम नाइट्रेट | सीएन | सी | सी | एल | एक्स | एक्स | सी | सी | एक्स | एल | | | |
| कैल्शियम क्लोराइड | सीएसीएल$_2$ | सी | सी | एल | एक्स | एक्स | सी | सी | एक्स | एल | सी | | |
| मैगनीशियम नाइट्रेट | एमजी + एन | सी | सी | सी | एक्स | एक्स | सी | सी | एक्स | सी | सी | सी | |
| मैग्नीशियम सल्फेट | एमजीएस | सी | सी | सी | एक्स | एक्स | एल | सी | एक्स | सी | एल | एल | सी |

सी – अनुकूल, एल – सीमित अनुकूलता, एक्स – असंगत

ऐसी स्थितियों में नाइट्रोजन के उपयोग को अधिकतम करने के लिए, यह जरूरी है कि अमोनियम सल्फेट या यूरिया को फर्टिगेशन के माध्यम से विभाजित करके दिया जाय, ताकि जल के साथ नाइट्रोजन जड़ क्षेत्र तक पहुंच जाय, जहां उनका तुरंत उपयोग किया जाता है और वाष्पीकरण के द्वारा सतह से होनेवाली अमोनिया की हानि से बचा जा सके।

घुलनशील फास्फोरस उर्वरक (फॉस्फोरिक एसिड, ट्रिपल सुपरफॉस्फेट, अमोनियम फॉस्फेट, आदि) चूनेदार मृदा में पसंदीदा स्रोत हैं। चूने के साथ फास्फोरस की स्थिरीकरण अभिक्रियाओं में कार्बनिक पदार्थ हस्तक्षेप करते पाए गए हैं। इस प्रकार मृदा में अधिक कार्बनिक पदार्थों के अनुप्रयोग से लताओं के लिए फास्फोरस की उपलब्धता में सुधार होगा। आधारीय के साथ–साथ फलत छंटाई के मौसम में पोटेशियम के 3–4 पर्ण अनुप्रयोगों की सलाह दी जाती है।

मैग्नीशियम सल्फेट, मैग्नीशियम नाइट्रेट आदि जैसे घुलनशील मैग्नीशियम स्रोतों को फर्टिगेशन के माध्यम से कई भागों में देने से अंगूर लता के लिए मैग्नीशियम की उपलब्धता में सुधार होगा। इसके अलावा, आधारीय के साथ–साथ फलत छंटाई के मौसम में मैग्नीशियम के 3–4 अनुप्रयोगों की सलाह दी जाती है।

8 के पीएच मान वाली मृदा में आयरन, जस्ता या मैंगनीज की तुलना में काफी कम घुलनशील होता है। जहां कहीं भी चूने से प्रेरित आयरन क्लोरोसिस की समस्या होती है, फेरस सल्फेट जैसे अकार्बनिक लौह उर्वरकों को फर्टिगेशन के माध्यम अधिक मात्रा में दिया जाता है जिससे पौधों को प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हो सकें। दूसरा विकल्प है एफई–ईडीडीएचए (लोहे का चिलेटेड रूप) का मृदा में प्रयोग। फेरस सल्फेट (2–3 ग्राम/ली) के पत्तियों पर छिड़काव (2–3) अस्थायी राहत प्रदान करेगा। हालांकि, छिड़काव वाले घोल

का पीएच अम्लीय होना चाहिए। इसके बाद फेरस सल्फेट 25-30 किग्रा/एकड़ को बहुविभाजित डोज़ों या एफई-ईडीडीएचए में फर्टिगेशन के माध्यम से देना चाहिए।

चित्र 1. चूनेदार मृदा

मृदा के उच्च पीएच के कारण कैल्शियम युक्त मृदा में जिंक भी कम उपलब्ध होता है। जिंक, जिंक हाइड्रॉक्साइड और जिंक कार्बोनेट जैसे अवक्षेप बनाता है जो अघुलनशील होते हैं और लताओं के लिए अनुपलब्ध होते हैं। चिलेटेड जिंक घुलनशील रहता है और पौधों के लिए जिंक सल्फेट जैसे अकार्बनिक रूपों की तुलना में काफी लंबे समय तक उपलब्ध रहता है। लेकिन फर्टिगेशन के माध्यम से विभाजित अनुप्रयोग द्वारा जिंक सल्फेट की उपलब्धता में सुधार किया जा सकता है। प्रति एकड़ आधार पर लगभग 15-20 किलोग्राम जिंक सल्फेट प्रति छंटाई मौसम हेतु पर्याप्त होगा। डंठल में जिंक की मात्रा में सुधार के लिए इसे पर्ण छिड़काव (1-2 ग्राम जिंक सल्फेट प्रति लीटर) के साथ देना चाहिए।

मृदा पीएच कम घुलनशील यौगिकों के निर्माण की तुलना में बोरॉन की उपलब्धता को सोखने की प्रतिक्रियाओं से अधिक प्रभावित होता है। 5.5-7.5 के पीएच सीमा में बोरॉन की उपलब्धता सबसे अधिक होती है। उच्च पीएच पर कैल्शियम का उच्च स्तर बोरॉन के अवशोषण को कम कर देता है। यह इस तथ्य की व्याख्या कर सकता है कि शांत मृदा में उच्च बोरॉन स्तर, जिसे अन्य स्थितियों में विषाक्त माना जाता है, लताओं में बोरॉन विषाक्तता उत्पन्न नहीं कर सकता है।

## सोडिक मृदा

मृदा को सोडिक माना जाता है यदि सीईसी के छह प्रतिशत से अधिक सोडियम पर कब्जा कर लिया जाता है, और यदि आंकड़ा 15 प्रतिशत से अधिक हो तो अत्यधिक सोडिक होती है। सोडियम, कैल्शियम और मैग्नीशियम की तुलना में एक्सचेंज कॉम्प्लेक्स पर हावी रहता है और इस तरह मृदा की संरचना को प्रभावित करता है। मृदा के कण का फैलाव हो जाता है तथा मृदा में सूजन आ जाती है। मृदा के कण फिर रोमछिद्रों को अवरुद्ध कर देते हैं जिससे मृदा के माध्यम से जल और हवा की आवाजाही प्रतिबंधित हो जाती है। इससे जलभराव, मृदा में कम जल संग्रहण, मृदा की पपड़ी और मृदा से अधिक अपवाह होता है।

विभिन्न क्षेत्रों के अंगूर बागों की मृदा में पोटेशियम के स्तर और मृदा के प्रकार के आधार पर ईएसपी 6-8 प्रतिशत जैसी सॉडिसिटी से संबंधित समस्याएं स्पष्ट हो रही हैं। सिंचाई जल, सोडियम का प्रमुख स्रोत है, इसलिए जिन लोगों के सिंचाई के जल में सोडियम की मात्रा अधिक होती है, उन्हें रोपण चरण से ही इसके निर्माण को कम करने की योजना बनाने की आवश्यकता होती है। सोडिसिटी का प्रभाव प्रत्यक्ष भी होता है और अप्रत्यक्ष भी। अप्रत्यक्ष प्रभाव मृदा की खराब संरचना के कारण होता है। खराब संरचना या सघन मृदा जड़ की वृद्धि, मृदा के वातन और अंततः पोषक तत्वों के अवशोषण को कम कर देती है जिससे लता कमजोर हो जाती है। कमजोर लतायें रोग और कीटों के हमले की चपेट में आ जाती है।

अंगूरबाग में सोडियम विषाक्तता और पोटेशियम की कमी के कारण पत्ती का काला पड़ना और परिगलन पाया जाता है। कभी-कभी लक्षण पहले टहनी की ऊपरी पत्तियों पर और कभी-कभी निचली पत्तियों पर देखे जाते हैं (चित्र 2)।

सोडिक मृदा में सुधार करने का सबसे आम तरीका जिप्सम या सल्फर (तालिका 4) जैसे सुधारकों को देना है। जिप्सम, कैल्शियम सल्फेट है। यह मृदा विनिमय परिसर में सोडियम को प्रतिस्थापित करने का कार्य करता है और इस प्रकार विनिमय सम्मिश्र से विस्थापित सोडियम अधिक जल देने से निक्षालित होता है। चूनेदार मृदा के मामले में, सल्फर को सुधारक के रूप में प्रयोग किया जाना चाहिए। सल्फर मृदा के पीएच को कम कर देता है जिससे कैल्शियम कार्बोनेट का विघटन होता है। यह कैल्शियम फिर सोडियम को विनिमय सम्मिश्र में बदल देता है। यदि अवभूमि सोडिक हैं, तो अंगूरलताओं को लगाने से पहले जिप्सम को गहरी परतों में वितरित करने में मदद हेतु गहरी खुदाई आवश्यक होती है।

चित्र 2अ. सोडियम विषाक्तता

चित्र 2अ. पोटेशियम की कमी के कारण पत्ती का काला पड़ना और परिगलन

**तालिका 4: जिप्सम की तुलना में सोडिक मृदा को पुनः प्राप्त करने के लिए विभिन्न सामग्रियों के लिए अनुमानित क्षमता**

| सामग्री | जिप्सम के 1000 किलो के बराबर सामग्री (टन में) |
|---|---|
| जिप्सम | 1000 |
| सल्फ्यूरिक एसिड | 570 |
| सल्फर | 180 |
| चूना-सल्फर | 750 |

❄❄❄

# अंगूर में पादप वृद्धि नियामकों का विवेकपूर्ण उपयोग

**डॉ. स. द. रामटेके**
**प्रधान वैज्ञानिक (पादप कार्यिकी)**

## पादप वृद्धि नियामक

हार्मोन द्वारा पौधों में कई व्यवहारिक पैटर्न और कार्य नियंत्रित होते हैं। ये रासायनिक संदेशवाहक हैं जो पौधों के विकास के कई पैटर्न को प्रभावित करते हैं। पादप हार्मोन –एक प्राकृतिक पदार्थ (पौधे द्वारा निर्मित) है जो पौधों की गतिविधियों को नियंत्रित करने का कार्य करता है।

- एक पौधे के एक हिस्से में उत्पादित होते हैं और फिर दूसरे हिस्सों में ले जाये जाते हैं जहां वे प्रतिक्रिया शुरू करते हैं।
- वे उन क्षेत्रों में संग्रहित होते हैं जहां उत्तेजना होती है और फिर उपयुक्त उत्तेजना होने पर फ्लोएम या मीजोफिल के माध्यम से परिवहन किए जाते हैं।
- पादप वृद्धि नियामक– इसमें पादप हार्मोन (प्राकृतिक और कृत्रिम) शामिल हैं लेकिन पौधों में प्राकृतिक रूप से नहीं पाए जाने वाले गैर–पोषक तत्व भी शामिल हैं जिनका पौधों पर अनुप्रयोग होने पर उनकी वृद्धि और विकास को प्रभावित करते हैं।

## प्राकृतिक पौधों के हार्मोन और विकास नियामकों के मान्यता प्राप्त 5 समूह :

- ऑक्जिन
- जिब्रेलिन्स
- साइटोकाइनिन्स
- ईथीलीन
- एब्सिसिक अम्ल

पौधे की वृद्धि और विकास आंतरिक कारकों के दो सेटों के नियंत्रण में होता है।

पोषण कारक जैसे कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, वसा और अन्य की आपूर्ति वृद्धि के लिए आवश्यक कच्चे माल को बनाती है

इन कच्चे माल का उचित उपयोग कुछ रासायनिक संदेशवाहकों के नियंत्रण में होता है जिन्हें हार्मोन और विटामिन में वर्गीकृत किया जा सकता है।

## हार्मोन

संश्लेषण की साइट, क्रिया की साइट से अलग होती है। पादप हार्मोन शारीरिक रूप से सक्रिय होते हैं। हार्मोन शब्द ग्रीक मूल 'होर्मो' से लिया गया है जिसका अर्थ है 'उत्तेजित करना' (बेयलिस और स्टार्लिंग, 1902), थिमैन (1948) ने पौधे के हार्मोन के लिए पादपहार्मोन शब्द का उपयोग करने का सुझाव दिया।

### पादप हार्मोन

पौधों द्वारा प्राकृतिक रूप से उत्पादित कार्बनिक पदार्थ हैं जो कि बहुत ही कम सांद्रता में वृद्धि और विकास को बढ़ाते, कम करते अथवा संशोधित करते हैं।

### वर्गीकरण

**प्राकृतिक हार्मोन:** पौधे में कुछ ऊतकों द्वारा निर्मित किए जाते हैं उन्हें अंतर्जात हार्मोन भी कहा जाता है, जैसे आईएए।

**कृत्रिम हार्मोन:** कृत्रिम रूप से उत्पादित, शारीरिक गतिविधि में और प्राकृतिक हार्मोन के समान उन्हें बहिर्जात हार्मोन भी कहा जाता है। जैसे 2,4-डी, एनएए आदि।

### कार्य की प्रकृति के आधार पर

- **वृद्धि को बढ़ावा देने वाले हार्मोन/विकास को बढ़ावा देने वाले:** पौधे की वृद्धि को बढ़ाते हैं । जैसे ऑक्जिन, जिब्रेलिन्स, साइटोकाइनिन्स आदि ।
- **वृद्धि अवरोधक हार्मोन/वृद्धि मंदक:** पौधे की वृद्धि को रोकना, जैसे एबीए, इथीलीन।

**तालिका 1. फलत छंटाई के बाद विभिन्न चरणों में अंगूरों में जैवनियामकों का अनुप्रयोग**

| क्र. संख्या | छंटाई के बाद दिन | विकास चरण | रसायन | सांद्रता /डोज़ |
|---|---|---|---|---|
| 1 | 1-2 | छंटाई के बाद | हाइड्रोजन सायनामाइड 50 एसएल | 30-40 मिली/ली |
| 2 | 21-24 | तोतई हरा (प्रीब्लूम) छिड़काव | जिब्रेलिक अम्ल (जीए3) तकनीकी | 10 पीपीएम |
| 3 | 23-27 | दूसरा प्रीब्लूम डिप | जीए3 तकनीकी | 15 पीपीएम |
| | | | यूरिया फॉस्फेट | 1000 पीपीएम |
| 4 | 48-50 | मणि स्थापन के 3-4 मिमी बाद | जीए3 | 40 पीपीएम |
| | | बीजरहित सफेद के लिए | फोरक्लोरफेन्यूरॉन (सीपीपीयू) 0.1% एल | 2 पीपीएम |
| | | बीजरहित रंगीन के लिए | फोरक्लोरफेन्यूरॉन (सीपीपीयू) 0.1% एल | 0.5 पीपीएम |
| 5 | 60-62 | मणि स्थापन 6-7 मिमी के बाद | जीए3 | 30 पीपीएम |
| 6 | 50-70 | एक बार विरेजन पर या पहले | कैल्शियम नाइट्रेट | 5000-10000 पीपीएम |

## जैवनियामकों के अनुप्रयोग हेतु क्या करें और क्या न करें

### गुच्छा और मणि निकालना

#### क्या करें

- गुच्छों की हरी अवस्था में जीए3 @10 पीपीएम और पहले छिड़काव के 4-5 दिनों के बाद 15 पीपीएम जीए 3 का छिड़काव करें ।
- जीए3 छिड़काव अम्लीय (पीएच 5.5 - 6.5) स्थिति में होना चाहिए । घोल के पीएच को कम करने के लिए सहायक के रूप में साइट्रिक या फॉस्फोरिक एसिड या यूरिया फॉस्फेट का प्रयोग करें ।
- यदि आवश्यक हो तो 50% पुष्पन पर गुच्छों को 40 पीपीएम जीए3 के घोल में डुबोयें। अलग-अलग समूहों का चयन करें।
- गुच्छों के लिए उपलब्ध पत्तियों की संख्या के आधार पर 8-10 शीर्ष शाखाओं को बनाए रखते हुए स्थापन के तुरंत बाद गुच्छों के अग्रभाग को काट दें।
- 3-4 मिमी मणि आकार के चरण से पहले मणि का विरलन हाथ से करें ।

- यदि विरलन अपर्याप्त है तो 5-6 शाखाओं को बनाए रखने के लिए रेचिसों की वैकल्पिक शाखा को हटा दें और स्थापन के 8 दिन बाद गुच्छों की नोक को क्लिप करें ।
- पर्णसमूह के साथ-साथ गुच्छों की इष्टतम कवरेज के लिए पर्याप्त छिड़काव का उपयोग करें ।

### क्या न करें

- जीए3 के 30 मिली प्रति ग्राम से अधिक विलायक (एसीटोन/मेथनॉल) का उपयोग न करें ।
- यदि मौसम बादल और नमी भरा है, विशेष रूप से बारिश होने की संभावना है, तो फफूंदनाशक के बिना जीए3 का छिड़काव न करें, ताकि अत्यधिक फूल गिरने से बचा जा सके ।
- मणि गिरने और शॉटबेरी बनने से बचने के लिए जीए3 का पूर्ण पुष्प खिलने पर या मणि स्थापन के तुरंत बाद छिड़काव न करें।
- 3-4 मिमी मणि आकार के चरण से पहले लताओं का विरलन ना करें।
- कैंची से विरलन करते समय मणि को चोट से बचाएं।
- गुच्छ विस्तार के लिए जीए3 के साथ आईएए का उपयोग न करें ।

## मणि आकार

### क्या करें

- 1-2 पीपीएम सीपीपीयू एवं 30-40 पीपीएम जीए3 के मिश्रित घोल में पहली बार 3-4 मिमी चरण पर और फिर 6-7 मिमी मणि आकार के चरण में गुच्छों को डुबोयें। डुबकी के लिए वृद्धि नियामकों की सांद्रता का चयन प्रति गुच्छा उपलब्ध पत्तियों की संख्या पर निर्भर होना चाहिए ।
- गुच्छ के सिरे को उसकी लंबाई का 1/3 या 1/4 भाग काट दें, क्योंकि कम विकसित मणियाँ ज्यादातर गुच्छों के निचले आधे हिस्से में बनती हैं ।
- सुनिश्चित करें कि एक गुच्छ में सभी मणियों को जीए3 का उपचार समान रूप से प्राप्त हो।
- विकासशील गुच्छा (6-8 मणि/पत्ती) के लिए पर्याप्त पत्ती/फल अनुपात सुनिश्चित करें ।

### क्या न करें

- 8 से कम पत्तियों वाले अंकुर पर गुच्छों को विकसित न होने दें ।
- जब धारण वाली टहनी में पत्ती का क्षेत्र अपर्याप्त हो, और प्ररोह का ओज कम हो, तब गुच्छों को सीपीपीयू से उपचारित न करें।
- 8-10 मिमी मणि आकार चरण से अधिक देर बाद मणि विरलन न करें ।

❋❋❋

# मौसम का पूर्वानुमान और रोग प्रबंधन में इसका महत्व

**डॉ. सुजॉय साहा**
**प्रधान वैज्ञानिक (पादप रोग विज्ञान)**

डाउनी मिल्ड्यू (*प्लास्मोपारा विटिकोला*), पाउडरी मिल्ड्यू (*अनसिनुला नेकेटर*) और एन्थ्रेक्नोज (*एल्सिनो एम्पेलिना*, एनामॉर्फ *स्पैसेलोमा एम्पीलिनम* (Syns) *ग्लाइओस्पोरियम एम्पिलो फेगम*), अंगूर के तीन सबसे महत्वपूर्ण रोग हैं। इन रोगों में एक ही मौसम में तेजी से दोहराए जाने वाले चक्र होते हैं और यदि समय पर उचित नियंत्रण उपाय नहीं किए गए तो गंभीर से पूर्ण नुकसान तक का कारण बन सकते हैं और इनमें महामारी के रूप में विकसित होने की क्षमता भी होती है।

महाराष्ट्र, तेलंगाना और महाराष्ट्र से सटे कर्नाटक के प्रमुख अंगूर उगाने वाले क्षेत्रों में, 'दो छंटाई – एक उपज' प्रणाली का पालन किया जाता है, जिसमें अप्रैल के दौरान आधारीय छंटाई की जाती है और अक्टूबर के दौरान फलत छंटाई की जाती है। आधारीय छंटाई के बाद की वृद्धि, उच्च रोग जोखिम में नहीं होती है, क्योंकि बारिश शुरू होने तक पत्तियां पहले ही परिपक्व हो चुकी होती हैं। केवल नवीन वृद्धि जब गीली या आर्द्र परिस्थितियों में होती है तो बीमारियों का खतरा अधिक होता है और नवीन वृद्धि पर संक्रमण से आर्थिक नुकसान होता है। ऊपर वर्णित अधिकांश अंगूर उगाने वाले क्षेत्रों में फलत छंटाई का सामान्य समय लगभग 15 अक्टूबर है, लेकिन यह जुलाई के पहले सप्ताह से नवंबर के अंतिम सप्ताह तक भी की जाती है। रोग प्रबंधन की दृष्टि से, 15 अक्टूबर से पहले की जाने वाली छंटाई में फफूंदी लगने का अधिक खतरा होता है, क्योंकि बारिश की संभावना अधिक होती है और तापमान भी गर्म होता है। फलत छंटाई के बाद कली स्फुटित होने के लिए लगभग 8–10 दिनों की आवश्यकता होती है। इसके बाद औसतन हर तीन दिन के अंतराल में नई पत्तियां विकसित होती हैं। पाँचवीं पत्ती पर एक गुच्छा होगा, जो फलत छंटाई से फूल आने तक लगभग 35 से 45 दिन लगते हैं, और 50 से 55 दिन फल लगने के लिए। छंटाई के बाद से 50–55 दिनों में, गुच्छों पर डाउनी मिल्ड्यू संक्रमण के कारण नुकसान का जोखिम अधिक होता है। इस अवधि के दौरान बारिश और भारी ओस, गुच्छों पर डाउनी मिल्ड्यू के विकास में मदद करती है। सूर्योदय के बाद लगातार तीन घंटे तक पत्तों का गीला रहना, नए संक्रमण के लिए अनुकूल होता है। यदि छंटाई के पहले 55 दिनों के दौरान ऐसी स्थितियां बनी रहती हैं, तो डाउनी मिल्ड्यू के प्रभावी नियंत्रण के लिए कम अंतराल पर फफूंदनाशकों के छिड़काव की आवश्यकता होती है। फलत छंटाई के 70–75 दिनों के भीतर मणि 10 से 12 मिमी आकार तक विकसित हो जाती हैं और उसके बाद डाउनी मिल्ड्यू का जोखिम धीरे-धीरे कम हो जाता है। नवंबर और दिसंबर के दौरान बारिश कम होती है, लेकिन जब नवंबर या उसके बाद बारिश होती है, तो डाउनी मिल्ड्यू के कारण भारी नुकसान देखा जाता है। डाउनी मिल्ड्यू के प्रभावी प्रबंधन के लिए आमतौर पर छंटाई पश्चात 55 दिनों के दौरान फफूंदनाशकों के 5 से 6 छिड़कावों की आवश्यकता होती है। नवंबर–दिसंबर के दौरान बारिश की स्थिति में छिड़कावों की संख्या बढ़कर 9 तक हो सकती है, जबकि आगे गीला मौसम अनुपस्थित होने पर इसे 3–4 तक कम भी किया जा सकता है।

चूँकि ये तीनों बीमारियाँ अनुकूल पर्यावरणीय परिस्थितियों में पूर्ण नुकसान का कारण बन सकती हैं, इसलिए एहतियात के तौर पर उत्पादक संवेदनशील अवधि के दौरान पूर्व निर्धारित स्प्रे शेड्यूल का सख्ती से पालन करते हैं। हालाँकि ऐसी प्रणाली फायदेमंद हो सकती है जब पर्यावरणीय परिस्थितियाँ रोग के विकास के लिए लगातार अनुकूल होती तो कवकनाशी और श्रम के अतिरिक्त उपयोग के कारण अक्सर खेती की लागत में वृद्धि होती है। रोग हेतु प्रतिकूल मौसम की स्थिति में, बीमारियों के कारण होने वाले नुकसान का जोखिम बहुत कम होता है और कम रोग जोखिम अवधि के दौरान, दो निवारक स्प्रे के बीच अंतर बढ़ाकर या महंगे प्रणालीगत कवकनाशी के बजाय कम महंगे गैर-प्रणालीगत कवकनाशी का उपयोग करके पौधों की सुरक्षा लागत को कम किया जा सकता है।

इन रोगों की घटना और गंभीरता मौसम की स्थिति पर निर्भर करती है और इसलिए, उनके महामारी विज्ञान के आधार पर मौजूदा मौसम संबंधी परिस्थितियों में इन रोगों की वृद्धि के संभावित जोखिम का अनुमान लगाना संभव है। ऐसी भविष्यवाणियों के लिए 'रोग पूर्वानुमान मॉडल' विकसित किए गए हैं। इन मॉडलों का उपयोग रोग प्रबंधन के लिए अंगूर के बागों में कवकनाशी के छिड़काव पर दिन-प्रतिदिन के निर्णय लेने के लिए किया जाता है। रोग वृद्धि के लिए महत्वपूर्ण मौसम मापदंडों पर आँकड़े ऐसे मॉडलों के लिए प्राथमिक निवेश हैं। भले ही रोगी पौधे, रोगज़नक़ और पर्यावरण की परस्पर क्रिया हैं, रोग पूर्वानुमान मॉडल मौजूदा मौसम की स्थिति

में रोग जोखिम का अनुमान लगाते हैं, यह मानते हुए कि सक्रिय रोगज़नक़ हमेशा मौजूद रहता है। इस प्रकार रोग की स्थिति या वृद्धि चरण पर विचार करने के बाद छिड़काव पर निर्णय लिया जा सकता है।

उपरोक्त तीन रोगों के पूर्वानुमान के लिए कुछ प्रासंगिक जानकारी का सारांश नीचे दिया गया है:

## डाउनी मिल्ड्यू

### प्राथमिक संरोप

दक्षिणी भारत में अप्रैल से जून तक रोगज़नक़ मिट्टी में ऊस्पोर्स या रेस्टिंग स्पोरैंजिया या टहनियों पर निष्क्रिय मायसेलियम के रूप में जीवित रहता है। यदि बारिश/सिंचाई/ओस और तापमान के कारण मिट्टी और/या पत्ते कम से कम 22 से 24 घंटे तक गीले रहते हैं और तापमान 9–10 °से. से ऊपर हो तो प्राथमिक संरोप स्पोरैंजिया पैदा करता है (मैथ्यू और हेन्स, 1969; मैगारे और विक्स, 1985), जो जल–जनित जूस्पोर्स विकसित करने के लिए अंकुरित होता है। ये जूस्पोर्स रंध्र या लेंटीकल्स के माध्यम से पत्तेदार पौधों के हिस्सों को संक्रमित करते हैं। तापमान और पौधे की वृद्धि चरण के आधार पर, ऊष्मायन के लगभग 3–7 दिनों के बाद 'तेल के धब्बे' और हवा से पैदा होने वाले स्पोरैंजिया से युक्त वृद्धि विकसित होती है।

### माध्यमिक संरोप

प्राथमिक संरोप के कारण होने वाले संक्रमण से विकसित होने वाले स्पोरैंजिया द्वितीयक संरोप हैं और मौसम की अनुकूल परिस्थितियों, पौधों की वृद्धि चरण आदि के तहत अंगूरबाग में रोग के प्रसार और विकास के लिए जिम्मेदार हैं।

### मौसम मापदंड

#### (i) स्पोरुलेशन

- घावों पर स्पोरुलेशन के लिए कम से कम 4 घंटे का अंधेरा, 98% से अधिक सापेक्षिक आर्द्रता, और 13 °से. से अधिक तापमान आवश्यक है (ब्लीज़ेर और वेल्ट्रियन, 1978; ब्रूक, 1979)।

#### (ii) संक्रमण

- संक्रमण के लिए व्यवहार्य स्पोरैंजिया की उपलब्धता और सुबह–सुबह 2 घंटे पत्ती गीला होना आवश्यक है।
- रोग जल्दी विकसित होता है और लंबे अंतराल पर सिंचित अंगूर बागों की तुलना में कम अंतराल पर सिंचित अंगूर के बागों में अधिक गंभीर होता है।
- प्रतिगमन विश्लेषण के आधार पर वैज्ञानिकों ने संकेत दिया है कि निम्नलिखित स्थितियां प्राथमिक संक्रमण के अनुकूल हैं

  I. बारिश का मौसम 3–4 दिनों के लिए पत्तियों को गीला रखने के लिए पर्याप्त है

  II. द्वितीय तापमान: 17 – 32.5 °से.

  III. दोपहर सापेक्षिक आर्द्रता 48% से अधिक

- माध्यमिक प्रसार के लिए अधिकतम तापमान 27–30 °से., औसत न्यूनतम तापमान 11–22.5 °से. और सापेक्षिक आर्द्रता 88–90% अनुकूल है।
- इसी तरह, यह दिखाया गया है कि यह रोग तब हो सकता है जब तापमान 10.2 से 31.5 °से. के बीच हो और सापेक्षिक आर्द्रता तीन दिनों के लिए 47–97% की सीमा में हो। हालांकि, यदि इन तीन दिनों के दौरान तापमान 17 घंटे के लिए 28 °से. से अधिक रहता है और 90% से अधिक सापेक्षिक आर्द्रता केवल 9 या उससे कम घंटों के लिए बनाए रखा जाता है, तो रोग गुणन की दर शून्य हो जाती है।

### वृद्धि चरण और रोग

शुरुआती डाउनी मिल्ड्यू संक्रमण 3-पत्ती की अवस्था में कलियों के स्फुटन के बाद हो सकता है। हर 3 दिन में एक नया पत्ता अतिसंवेदनशील हो जाता है। अपेक्षाकृत पुराने पत्ते (34-48 दिन पुराने) छोटे (14-18 दिन पुराने) पत्तों की तुलना में तेजी से रोग विकसित करते हैं। फूलों की कलियाँ अधिकतम अधोमुखी/डाउनी वृद्धि दर्शाती हैं। सरसों और मटर के आकार की मणियों के मामले में नीचे की वृद्धि पेडिकल सिरे तक सीमित होती है, जबकि उन मणियों पर कोई वृद्धि नहीं देखी जाती है जिनका व्यास 12.5 मिमी से अधिक या उनके धारण के 1 महीने बाद होता है।

## पाउडरी मिल्ड्यू

### प्राथमिक और माध्यमिक संरोप

कलियों में निष्क्रिय माइसेलियम इनोकुलम का प्राथमिक स्रोत है, जो कली से नए अंकुर के विकसित होते ही सक्रिय हो जाता है। कोनिडिया, जो हवा से होते हैं और पर्ण भागों पर विकसित होते हैं, द्वितीयक प्रसार के लिए जिम्मेदार होते हैं। ऐसा माना जाता है कि दक्षिणी भारत में कम से कम अंगूर उगाने वाले क्षेत्र में पाउडरी मिल्ड्यू पूरे वर्ष सक्रिय रहती है।

### मौसम प्राचल

- कम आर्द्रता एवं मेघाच्छादित मौसम, रोग के विकास के लिए अनुकूल हैं, जबकि भारी बारिश, और गर्म और शुष्क मौसम रोग के लिए प्रतिकूल हैं।
- यदि तापमान 10 °से. से नीचे या 37.7 °से. से ऊपर हो तो रोगज़नक़ नहीं बढ़ता है (बटलर एंड जोन्स, 1949)।
- न्यूनतम तापमान 20.1-21.9 °से. और सापेक्षिक आर्द्रता 57.6-68.2% की सीमा, पाउडरी मिल्ड्यू के लिए अनुकूल है।
- दोपहर के समय 40% से अधिक सापेक्षिक आर्द्रता, 17-34 °से. के बीच तापमान के साथ पाउडरी मिल्ड्यू के एपिफाइटोटिक की स्थापना में मदद करता है।
- 11-32 °से. के बीच तापमान और 57% से अधिक सापेक्षिक आर्द्रता रोग के विकास का पक्ष लेते हैं। जबकि 8.6 °से. से नीचे या 34 °से. से ऊपर का तापमान और 47% से नीचे सापेक्षिक आर्द्रता रोग के विकास की शून्य दर को दर्शाता है।

### वृद्धि चरण और रोग

कवक लताओं के सभी वृद्धि चरणों पर हमला कर सकता है। मणि स्थापना के 2 सप्ताह बाद से लेकर विरेजन तक अतिसंवेदनशील होते हैं। विरेजन के बाद आमतौर पर मणि पर रोग विकसित नहीं होता है, लेकिन हरी रेचिस में पाउडरी मिल्ड्यू संक्रमण विकसित हो सकता है जो अंगूर के जीवन को प्रभावित कर सकता है।

## एन्थ्रेक्नोज

### प्राथमिक और माध्यमिक संरोप

केन, कली प्रारूप, तना और शाखाओं पर कैंकेरस घाव मुख्य प्राथमिक संरोप हैं। रोगज़नक़ के स्पोरुलेशन के लिए बारिश/ओस की आवश्यकता होती है। पर्णसमूह में नये विकासशील ऊतक अतिसंवेदनशील होते हैं। कवक सीधे आक्रमण कर सकता है। प्राथमिक संरोप के कारण होने वाले घावों से विकसित होने वाले कोनिडिया द्वितीयक संरोप हैं। द्वितीयक संरोप कोनिडिया पैदा करता है जो फिर से संक्रमण का कारण बनता है। मौसम की स्थिति के आधार पर यह चक्र मौसम में कई बार खुद को दोहराता है।

### मौसम प्राचल

- नए अंकुर के विकास के दौरान उच्च तापमान के साथ उच्च सापेक्षिक आर्द्रता की उपस्थिति रोग को बढ़ावा देती है। तापमान की तुलना में रोग के विकास के लिए सापेक्षिक आर्द्रता और वर्षा अधिक महत्वपूर्ण है। बारिश या ओस से बीजाणुओं के प्रसार और उनके अंकुरण को बल मिलता है। पहले से बने हुए घाव वर्षा के अभाव में भी आकार में बढ़ते रहते हैं।

- कवक 9–35 °से. के बीच तापमान में बढ़ता है, जबकि अधिकतम वृद्धि और स्पोरुलेशन 29 °से. पर देखा गया और 40 °से. पर कोई वृद्धि नहीं हुई।
- यह रोग तब दिखाई देता है जब औसत अधिकतम तापमान 29–29.8 °से. और औसत न्यूनतम तापमान 21–22 °से. की सीमा के बीच में हो, और जब सापेक्षिक आर्द्रता 82–95% की सीमा में हो।
- प्रति सप्ताह 3–16 दिनों में वितरित 49.99 मिमी वर्षा और मेघाच्छादित मौसम की व्यापकता ने अतिसंवेदनशील नये ऊतकों पर गंभीर संक्रमण का कारण बनने में मदद करता है।
- कवक के विकास और स्पोरुलेशन के लिए अंधेरा सबसे अनुकूल होता और उसके बाद विसरित प्रकाश।

### विकास के चरण

यह रोग अंगूर की बेलों के सभी युवा हरे पौधों के भागों पर होता है। 20 दिन पुरानी पत्ती एन्थ्रेक्नोज के प्रति प्रतिरोधी हो जाती है।

## रोग पूर्वानुमान के तरीके

उपरोक्त महामारी विज्ञान की जानकारी का उपयोग पूर्वानुमान मॉडल विकसित करने के लिए किया जाता है, जहां प्रतिगमन समीकरण स्थापित होते हैं जो मौसम के मापदंडों (वर्षा, तापमान, सापेक्षिक आर्द्रता, पत्ती की नमी की अवधि आदि), संवेदनशील वृद्धि चरण/किस्म, कवकनाशी (प्रणालीगत/गैर-प्रणालीगत) के अंतिम छिड़काव के बाद व्यतीत समय, रोग के विकास की दर जैसे प्रमुख कारकों के संबंधों को दर्शाते हैं। ऐसे समीकरणों की सहायता से विशिष्ट क्षेत्र या अंगूर के बाग में प्रचलित परिस्थितियों में रोग के विकास की दर का अनुमान लगाया जा सकता है। रोग के विकास की इस तरह की अनुमानित दर की मदद से रोग के फैलने की संभावना पर उचित सटीकता के साथ और बीमारी के वास्तविक प्रकोप से काफी पहले की भविष्यवाणी की जाती है। इस प्रकार उत्पादक उचित नियंत्रण उपाय समय पर और केवल तभी कर सकते हैं जब वास्तव में इसकी आवश्यकता हो। इस प्रकार रोगों का पूर्वानुमान दो प्रकार से लाभकारी होगा

1. रोग के प्रभावी नियंत्रण के लिए उपयुक्त कवकनाशी के प्रयोग द्वारा जब संरोप भार न्यूनतम हो और रोग के गंभीर प्रकोप से पहले
2. अनावश्यक छिड़काव से बचने के लिए जब रोग फैलने की कोई संभावना न हो

## रोगों के पूर्वानुमान के लिए बुनियादी आवश्यकताएँ:

1. मौसम डेटा रिकॉर्डिंग डिवाइस, जो पूर्व निर्धारित अंतराल पर लगातार डेटा रिकॉर्ड कर सकता है
2. पूर्वानुमान मॉडल जो रिकॉर्ड किए गए मौसम डेटा और अन्य अंगूर के बागों की जानकारी का उपयोग करके रोग फैलने की संभावना का अनुमान लगा सकता है
3. रोग के प्रकोप की अनुमानित गंभीरता के तहत अपनाए जाने वाले नियंत्रण उपायों पर विशिष्ट सिफारिशें

वर्तमान में विशिष्ट फसलों के विशिष्ट रोगों के पूर्वानुमान के लिए उपरोक्त तीनों आवश्यकताओं से युक्त कॉम्पैक्ट कम्प्यूटरीकृत उपकरण व्यावसायिक रूप से उपलब्ध हैं। अंगूर की बीमारियों और कीटों की भविष्यवाणी के लिए कंप्यूटर सॉफ्टवेयर देश के बाहर भी उपलब्ध हैं, जिनका उपयोग किसी भी कंप्यूटर पर किया जा सकता है यदि मौसम संबंधी आंकड़े उपलब्ध हों।

## पूर्वानुमान आधारित रोग प्रबंधन

### डाउनी मिल्ड्यू

कंप्यूटर पर मैन्युअल रूप से जो किया जाता है वास्तव में क्या वह भी किया जा सकता है? अंगूरों में डाउनी मिल्ड्यू के पूर्वानुमान के लिए ऐसा ही एक पूर्वानुमान मॉडल प्रस्तावित किया गया था और इसका उदाहरण नीचे दिया गया है।

मैन्युअल रूप से रिकॉर्ड किए गए अवलोकनों की सहायता से अस्थायी पूर्वानुमान लगाया जा सकता है। हालांकि आवश्यक टिप्पणियों को रिकॉर्ड करना व्यावहारिक रूप से बहुत कठिन है क्योंकि उनमें से कई को रात के दौरान देखा जाता है। इसलिए स्वचालित मौसम डेटा रिकॉर्डर प्रामाणिक डेटा रिकॉर्ड करने के लिए अनिवार्य है जिस पर पूर्वानुमान की सटीकता निर्भर है। भारत में कई संगठन बीमारी के पूर्वानुमान के लिए सॉफ्टवेयर के साथ-साथ स्वचालित मौसम स्टेशन (AWS) प्रदान करते हैं, जिसे आसानी से अंगूर के बागों में स्थापित किया जा सकता है, जो बटन के प्रेस के साथ छोटी एलसीडी स्क्रीन पर मौसम के आंकड़े और बीमारी के जोखिम को दिखाता है। भाकृअनुप-राष्ट्रीय अंगूर अनुसंधान केंद्र ने डाउनी फफूंदी और पाउडरी फफूंदी के प्रबंधन के लिए मॉडल विकसित और व्यावसायीकरण किया है जो किसी भी एडब्ल्यूएस से डेटा ले सकता है।

### पाउडरी मिल्ड्यू पूर्वानुमान मॉडल

बीजाणुओं के अंकुरण के लिए न्यूनतम तापमान 6 °से. से कम नहीं होना चाहिए। संक्रमण और प्रसार के लिए 17 °से. तापमान की आवश्यकता होती है। बीजाणुओं का अंकुरण, संक्रमण और रोग का प्रसार अधिकतम 21-30 °से. तापमान के बीच होता है। यदि पत्ती का तापमान 31.5-33.5 °से. के बीच है, तो बीजाणु अंकुरित नहीं होंगे।

कृषि मौसम विज्ञान केंद्र उच्च अध्ययन, कृषि कॉलेज, पुणे में किए गए शोध से पता चला है कि पाउडरी मिल्ड्यू की अधिकतम घटना 10.5-30.7 °से. तापमान और 53.4-97% सापेक्षिक आर्द्रता होगी। पाउडरी मिल्ड्यू 7.7 से नीचे या 33.3 °से. से ऊपर तापमान या 47.4% से नीचे सापेक्षिक आर्द्रता पर नहीं बढ़ती है। पाउडरी मिल्ड्यू के प्रबंधन के लिए छिड़काव जोखिम अवधि के दौरान लिया जाना चाहिए। जबकि कवकनाशी का चुनाव और छिड़काव का समय जोखिम की गंभीरता और विचाराधीन अंगूर बाग में वास्तविक वृद्धि के चरण पर आधारित होता है।

उत्पादक, न्यूनतम-अधिकतम थर्मामीटर और गीले और सूखे बल्ब थर्मामीटर का उपयोग करके अपने अंगूर के बागों में तापमान और सापेक्षिक आर्द्रता पर डेटा रिकॉर्ड कर सकते हैं और इस चार्ट का उपयोग अपने अंगूर के बागों में पाउडरी मिल्ड्यू का पूर्वानुमान लगाने के लिए कर सकते हैं। भाकृअनुप-राष्ट्रीय अंगूर अनुसंधान केंद्र, पुणे ने अंगूर उत्पादकों के लिए रोग पूर्वानुमान और निर्णय समर्थन प्रणाली उपलब्ध कराई है और कार्यक्रम कंप्यूटर में स्थापित किया गया है, और पाउडरी मिल्ड्यू के अनुमानित जोखिम और सलाह प्राप्त करने के लिए मैन्युअल रूप से दर्ज किए गए मौसम मानकों और वृद्धि चरण पर निवेश दर्ज किया गया है।

## मौसम की भविष्यवाणी और रोग प्रबंधन

उपरोक्त सभी रोग पूर्वानुमान पद्धतियां मौसम केंद्रों पर दर्ज वास्तविक मौसम आंकड़ों पर आधारित हैं। हालांकि, अब अगले 7 दिनों के लिए मौसम का सटीक पूर्वानुमान लगाने के लिए तकनीक उपलब्ध है। बारिश की संभावना, बादल छाने की सीमा, तापमान, आर्द्रता आदि का पूर्वानुमान उपग्रह सूचना का उपयोग करके प्राप्त किया जाता है। कई वेबसाइट ऐसे पूर्वानुमान निःशुल्क देती हैं। भाकृअनुप-राष्ट्रीय अंगूर अनुसंधान केंद्र, पुणे अपनी वेब साइट पर अंगूर उगाने वाले प्रमुख क्षेत्रों के लिए 7 दिनों के मौसम के पूर्वानुमान का सारांश देता है। http://nrcgrapes.nic.in/ इस वेबसाइट पर मौसम पूर्वानुमान और पौध संरक्षण पर संबंधित सलाह प्राप्त करने के लिए साप्ताहिक सलाह मेनू पर क्लिक करें। अपनी रुचि के स्थान पर मौसम के बारे में अधिक जानकारी जानने के लिए इस पृष्ठ पर दिए गए विभिन्न लिंक देख सकते हैं। ये लिंक हैं

https://www.wunderground.com/?cmšven=cgi
https://imdagrimet.gov.in/weatherdata/BlockWindow.php
https://www.timeanddate.com/weather/india

उपरोक्त सभी साइटें उपग्रहों के अपेक्षाकृत कम विभेदन डेटा के आधार पर जानकारी देती हैं, जहां सटीकता का स्तर अपेक्षाकृत कम होता है। दी गई जानकारी गांव या शहर विशिष्ट है। आजकल, उच्च विभेदन उपग्रह डेटा का उपयोग करके, बहुत छोटा स्थान विशिष्ट मौसम पूर्वानुमान उत्पन्न किया जा सकता है। जीपीएस (भौगोलिक स्थिति निर्धारण प्रणाली) का उपयोग करके कोई भी आसानी से देशांतर और रुचि के स्थान के अक्षांश का पता लगा सकता है, और डिजिटल मानचित्र में ग्लोब पर उस स्थान का पता लगा सकता है।

## रोग प्रबंधन में फफूंदनाशकों के चयन की रणनीतियाँ

विभिन्न रोगों के प्रबंधन के लिए अंगूर में उपयोग होने वाले अनुशंसित कवकनाशी की सूची हर साल भाकृअनुप–राष्ट्रीय अंगूर अनुसंधान केंद्र, पुणे द्वारा अद्यतन की जाती है। सूची में सूचीबद्ध सभी कवकनाशी का न केवल भाकृअनुप–राष्ट्रीय अंगूर अनुसंधान केंद्र, पुणे या अखिल भारतीय समन्वित अनुसंधान परियोजना केंद्रों के लिए परीक्षण किया गया है, बल्कि आवश्यक रूप से केंद्रीय कीटनाशक बोर्ड (सीआईबी) के साथ लेबल दावा पंजीकृत है, जहां लक्ष्य रोग, मात्रा, पीएचआई (तुड़ाई पूर्व अंतराल), और एमआरएल (अधिकतम अवशेष सीमा) का उल्लेख किया गया है। इसलिए सूची में सूचीबद्ध किसी भी कवकनाशी का उपयोग प्रबंधन अनुशंसित लक्ष्य रोगज़नक़ के लिए किया जा सकता है।

कवकनाशी को दो श्रेणियों में वर्गीकृत किया गया है अर्थात प्रणालीगत कवकनाशी और गैर–प्रणालीगत कवकनाशी। फलत छंटाई के बाद डाउनी मिल्ड्यू का जोखिम 3 पत्ती अवस्था (अग्रिम छंटाई के 10 से 12 दिन बाद) से शुरू होता है और सामान्य रूप से फल धारण तक रहता है (आगे की छंटाई के लगभग 50 दिन बाद)। इस अवधि के दौरान 3 दिनों के अंतराल पर एक पत्ता देते हुए अंकुर लगातार बढ़ता है। इसका मतलब है कि हर 3 दिनों में प्रत्येक केन पर एक पत्ता निकलेगा जो फफूंदनाशी छिड़काव से सुरक्षित नहीं है। ऐसी पत्तियों की रक्षा के लिए प्रणालीगत कवकनाशी की आवश्यकता होती है। युवा बढ़ती पत्तियों में प्रणालीगत कवकनाशी अच्छे होते हैं, इसलिए इनका उपयोग युवा पत्तियों पर सबसे अच्छा किया जाता है।

प्रणालीगत कवकनाशी अपनी क्रिया के तरीके में बहुत विशिष्ट होते हैं और इस प्रकार रोगज़नक़ प्रणालीगत कवकनाशी के खिलाफ अपेक्षाकृत आसानी से प्रतिरोध विकसित कर सकते हैं। गैर–प्रणालीगत कवकनाशी में कार्रवाई के बहु–बिंदु होते हैं और इसलिए, गैर–प्रणालीगत कवकनाशी के खिलाफ प्रतिरोध की वृद्धि बहुत दुर्लभ है। प्रणालीगत कवकनाशी के प्रतिरोधी कवक को गैर–प्रणालीगत कवकनाशी द्वारा मारा जा सकता है। इसलिए, प्रणालीगत कवकनाशी के साथ–साथ गैर–प्रणालीगत कवकनाशी का उपयोग, या प्रणालीगत कवकनाशी के छिड़काव के बाद थोड़े अंतराल के भीतर गैर–प्रणालीगत कवकनाशी का छिड़काव, अंगूर बाग में अक्सर प्रणालीगत कवकनाशी के खिलाफ प्रतिरोधी रोगज़नक़ की स्थापना की संभावना को कम करने में मदद करेगा।

डाउनी मिल्ड्यू के लिए जोखिम अवधि के दौरान अधिकांश प्रणालीगत कवकनाशी योगों के लिए अनुशंसित छिड़काव अंतराल 5 दिन है। यदि प्रणालीगत कवकनाशी के छिड़काव के बाद 5 दिनों के भीतर लक्ष्य रोग के लिए अनुकूल परिस्थितियों की उपस्थिति देखी जाती है, तो बेहतर रोग प्रबंधन के लिए एक ही लक्ष्य रोग के खिलाफ प्रभावी गैर–प्रणालीगत कवकनाशी के अतिरिक्त छिड़काव का सुझाव दिया जाता है।

रोगजनक कुछ प्रणालीगत कवकनाशी के खिलाफ प्रतिरोध विकसित करते हैं, जो अन्य कवकनाशी की तुलना में बहुत तेजी से होता है। ऐसे कवकनाशी को उच्च जोखिम वाले कवकनाशी के रूप में वर्गीकृत किया गया है। एफआरएसी (कवकनाशी प्रतिरोध कार्रवाई समिति) क्रॉप लाइफ इंटरनेशनल का एक आधिकारिक तकनीकी समूह सभी प्रासंगिक जानकारी एकत्र करता है और प्रत्येक कवकनाशी को उच्च जोखिम, मध्यम जोखिम, कम जोखिम और बिना जोखिम वाले समूहों के तहत वर्गीकृत करता है। विस्तृत अद्यतन जानकारी उनकी वेबसाइट http://www.frac.info/frac/publication/q_publication.htm पर उपलब्ध है। एफआरसी कवकनाशी के प्रत्येक समूह के लिए प्रतिरोधी प्रबंधन रणनीति भी तैयार करता है।

कवकनाशी की तरह कुछ रोगज़नक़ अन्य रोगज़नकों की तुलना में अधिकांश प्रणालीगत कवकनाशी के प्रति बहुत तेजी से प्रतिरोध विकसित करते हैं। ऐसे रोगज़नक़ भी उच्च जोखिम वाले रोगज़नक़ हैं। उदाहरण के लिए डाउनी मिल्ड्यू, पाउडरी मिल्ड्यू की तुलना में बहुत तेजी से प्रतिरोध विकसित करती है। इस प्रकार डाउनी मिल्ड्यू के लिए उच्च जोखिम वाले फफूंदनाशकों के उपयोग से दोहरा जोखिम होता है।

सैद्धांतिक रूप से, प्रतिरोध विकसित होने की संभावना तब अधिक होती है जब उच्च जोखिम वाले कवकनाशी का उपयोग निवारक के बजाय उपचारात्मक के रूप में किया जाता है। इसलिए, उच्च जोखिम वाले कवकनाशी का उपयोग उपचारात्मक के रूप में या बीमारी के फैलने के बाद नहीं किया जाना चाहिए। हालाँकि, डाउनी मिल्ड्यू के मामले में बहुत कम कवकनाशी को मध्यम जोखिम या कम जोखिम वाले कवकनाशी के रूप में वर्गीकृत किया गया है। डाउनी मिल्ड्यू के प्रबंधन के लिए अनुशंसित फफूंदनाशकों में

एमिसुलब्रोम, सिमोक्सानिल, डाइमेथोमोर्फ और आईप्रोवालिकर्ब मध्यम जोखिम वाले कवकनाशी हैं। इसलिए, प्रारंभिक विकास चरणों के दौरान या अपरिहार्य आवश्यकता होने पर उपचारात्मक के रूप में उनका उपयोग करने का सुझाव दिया जाता है।

पाउडरी मिल्ड्यू के प्रबंधन के लिए, स्ट्रोबिल्यूरिन (क्यूओआई कवकनाशी) कवकनाशी के मुक़ाबले ट्राईज़ोल समूह (एसबीआई कवकनाशी) से संबंधित कवकनाशी अधिक पसंद किए जाते हैं, क्योंकि बाद में उच्च जोखिम वाले कवकनाशी होते हैं। हाल के दिनों में कवकनाशी के साथ जैविक नियंत्रण कर्मको के उपयोग की अत्यधिक अनुशंसा की जाती है।

## अवशेष मुक्त अंगूरों के लिए एकीकृत रोग प्रबंधन

विटिस विनीफेरा से संबंधित वाणिज्यिक अंगूर की किस्में तीन महत्वपूर्ण बीमारियों जैसे डाउनी मिल्ड्यू, पाउडरी मिल्ड्यू और एन्थ्रेक्नोज के लिए अतिसंवेदनशील होती हैं। हालांकि, हाल के दिनों में कुछ क्षेत्रों में विशेष रूप से नर्सरी में रस्ट का संक्रमण गंभीर होता जा रहा है। इसी तरह गर्म क्षेत्रों में, जहां गर्म और आर्द्र स्थिति होती है, जीवाणु संक्रमण भी देखा जाता है। रस्ट और बैक्टीरियल स्पॉट रोग दोनों ही समय से पहले पत्ती गिरने का कारण बनते हैं। कुछ लताओं में ग्रेपवाइन लीफ रोल संबन्धित वायरस-3 भी देखा गया है। अधिकांश अंगूर रोगों की घटना और गंभीरता नवीन बढ़ते ऊतकों और मौसम की स्थिति पर निर्भर करती है। आम तौर पर अप्रैल से जून के पहले सप्ताह तक जलवायु गर्म होती है, और इसलिए रोग के विकास की संभावना कम होती है, लेकिन दक्षिण-पश्चिम मानसून के मौसम में पाउडरी मिल्ड्यू, डाउनी मिल्ड्यू और एन्थ्रेक्नोज के संक्रमण की संभावना बढ़ जाती है। इस प्रकार, आधारीय छंटाई के बाद रोग प्रबंधन की रणनीति का उद्देश्य रोग को कम करने के लिए गीले मौसम में सुरक्षा प्रदान करना है।

### 1. डाउनी मिल्ड्यू

डाउनी मिल्ड्यू (कारक एजेंट *प्लाज्मोपोरा विटीकोला*) अंगूर का सबसे विनाशकारी रोग है और अनुकूल परिस्थितियों में भारी नुकसान का कारण बनता है। पत्तियों, गुच्छों, फूलों, रेचिस, पेडिकल्स, युवा मणियों या युवा टहनियों पर सफेद अधोमुखी वृद्धि देखी जाती है। सफेद अंगूर की किस्मों में पत्ती की ऊपरी सतह पर तैलीय दिखने वाले पीले गोलाकार धब्बे और रंगीन अंगूर की किस्मों में लाल धब्बे देखे जाते हैं जबकि बाद में इन धब्बों के नीचे पत्ती की निचली सतह पर सफेद अधोमुखी वृद्धि देखी जा सकती है। युवा समूह परिगलित हो जाते हैं और युवा संक्रमित मणि भूरे रंग के दिखाई देते हैं।

**चित्र 1. अ. पत्ती की निचली सतह पर सफेद अधोमुखी वृद्धि**

**चित्र 1. ब. पत्ती की ऊपरी सतह पर तैलीय दिखने वाले पीले गोलाकार धब्बे**

**चित्र 1. स. युवा संक्रमित मणि पर भूरे रंग की परत**

10 मिमी की वर्षा/सिंचाई के साथ 17 से 28 °से. का तापमान और 40% से अधिक सापेक्ष आर्द्रता संक्रमण का पक्ष लेती है। पत्ती या मिट्टी का गीलापन पौधों को रोग की ओर अग्रसित करता है। यदि लताओं में 2-3 दिन तक पानी बहता रहा तो रोग लगने की प्रबल संभावना रहती है। प्रकाश की अवधि के बाद एक नम, अंधेरे की स्थिति अधिकतम स्पोरुलेशन की समर्थक होती है।

आधारीय छंटाई के बाद डाउनी मिल्ड्यू के नियंत्रण के लिए प्रणालीगत कवकनाशी को प्रोत्साहित नहीं किया जाता है। फलत छंटाई के बाद 25 दिनों के दौरान और उच्च जोखिम वाले कवकनाशी के उपयोग के बाद कम जोखिम वाले प्रणालीगत कवकनाशी का उपयोग किया जाता है। एक फलत मौसम में कम जोखिम वाले प्रणालीगत कवकनाशी के अधिकतम 5 छिड़काव और उच्च जोखिम वाले कवकनाशी के 2 से 3 छिड़काव की सिफारिश की जाती है। मेंकोजेब 75डब्ल्यूपी के रोगनिरोधी उपयोग की सिफारिश की जाती है क्योंकि यह द्वितीयक हस्टोरिया के गठन और मायसेलियम के विकास को रोकता है। पोटेशियम साल्ट ऑफ फास्फोरस एसिड 4

ग्रा/ली और मेंकोजेब 75डब्ल्यूपी @ 2 ग्रा/ली का टैंक मिश्रण रोग पर अच्छा नियंत्रण देता है। कवकनाशी की वर्तमान सूची, उनकी प्रकृति, अनुशंसित मात्रा, फसल पूर्व अंतराल (पीएचआई) और यूरोपीय संघ अधिकतम अवशेष सीमा (एमआरएल) अवशेष निगरानी कार्यक्रम के अनुबंध 5 में दी गई है। नियमित रूप से अद्यतन सूची को https://nrcgrapes.icar.gov.in पर देखी जा सकता है। मौसम आधारित सलाह के माध्यम से चेतावनी प्रणाली स्प्रे की कम संख्या के साथ डाउनी मिल्ड्यू के प्रभावी नियंत्रण को सक्षम बनाती है।

## 2. पाउडरी मिल्ड्यू

पाउडरी मिल्ड्यू (कारक जीव *इरीसिफे निकेटर*) वानस्पतिक वृद्धि अवस्था के दौरान एक गंभीर समस्या है, खासकर जब बादल और आर्द्र स्थितियां बनी रहती हैं। सघन वितान, रोग विकास के लिए अनुकूल परिस्थितियों का निर्माण करता है। रोग वृद्धि के लिए इष्टतम तापमान 20-27 °से. होता है लेकिन कोई कवक विकास 6 °से. से नीचे या 32 °से. से ऊपर नहीं होता है। सापेक्षिक आर्द्रता 60% से अधिक अनुकूल और 30% से कम क्रमशः रोग के पक्ष में नहीं होती है।

पहले पाउडरी मिल्ड्यू के लक्षण अक्सर पत्तियों के नीचे की तरफ पाए जाते हैं। जैसे-जैसे रोग बढ़ता है, पत्तियों के ऊपरी किनारों पर भी लक्षण स्पष्ट हो जाते हैं। आमतौर पर रेचिस पर भूरे से सफेद रंग का पाउडर देखा जाता है और रेचिस के गंभीर संक्रमण के परिणामस्वरूप गुच्छे गिर सकते हैं। मणियाँ एक राख-धूसर रंग में बदल जाती हैं और जल्दी से बीजाणुओं में ढक जाती हैं जिससे उन्हें एक पाउडर का रूप मिलता है। प्रभावित मणियाँ सूख कर गिर जाती हैं।

संभोग प्रकारों के अभाव के कारण कवक का क्लिस्टोथेसिया भारत में नहीं पाया जाता है। नाइट्रोजन उर्वरक के अत्यधिक उपयोग से बचना चाहिए और प्रकाश संश्लेषण के लिए निष्क्रिय और गैर-असर वाली पत्तियों को हटाकर वितान को खुलापन देना चाहिए। पत्तियों को हटाने से वितान खुलता है और ये छिड़काव अनुप्रयोग की प्रभावकारिता में सुधार करने में मदद करता है। *बैसिलस सबटिलिस* @ 2 ग्रा/ली और *एम्पेलोमाइसेस क्विस्केलिस* @ 4-5 ग्रा/ली रोग पर अच्छा नियंत्रण देता है और इसे बरसात के मौसम के दौरान देना चाहिए जब आर्द्रता अधिक होती है । हालांकि पाउडरी मिल्ड्यू के विरुद्ध कई फफूंदनाशी का आकलन किया गया है, वर्तमान में भारत में अंगूर में उपयोग के लिए केवल निम्नलिखित पंजीकृत हैं। नियमित रूप से अद्यतन की गई सूची को https://nrcgrapes.icar.gov.in/ पर देखा जा सकता है।

चित्र 2. अ. गुच्छों के ऊपर पाउडरी मिल्ड्यू का संक्रमण

चित्र 2. ब. पत्तों पर पाउडरी मिल्ड्यू का संक्रमण

## 3. एन्थ्रेक्नोज

एन्थ्रेक्नोज (कारक जीव क्लीटोट्राइकम *ग्लोइओस्पोरिओइड्स*) गर्म, गीले और बादल वाले मौसम के दौरान होता है और नई वृद्धि को पूरी तरह से समाप्त कर सकता है, ओज, फल गिरने, उपज और गुणवत्ता को कम कर सकता है। यह रोग मुख्य रूप से वानस्पतिक वृद्धि के दौरान मानसून में मौसम के अनुरूप होने से होता है।

पत्तियों पर छोटे, पीले धब्बे दिखाई देते हैं, जो गोलाकार, भूरे रंग के घावों में बदल जाते हैं। पत्ती पर कई घाव बन जाते हैं और मृत ऊतक केंद्र में छेद पैदा करने वाले धब्बों को छोड़ देते हैं, जो एन्थ्रेक्नोज का एक विशिष्ट लक्षण है जिसे शॉट होल कहा जाता है,

संक्रमण के देर वाली अवस्था पर घाव में दरार दिखाई दे सकती है और यदि संक्रमण तने के आधार पर है तो तना दरार के बाद टूट सकता है।

रोग को नियंत्रित करने के लिए एंथ्रेक्नोज घावों वाली सभी टहनियों को छंटाई के समय हटा देना चाहिए। एन्थ्रेक्नोज के खिलाफ कई कवकनाशी का आकलन किया गया है, वर्तमान में भारत में अंगूर में उपयोग के लिए केवल निम्नलिखित पंजीकृत हैं। नियमित रूप से अद्यतन की गई सूची को https://nrcgrapes.icar.gov.in/ पर देखा जा सकता है।

चित्र 3. अ. एन्थ्रेक्नोज की वजह से पत्तों पर छोटे पिले डब्बे

चित्र 3. ब. एन्थ्रेक्नोज की वजह से शॉट होल के लक्षण

## 4. रस्ट

रस्ट (कारक जीव *फेकोस्पोरा यूविटिस*) जुलाई–अगस्त और जनवरी–फरवरी के दौरान गंभीर पतझड़ का कारण बन सकता है, जो आमतौर पर विरेजन के साथ मेल खाता है और इस प्रकार मणि के परिपक्वन तथा वृद्धि को बाधित करता है। खाने के अंगूर के लिए मूलवृंत के रूप में डॉगरिज की शुरूआत और अपनाने के बाद, डॉगरिज मूलवृंत पौधों पर रस्ट देखी गई और संक्रमित डॉगरिज पौधों से इसे सांकुर पौधों में प्रसारित होते देखा गया। इस प्रकार, हाल के वर्षों में महाराष्ट्र में थॉमसन सीडलैस और इसके क्लोनों पर सितंबर–अक्टूबर के दौरान यानि मानसून अवधि के अंत में भी रस्ट देखी जा रही है।

रोग के लक्षण परिपक्व पत्तियों की निचली सतह पर मौजूद कई पीले–नारंगी रंग के दाने हैं। कभी–कभी ये फुंसी पेटीओल्स, युवा टहनियों और रेचिस पर भी मौजूद होते हैं। कभी–कभी पत्ती की ऊपरी सतह पर यूरीडियल पस्ट्यूल के अनुरूप भूरे रंग के परिगलित धब्बे दिखाई देते हैं। गंभीर संक्रमण में पूरे पत्ते का क्षेत्र इन फलने वाले पिंडों से आच्छादित हो सकता है और पत्तियां गिर जाती हैं।

कॉपर आधारित कवकनाशी उदाहरण बोर्डो मिश्रण, कॉपर हाइड्रॉक्साइड या कॉपर ऑक्सी–क्लोराइड या क्लोरोथेलोनिल रोग पर प्रभावी नियंत्रण प्रदान करते हैं। ट्राईजोल कवकनाशी के उपचारात्मक अनुप्रयोगों ने भी रोग पर अच्छा नियंत्रण दिखाया हैं।

## 5. जीवाणु तुषार

जीवाणु तुषार (कारक जीव *ज़ेन्थोमोनास सिट्री पीवी विटिकोला*) गीले और गर्म मौसम के दौरान लता के सभी हवाई भागों पर होता है। निचली सतह पर पानी से भीगे हुए छोटे–छोटे घाव दिखाई देते हैं, जो बड़े होकर कोणीय और कैंसरयुक्त हो जाते हैं। बौनापन, टूटना और अंकुरों का अनियमित विकास संक्रमण की उन्नत अवस्था में देखा जाता है। हाल के अध्ययनों से पता चलता है कि मेंकोजेब 75 डब्ल्यूपी @ 2–2.5 ग्रा/ली का स्प्रे बीमारी पर अच्छा नियंत्रण देता है। कासुगामाइसिन 5% कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 45% डब्ल्यूपी @ 750 ग्रा/हेक्टेयर भी रोगज़नक़ के खिलाफ दर्ज किया गया है।

❋❋❋

# अंगूर के बागों में कीट प्रबंधन

**डॉ. दीपेन्द्र सिंह यादव**
**वरिष्ठ वैज्ञानिक (कृषि कीट विज्ञान)**

प्रायद्वीपीय भारत में अंगूर की बेल के प्रमुख कीटों में थ्रिप्स, लीफहॉपर, मिलीबग, तना छेदक, फ्लीया बीटल, कैटरपिलर और लाल मकड़ी माइट बहुत महत्वपूर्ण हैं और लगभग हर साल अंगूर को काफी नुकसान पहुंचाते हैं। इसके अलावा, स्टेम गर्डलर बीटल भी नए अंगूर के बागों का एक सामयिक कीट है। बरसात के मौसम के दौरान, घोंघा कभी-कभी अंगूर के बागों में भी दिखाई दे सकता है और अंगूर की पत्तियों और अंतर-पंक्ति स्थानों में लगाए गए हरी खाद की फसल को नुकसान पहुंचा सकता है। कीट प्रबंधन हस्तक्षेपों पर निर्णय लेने से पहले, उनके जीव विज्ञान का ज्ञान जिसमें जीवन चक्र के प्रमुख चरण, पहचान की विशेषताएं, लक्षण और उनके नुकसान की प्रकृति शामिल है, बहुत महत्वपूर्ण है।

## 1 थ्रिप्स

थ्रिप्स चूसने वाले कीट हैं जो अंगूर की लता पर जमीन से ऊपर के सभी रसीले और कोमल हिस्सों को खाना पसंद करते हैं, जैसे युवा पत्तियां, पत्ती की नोक, पत्ती की नसें, तना, अंकुर, फूल आने से पहले का गुच्छा, गुच्छे के डंठल, फूल, रेचिस और युवा मणि। यह कीट अधिक तापमान और कम सापेक्ष आर्द्रता के साथ गर्म, उज्ज्वल सूरज की रोशनी को पसंद करता है। थ्रिप्स अंगूर के बगीचे में बहुत आसानी से फैल जाते हैं क्योंकि वे बहुत सक्रिय कीड़े हैं। मुख्य रूप से दो थ्रिप्स प्रजातियाँ, अर्थात् *स्किरटोथ्रिप्स डॉर्सालिस* (चित्र 1) और *रिपिफोरोथ्रिप्स क्रुएंटेटस* (चित्र 2) प्रायद्वीपीय भारत में अंगूर को नुकसान पहुँचाती हैं। तीसरी थ्रिप्स प्रजाति, *रेटिथ्रिप्स सिरिएकस* भी अंगूर की लताओं पर पाई जाती है, हालाँकि, यह केवल पुरानी पत्तियों पर ही रहती है और मणि, फूलों या पत्तियों को कोई आर्थिक नुकसान नहीं पहुँचाती है। रेटिथ्रिप्स का निम्फल चरण लाल रंग का होता है और किसान अक्सर इसे लाल मकड़ी माइट समझ लेते हैं, इसलिए सही पहचान महत्वपूर्ण है।

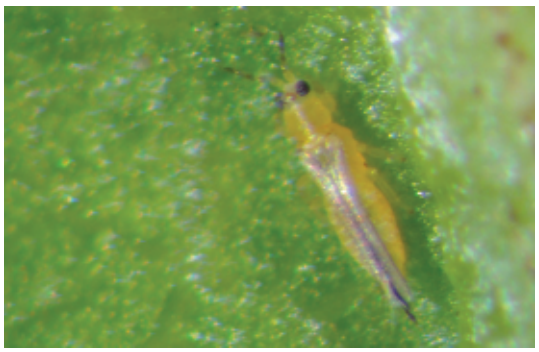

चित्र 1. *स्किरटोथ्रिप्स डॉर्सालिस*

चित्र 2. *रिपिफोरोथ्रिप्स क्रुएंटेटस*

चित्र 3. थ्रिप्स क्षति के कारण पत्ती का सिकुड़ना

चित्र 4. थ्रिप्स से गुच्छों का नुकसान

शिशु और वयस्क दोनों ही बेल का रस चूसते हैं, जिसके परिणामस्वरूप नई पत्तियाँ मुड़ जाती हैं और सिकुड़ जाती हैं (चित्र 3)। आधारीय छंटाई के बाद नुकसान मुख्य रूप से बेल के वानस्पतिक भागों तक ही सीमित होता है, लेकिन फलत छंटाई के बाद, वानस्पतिक भागों पर नुकसान के अलावा, वे फूल आने से पहले के गुच्छों, फूलों और युवा मणियों को भी नुकसान पहुंचाते हैं। फूल आने से पहले के चरण में, थ्रिप्स क्षति से मणि पर नेक्रोटिक धब्बे बन सकते हैं और अगर समय पर नियंत्रित नहीं किया गया तो पूरा गुच्छा मर सकता है। मणि स्थापन चरण में थ्रिप्स फूलों के अंडाशय से रस चूसते हैं, जिससे फूल झड़ जाते हैं और उपज में कमी आ सकती है। यह मात्रा की दृष्टि से हानि है; हालाँकि गुणवत्ता की दृष्टि से हानि भी बहुत गंभीर है क्योंकि थ्रिप्स द्वारा युवा मणियों को खुरचने और चूसने से मणि की सतह पर भूरे रंग का जाल जैसा दिखने लगता है जिसे बेरी स्कारिंग कहा जाता है (चित्र 4)। इसलिए, नई फ्लश उद्भव अवस्था, फूल आने से पहले, फूल आना, मणि स्थापन और प्रारंभिक मणि विकास चरण, थ्रिप्स द्वारा क्षति के लिए महत्वपूर्ण चरण हैं।

थ्रिप्स के प्रबंधन के लिए कुछ बिंदु हैं जिन पर विचार किया जाना चाहिए। थ्रिप्स के प्रभावी प्रबंधन के लिए नियमित निगरानी और समय पर प्रबंधन हस्तक्षेप बहुत महत्वपूर्ण हैं। थ्रिप्स की आबादी पर नजर रखने के लिए, सफेद कागज पर अंगूरलता प्ररोह को टैप करें और कागज पर गिरे थ्रिप्स की संख्या गिनें। यह देखा गया कि फलत छंटाई मौसम के दौरान, सुबह या शाम के घंटों की तुलना में दोपहर के समय वितान पर थ्रिप्स की संख्या अधिक पाई जाती है। इसलिए, थ्रिप्स की निगरानी दोपहर के समय की जानी चाहिए। कीटनाशकों के छिड़काव के समय का थ्रिप्स के विरुद्ध कीटनाशकों की प्रभावकारिता पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है।

कभी-कभी ऐसी स्थिति हो सकती है जब थ्रिप्स की आबादी उल्लेखनीय रूप से उच्च स्तर तक पहुंच जाती है, जैसे जब प्ररोह को सफेद कागज पर टैप किया जाता है, तो प्रति शूट 40 से अधिक थ्रिप्स देखे जा सकते हैं। ऐसी स्थितियों में, प्रभावी कीटनाशक का एक स्प्रे थ्रिप्स की आबादी को नियंत्रण में लाने के लिए पर्याप्त नहीं हो सकता है। इसलिए, बीच में एक दिन के अंतराल पर दो कीटनाशक अनुप्रयोग दिए जा सकते हैं। एक ही क्रिया विधि वाले कीटनाशकों का बार-बार प्रयोग नहीं किया जाना चाहिए और कीटनाशकों के विरुद्ध थ्रिप्स में प्रतिरोध के विकास से बचने के लिए विभिन्न क्रिया विधि वाले कीटनाशकों का उपयोग किया जाना चाहिए। थ्रिप्स के विरुद्ध उपयोग के लिए अनुशंसित अधिकांश कीटनाशकों को वांछनीय प्रभावकारिता प्रदान करने में आम तौर पर 2-3 दिनों का समय लगता है, अतः, छिड़काव किए गए कीटनाशक के प्रभाव को देखने के लिए 2-3 दिनों तक इंतजार करने की सलाह दी जाती है। हालाँकि, छिड़काव के एक दिन बाद थ्रिप्स की आबादी में कुछ कमी देखी जा सकती है। यदि छिड़काव के अगले दिन थ्रिप्स की आबादी में कोई कमी नहीं आती है या थ्रिप्स की आबादी बढ़ जाती है तो इसका मतलब यह हो सकता है कि कीटनाशक का छिड़काव अप्रभावी था। ऐसे में प्रभावी कीटनाशक के छिड़काव के निर्णय पर विचार किया जाना चाहिये।

## 2 लीफहॉपर

लीफहॉपर, *अमरस्का बिगुट्टुला बिगुट्टुला* (चित्र 5) मुख्य रूप से महाराष्ट्र और कर्नाटक में अंगूर के बागों को मध्य सितंबर से मध्य दिसंबर महीनों के दौरान प्रभावित करता है और मध्य अक्टूबर से मध्य नवंबर महीनों के दौरान चरम पर होता है। इस उच्च आबादी के निर्माण का कारण अनुकूल मौसम की स्थिति, अधिकांश अंगूर के बागों की अतिसंवेदनशील अवस्था में उपस्थिति और मानसून अवधि के बाद खाद्य संसाधनों में कमी के कारण अन्य मेजबान पौधों से लीफहॉपर्स का अंगूर की ओर स्थानांतरित होना हो सकता है क्योंकि इस समय खरपतवार सूखने लगते हैं। लीफहॉपर की आबादी अंगूर के उन बागों में अधिक होती जिन अंगूरबागों में या इनसे से सटे खाली खेतों में भारी खरपतवार उगते हैं। इसलिए, अंगूर के बागों और आस-पास के क्षेत्रों को खरपतवार मुक्त रखा जाना चाहिए। फलत छंटाई के लगभग 40-50 दिन बाद तक अंगूर की लतायें लीफहॉपर क्षति के लिए अतिसंवेदनशील होती हैं। वे नई पत्तियों से रस चूसते हैं जिसके परिणामस्वरूप पत्तियां मुड़ जाती हैं (चित्र 6)। फलत छंटाई पश्चात मणि स्थापन के बाद अतिरिक्त प्ररोह वृद्धि को हटाने से लीफहॉपर की घटना को कम करने में मदद मिल सकती है।

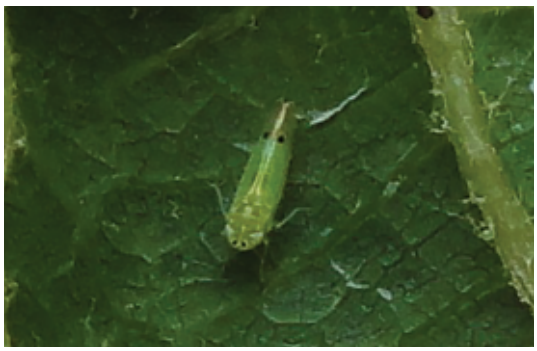

चित्र 5. लीफहॉपर

लीफहॉपर की आबादी की निगरानी करने के लिए, अंकुर की शाखा को धीरे से पकड़ें और प्रति शूट लीफहॉपर की संख्या गिनें। यह देखा गया कि फलत छंटाई मौसम के दौरान, सुबह या दिन की तुलना में शाम के समय और रात के दौरान वितान पर लीफहॉपर की संख्या अधिक पाई जाती है। इसलिए, थ्रिप्स की निगरानी देर शाम के समय की जानी चाहिए। लीफहॉपर प्रबंधन के लिए कीटनाशकों का छिड़काव देर शाम अंधेरे के दौरान किया जाना चाहिए। छिड़काव के समय ट्रैक्टर के पीछे एक उच्च वाट क्षमता का सफेद बल्ब लगाया जा सकता है। लीफहॉपर्स प्रकाश की ओर आकर्षित होते हैं और ट्रैक्टर के पीछे लाइट लगाने से लीफहॉपर्स सक्रिय हो जाएंगे और वे बेहतर प्रभावकारिता प्रदान करने वाले कीटनाशकों के सीधे संपर्क में आ जाएंगे।

**चित्र 6. लीफहॉपर संक्रमण के कारण क्षति के लक्षण**

लीफहॉपर्स को प्रबंधित करने का सबसे प्रभावी तरीका अंगूर के बागों के पास पराबैंगनी लाइट (काली रोशनी) ट्रैप स्थापित करना और उन्हें सितंबर से दिसंबर महीनों के दौरान हर रात 7 से 11 बजे के बीच चलाना चाहिये। इस बात का ध्यान रखा जाय कि अंगूर के बगीचों के अंदर लाइट ट्रैप न लगाया जाय, अन्यथा ट्रैप के आसपास के पौधों को कीट से अधिक नुकसान हो सकता है। ऐसा इसलिए है क्योंकि सभी आकर्षित कीड़े फंसकर मर नहीं पायेंगे। किसी भी उच्च वाट क्षमता वाले सफेद प्रकाश बल्ब और एक प्लास्टिक टब का उपयोग करके घर पर भी लाइट ट्रैप बनाया जा सकता है। इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि बल्ब ज्यादा गर्म न हो, नहीं तो कीड़े उसके पास नहीं आयेंगे। टब को रोशनी के नीचे रखें और इसे आधे तक पानी से भरें और आकर्षित कीड़ों को मारने के लिए पानी की सतह पर मिट्टी का तेल या कोई संपर्क कीटनाशक डालें। स्थापित किए जाने वाले ट्रैपों की संख्या प्रकाश बल्ब की चमक क्षमता पर निर्भर करती है।

## 3 मिलीबग

गुलाबी मिलीबग, *मैकोनेलिकोकस हिर्सुटस* (चित्र 7) प्रायद्वीपीय भारत में अंगूर को प्रभावित करने वाली प्रमुख मिलीबग प्रजाति है। वयस्क और शिशु दोनों ही पौधे के कोमल हिस्सों से रस चूसते हैं। फलत छंटाई के समय, अधिकांश मिलीबग मुख्य तना और वितान की छाल के नीचे छिपे रहते हैं। नए फ्लश उद्भव चरण के दौरान, विशेष रूप से फलत छंटाई के बाद, मिलीबग के खाने से बढ़ती हुई टहनी मुड़ जाती है और विकृत हो जाती है और इस तरह इसकी आगे की वृद्धि रुक जाती है। विरेजन चरण के दौरान, मिलीबग मुख्य तने, वितान और अंकुरों से विकासशील मणियों की ओर चले जाते हैं और भारी मात्रा में हनीड्यू पैदा करते हैं जिससे कालिखयुक्त और चिपचिपे गुच्छे बन जाते हैं (चित्र 8), जो फलों की गुणवत्ता और विपणन क्षमता को काफी कम कर देता है। इन कीटों के साथ चींटियों का जुड़ाव समस्या को और बढ़ा देगा क्योंकि वे प्राकृतिक शत्रुओं से बचाने के अलावा कीटों को एक लता से दूसरी लता में आसानी से स्थानांतरित होने में मदद करते हैं।

**चित्र 7. गुलाबी मिलीबग**

पारिस्थितिकी तंत्र में असंतुलन के कारण मिलीबग की संख्या में वृद्धि होती है। एक संतुलित कृषि-पारिस्थितिकी तंत्र में, मिलीबग आबादी को आमतौर पर उनके प्राकृतिक दुश्मनों द्वारा नियंत्रण में रखा जा सकता है। अंगूर में दो छंटाई और व्यापक स्पेक्ट्रम कीटनाशकों का उपयोग प्राकृतिक दुश्मन गतिविधि को कम करता है और संतुलन को बिगाड़ता है। महाराष्ट्र, कर्नाटक, तेलंगाना और आंध्र प्रदेश जैसे अर्धशुष्क उष्णकटिबंधीय अंगूर उगाने वाले क्षेत्रों में फलन सुनिश्चित करने के लिए दो छंटाई की आवश्यकता प्रतीत

**चित्र 8. गुच्छों पर मिलीबग और हनीड्यू**

होती है, लेकिन व्यापक स्पेक्ट्रम कीटनाशकों के उपयोग से बचकर, प्राकृतिक शत्रुओं को संरक्षित किया जा सकता है और कीटों की आबादी को स्वाभाविक रूप से नियंत्रण में रखा जा सकता है, जो अंततः कम कीटनाशक अनुप्रयोगों और कम अवशेषों का पता लगने का कारण बन सकता है।

ब्रॉड-स्पेक्ट्रम कीटनाशकों जैसे फ़िप्रोनिल, लैम्ब्डा साइहलोथ्रिन और इमिडाक्लोप्रिड का उपयोग केवल संयमित रूप से किया जाना चाहिए और जब प्राकृतिक शत्रु गतिविधियाँ अधिक हों तो इनसे पूरी तरह बचना चाहिए। उदाहरण के लिए, बरसात के मौसम में उच्च आर्द्रता की स्थिति के कारण *एनागाइरस* और *स्किम्नस* जैसे मिलीबग के प्राकृतिक शत्रुओं की संख्या में वृद्धि हो जाती हैं और मिलीबग को प्राकृतिक रूप से नियंत्रित करते हैं। इसलिए इस दौरान ऐसे रसायनों के इस्तेमाल से बचना चाहिए। वैकल्पिक रूप से, एंटोमोजेनस कवक जैसे *मेटारिज़ियम*, *लेकेनिसिलियम* और *ब्यूवेरिया* का उपयोग किया जा सकता है। इन कवकों की स्थापना प्रचलित उच्च सापेक्ष आर्द्रता स्थितियों के कारण होती है। यदि बरसात के मौसम में क्लोरपाइरीफोस, कार्टाप हाइड्रोक्लोराइड, प्रोफेनोफोस इत्यादि जैसे व्यापक स्पेक्ट्रम कीटनाशकों के उपयोग से बचा जाता है तो आने वाले फल के मौसम के दौरान प्राकृतिक दुश्मन गतिविधि के कारण मिलीबग का संक्रमण कम होने की उम्मीद है। फलत छंटाई मौसम दौरान, लगभग हर 15 दिनों के अंतराल पर *ब्यूवेरिया*, *मेटारिज़ियम* और *लेकेनिसिलियम* के लगातार निवारक अनुप्रयोगों से मिलीबग की आबादी को कम करने में मदद मिलेगी। यदि मिलीबग को नियंत्रित करने के लिए कीटनाशक का उपयोग आवश्यक हो जाता है, तो बुप्रोफेज़िन (25 एससी 1.25 मिली/लीटर पानी) पसंदीदा विकल्प होना चाहिए क्योंकि यह प्राकृतिक दुश्मनों के लिए सुरक्षित है। प्रणालीगत रसायनों से मिट्टी की ड्रेनचिंग फायदेमंद है क्योंकि यह प्राकृतिक शत्रुओं के संरक्षण में मदद करती है, इसलिए इसे प्राथमिकता दी जानी चाहिए।

## 4 फ्लीया बीटल

*स्केलोडोंटा स्ट्रिगिकोलिस* (चित्र 9) भारत में अंगूर पर आक्रमण करने वाली फ्लीया बीटल की प्रमुख प्रजाति है। ये धात्विक भूरे रंग के भृंग हैं जिनके पृष्ठीय भाग पर काले धब्बे होते हैं। ये विशेष रूप से छंटाई के बाद लता पर कली स्फुटन की अवस्था के दौरान सक्रिय होते हैं। वयस्क, कीट की हानिकारक अवस्था होती है। वयस्क, युवा कलियों और पत्तियों को खा जाते हैं। परिणामस्वरूप प्ररोह की वृद्धि रुक जाती है। पत्तियों पर रैखिक और आयताकार आकार के छेद इस कीट द्वारा क्षति के विशिष्ट लक्षण हैं (चित्र 10)। फ्लीया बीटल युवा तनों, गुच्छों के डंठल और परिपक्व पत्तियों को भी खा सकते हैं। ये दिन के दौरान सूरज की रोशनी से दूर छिपे रहते हैं और रात के दौरान सक्रिय रूप से भोजन करते हैं। इसलिए, जब रात के समय छिड़काव किया जाता है तो फ्लीया बीटल प्रबंधन बेहतर होता है। फ्लीया बीटल ग्रब मिट्टी में देखे जाते हैं लेकिन कोई आर्थिक क्षति होने की सूचना नहीं मिली है।

**चित्र 9. फ्लीया बीटल**

## 5 कैटरपिलर

भारत की दो छँटाई एकल उपज अंगूर की खेती प्रणाली को नुकसान पहुंचाने वाली प्रमुख कैटरपिलर प्रजाति *स्पोडोप्टेरा लिटुरा* है (चित्र 11)। कभी-कभी, हॉर्नवॉर्म अंगूरों को भी संक्रमित करते हुए पाए जा सकते हैं। कैटरपिलर काटने और चबाने वाले प्रकार के कीड़े हैं और मुख्य रूप से अंगूर की लता में उगने वाली कलियों और पत्तियों को खाते हैं। जब भी वर्षा के कारण सापेक्ष आर्द्रता बढ़ती है, तो वे गंभीर कीट बन सकते हैं। अंगूर में सबसे अधिक क्षति कलियाँ फूटने की अवस्था में *एस. लिटुरा* से होती है। फलत छँटाई के ठीक बाद, अंगूर लता पर कोई वितान नहीं रहता है। इसलिए,

**चित्र 10. फ्लीया बीटल द्वारा पत्ती पर क्षति**

चित्र 11. स्पोडोप्टेरा लार्वा

*एस. लिटुरा* लार्वा दिन के समय तने की ढीली छाल के नीचे, पत्ती-कूड़े के नीचे मिट्टी में या जमीन में दरारों के अंदर छिपा रहता है। वे रात के समय बाहर आते हैं और भोजन करते हैं, इसलिए, अंगूर के बगीचे में उनकी उपस्थिति का पता नहीं चल पाता है और स्फुटन अवस्था के दौरान वे भारी नुकसान पहुंचा सकते हैं। वे स्फुटित कली को खा सकते हैं और फलदार केन उभरने में असफल हो जाती हैं, जिससे उपज प्रभावित होती है। कली उगने की अवस्था के दौरान रात में अंगूर के बागों का नियमित निरीक्षण करके उनकी आसानी से निगरानी की जा सकती है। इस स्तर पर, कीटनाशकों का प्रयोग आम तौर पर प्रभावी नहीं होता है और उन्हें प्रबंधित करने के लिए बार-बार कीटनाशकों के प्रयोग की आवश्यकता हो सकती है, इससे खेती की लागत भी बढ़ेगी। इस कीट के प्रबंधन का आर्थिक तरीका मुख्य तने और सहायक बांस को जमीन से लगभग 2-3 फीट की ऊंचाई पर पॉलीप्रोपाइलीन चिपकने वाली टेप (लगभग 2 इंच चौड़ाई) से लपेटना है। इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि टेप का चिपचिपा भाग तने की ओर हो और चमकदार फिसलन वाला भाग बाहर की ओर हो। *एस. लिटुरा* लार्वा जो रात के दौरान ट्रंक पर चढ़ने की कोशिश करते हैं, वे फिसलन भरी सतह के कारण चढ़ने में सक्षम नहीं होंगे और क्षति को बहुत प्रभावी ढंग से प्रबंधित किया जा सकता है। यदि अंगूर का बाग पुराना है और उसकी छाल ढीली है तो चिपकने वाला टेप लगाने से पहले ढीली छाल को हटा देना चाहिए अन्यथा लार्वा टेप के ऊपर की छाल के नीचे छिपा रहेगा। बरसात के मौसम में लाइट ट्रैप की स्थापना भी *एस. लिटुरा* कीट को नियंत्रित करने में बहुत प्रभावी है।

## 6 लाल मकड़ी माईट

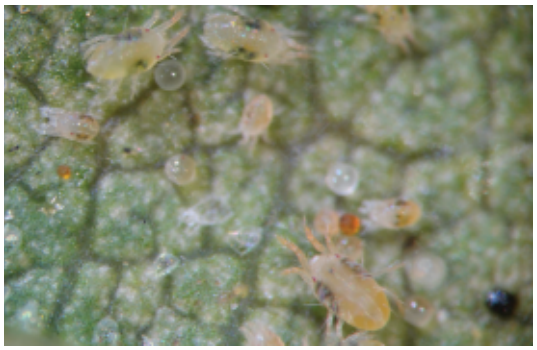

चित्र 12. लाल मकड़ी माईट के विभिन्न जीवन चरण

लाल मकड़ी माईट, *टेट्रानाइकस स्प.*। (चित्र 12) प्रायद्वीपीय भारत में अंगूर को नुकसान पहुंचाने वाला एक प्रमुख कीट है। ये चूसने वाले जन्तु हैं, उच्च तापमान और कम सापेक्ष आर्द्रता पसंद करते हैं। इनकी आबादी दिसंबर के दूसरे सप्ताह से बढ़ना शुरू हो जाती है और फरवरी-अप्रैल के दौरान चरम पर पहुंच जाती है। ये पुरानी पत्तियों को खाना पसंद करते हैं, लेकिन आबादी में वृद्धि के कारण उनका स्थानांतरण गुच्छों की ओर भी हो जाता है। शिशु और वयस्क दोनों ही नुकसान पहुंचाते हैं। उनके खाने से पत्तियां पीली और बदरंग हो जाती हैं (चित्र 13)। गंभीर संक्रमण के कारण, विशेष रूप से जनवरी से अप्रैल के दौरान बड़े पैमाने पर पत्तियां गिर सकती हैं, जिससे मणि में टीएसएस कम हो सकता है और परिणामस्वरूप खराब गुणवत्ता वाले फल प्राप्त हो सकते हैं। पत्ते झड़ने के कारण मणि सूर्य की रोशनी के सीधे संपर्क में आ जाती हैं, जिससे धूप की जलन होती है। तुड़ाई के करीब अंगूर के बागों में लाल मकड़ी माईट का संक्रमण अधिक हो जाता है, जिससे कीटनाशक अवशेषों में वृद्धि होने की संभावना होती है।

चित्र 13. लाल मकड़ी के संक्रमण के कारण पत्ती के नीचे जाल बनना

माईट प्रबंधन के लिए सबसे अच्छी रणनीति आबादी की वृद्धि को कम करने के लिए माईटनाशक का समय पर प्रयोग है। एक बार जब अधिकांश पत्तियों में माईट लगने के कारण क्लोरोसिस और जाला दिखाई देने लगता है तो माईट प्रबंधन मुश्किल हो जाता है। फलत छँटाई के 50 दिन से अधिक पुरानी वितान वाला कोई भी अंगूर का बाग आसानी से माईट के प्रकोप के लिए अतिसंवेदनशील हो सकता है। इसलिए, माईट की आबादी के निर्माण की निगरानी आवश्यक है। फरवरी के दौरान तापमान में वृद्धि के साथ, माईट की घटनाएं भी बढ़ जाती हैं और मार्च-अप्रैल महीनों के दौरान चरम स्तर पर पहुंच जाती हैं। यदि तापमान अधिक है तो प्रति एकड़ 1000 लीटर पानी की दर से साप्ताहिक पानी का

छिड़काव करने से पत्ती से धूल धोने में मदद मिल सकती है और पत्ती का तापमान कम हो सकता है जिससे माईट की आबादी को कम करने में मदद मिल सकती है। इसके अतिरिक्त, पानी के स्प्रे जालों को तोड़ने में भी मदद कर सकते हैं, जिससे कीटनाशक अनुप्रयोगों की दक्षता बढ़ जाती है। कई वैकल्पिक मेजबान पौधे जैसे पार्थेनियम खरपतवार आदि माईट के लिए प्रजनन स्थल के रूप में कार्य करते हैं, अतः उन्हें अंगूर के बागों के आसपास से हटा दिया जाना चाहिए। फलत छंटाई के 50 दिनों के बाद इमिडाक्लोप्रिड, मेथोमाइल, फिप्रोनिल आदि जैसे व्यापक स्पेक्ट्रम कीटनाशकों के उपयोग से बचना चाहिए क्योंकि वे माईट के प्राकृतिक दुश्मनों को मार सकते हैं और माईट की आबादी बढ़ा सकते हैं।

## 7 तना छेदक

*सेलोस्टेर्ना स्कैब्रेटर*, *स्ट्रोमेशियम बार्बेटम* और *दर्विषिया कदम्बी* प्रायद्वीपीय भारत में अंगूर की लताओं को प्रभावित करने वाली प्रमुख तना छेदक प्रजातियाँ हैं (चित्र 14, 15, 16)। तीनों तना छेदक प्रजातियाँ अंगूर के तने की सैपवुड और हार्टवुड को व्यापक नुकसान पहुंचाती हैं और लताओं की जीवन शक्ति और उत्पादकता दोनों को कम करती हैं।

चित्र 14. सेलोस्टेर्ना स्कैब्रेटर

### 7.1 *सेलोस्टेर्ना स्कैब्रेटर*

*सी. स्कैब्रेटर* लार्वा केवल जीवित पौधों को ही खा सकता है और अंदर गैलरी बना सकता है। इसके नुकसान के विशिष्ट लक्षण यह हैं कि यह छेद से कीटमल को हटा देता है जिसे पौधे के चारों ओर देखा जा सकता है और संक्रमित पौधे की पत्तियों में बाद के चरणों में अंतःशिरा क्लोरोसिस दिखाई देता है। *सी. स्कैब्रेटर* के लिए वयस्क उद्भव और अंडनिक्षेपण का समय बहुत लंबा होता है जो मानसून की शुरुआत के साथ शुरू होता है और लगभग 120–150 दिनों तक रहता है। अंडे तने के अंदर चीरा लगाकर और किसी पदार्थ से ढककर दिए जाते हैं जो कुछ समय बाद सख्त हो जाते हैं। इसलिए, प्रबंधन के लिए वयस्कों और अंडों को लक्षित करना संभव नहीं है। लार्वा अंदर भोजन करना शुरू कर देते हैं और गैलरी बनाते हैं। *सी. स्कैब्रेटर* को प्रबंधित करने का सबसे अच्छा तरीका संक्रमित पौधों को टैग करना, गैलरी को तोड़ना और लार्वा को हटाना है। *सी. स्कैब्रेटर* वयस्क की सबसे सक्रिय अवधि जून से सितंबर तक होती है (अगस्त में सबसे अधिक संख्या)। ये दिन के समय अंगूर के युवा तने की छाल खाते हुए आसानी से दिखाई देते हैं। इस अवधि के दौरान अंगूर के बागों में देखे जाने पर उन्हें आसानी से हाथ से पकड़ा जा सकता है और मार जा सकता है। वयस्कों के प्रबंधन के लिए किसी भी कीटनाशक का छिड़काव आर्थिक रूप से प्रभावी नहीं है। जब लार्वा अंडे से बाहर आता है और तने को खाता तथा अंगूर की लता से पानी जैसा स्राव होता है। ये लक्षण केवल सुबह के समय ही दिखाई देते हैं। इन विशेषताओं वाली अंगूर लताओं को अक्टूबर से दिसंबर तक आसानी से पहचाना जा सकता है। करीब से निरीक्षण करने पर थोड़ी मात्रा में कीटमल आसानी से देखा जा सकता है। लोहे के तार का उपयोग करके ग्रब को आसानी से हटाया और मारा जा सकता है। यदि इस समय लार्वा पर नियंत्रण न किया जाए तो लार्वा तने में गहराई तक जाकर नुकसान पहुंचाता है और पौधे की उपज 4–6 किलोग्राम प्रति पौधा तक कम हो जाती है। जमीन पर गिरे कीटमल के शुरुआती लक्षण संक्रमित पौधों पर देखे जा सकते हैं। दिसंबर से अप्रैल तक हर 10 दिन में अंगूर के बागों की निगरानी करें। जमीन पर गिरे हुए सभी अंगूर के पौधों को टैग करने के लिए

चित्र 15. स्ट्रोमेटियम बारबेटम

चित्र 16. डर्विशिया कदंबि

रिबन का उपयोग करें। जमीन पर गिरे हुए कीटमल को हटा दें और दो दिनों के बाद ताजे कीटमल हेतु इसका निरीक्षण करें और ठीक ऊपर के छेद को सक्रिय छिद्र के रूप में चिह्नित करें। इसके अतिरिक्त, सुबह के समय छिद्रों के पास गीले कीटमल वाले छिद्रों को भी सक्रिय छिद्रों के रूप में चिह्नित किया जा सकता है। सक्रिय छेद को चौड़ा करें और कैंची या पेचकस और हथौड़े का उपयोग करके गैलरी की दिशा की ओर तने को तब तक फाड़ें जब तक कि *सेलोस्टेर्ना* ग्रब दिखाई न दे। ग्रब निकालें और उन्हें मार दें। उपचार के लिए तने को जूट की सुतली की रस्सी से बांधें।

## 7.2 *स्ट्रोमेशियम बार्बेटम*

तना छेदक की *एस. बार्बेटम* प्रजाति 6–7 वर्ष या उससे अधिक पुराने अंगूर के बागों का कीट है। इस प्रजाति के ग्रब तने के अंदर भोजन करते हैं और तने की लकड़ी को दीमक की तरह पाउडर में बदल देते हैं। मुख्य रूप से यह मृत लकड़ी का कीट है, इसलिए यह पुराने अंगूर के बागों को पसंद करता है जिनमें मृत लकड़ी का निर्माण होता है। तना छेदक *स्ट्रोमेशियम बार्बेटम* के वयस्क जून के पहले सप्ताह में उभरना शुरू हो सकते हैं और जून के मध्य तक अधिकांश वयस्क निकल आते हैं। हालाँकि, सितंबर तक तना छेदक वयस्कों की थोड़ी संख्या सामने आती रह सकती है।

अंगूर के बागों के बाहर लाइट ट्रैप की स्थापना तना छेदक वयस्कों के उद्भव की शुरुआत की निगरानी में सहायक होगी ताकि समय पर प्रबंधन किया जा सके। तना छेदक कीट के वयस्क अंगूर के तने और कॉरडोन की ढीली छाल के नीचे छिपे रहते हैं और अधिकांश अंडे भी इसी ढीली छाल के नीचे देते हैं। इसलिए, यदि मानसून की शुरुआत से ठीक पहले इस ढीली छाल को हटा दिया जाए, तो वयस्कों को अंगूर के बगीचे में छिपने और अंडे देने के लिए जगह नहीं मिलेगी और तना छेदक का संक्रमण कम हो जाएगा। इसके अलावा, ढीली छाल को हटाने से कीटनाशकों द्वारा उनके प्रबंधन के लिए मुख्य ट्रंक और कॉरडोन पर वयस्कों और अंडों, यदि कोई मौजूद हैं, को उजागर करने में मदद मिलेगी। नीम का तेल या नीम के बीज या पत्ती का अर्क या अंगूर के बगीचे में नीम की पत्तियों को लटकाना वयस्क *एस. बार्बेटम* के लिए विकर्षक के रूप में कार्य करता है।

लार्वा अवधि लगभग नौ महीने की होती है। इस प्रजाति से संक्रमित अंगूर के बागों में पौधे पर कोई बाहरी लक्षण दिखाई नहीं देता है। दिसंबर से मार्च महीनों के दौरान, जब लार्वा मृत सूखी लकड़ी को खा रहा होता है, तो पुराने अंगूर के बागों में खाने की आवाज़ सुनी जा सकती है। अधिक संक्रमण की स्थिति में एक ही पौधे में तना छेदक कीट के 100 से अधिक ग्रब पाए जा सकते हैं। दो से तीन साल के संक्रमण से अंगूर के बागों की उत्पादकता 50% तक कम हो सकती है। यह तना छेदक कीट आमतौर पर मार्च के दूसरे पखवाड़े से मई के मध्य तक कोषावस्था में बदल जाता है। कोषावस्था अवधि लगभग चार सप्ताह की होती है और वयस्क तने के अंदर रहेगा और मानसूनी बारिश शुरू होने का इंतजार करेगा।

## 7.3 *दर्विषिया कदम्बी*

*द. कदम्बी* के छोटे लार्वा जुलाई–अगस्त के महीनों में छाल के नीचे खाते हैं और बाद के इंस्टार तने के अंदर घुस जाते हैं और गैलरी बनाते हैं (चित्र 17)। *द. कदम्बी* के नियंत्रण के लिए, जब छोटी लार्वा ढीली छाल के नीचे खा रहे हों, तब नियमित निगरानी, ढीली छाल को हटाना और एंटोमोजेनस कवक *मेटारिज़ियम ब्रुनेनियम* से धोना प्रभावी होता है।

नोट: कीटनाशकों की अनुशंसित सूची के लिए कृपया अवशेष निगरानी कार्यक्रम का अनुबंध V देखें

**चित्र 17. *द. कदम्बी* लार्वा**

# अंगूर में तुड़ाई उपरांत प्रबंधन

**डॉ. अजय कुमार शर्मा**
**प्रधान वैज्ञानिक (बागवानी)**

भारत में अंगूर उत्पादन उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में बहुत लोकप्रिय हो रहा है। एक अनुमान के अनुसार वर्ष 2022-23 के दौरान 169 हजार हेक्टेयर क्षेत्र अंगूर के अधीन था और उत्पादन 3714 हजार टन था। महाराष्ट्र और कर्नाटक का अंगूर उत्पादन में एकाधिकार है और देश के कुल अंगूर उत्पादन में 95% का योगदान है। भारत ने अपनी स्थिति पर कब्जा कर लिया है और भारत से अंगूर का निर्यात बहुत तेजी से बढ़ रहा है। 2022-23 के अंगूर मौसम के दौरान, भारत ने लगभग 2,67,950 टन अंगूर का निर्यात किया है जो कुल अंगूर उत्पादन का लगभग 10.5% है। शेष बचे अंगूर को देश के भीतर ताजा खाने के रूप में खपत होती है और लगभग उत्पादन का 30% सूखे अंगूर (किशमिश) में परिवर्तित किया जाता है। सफेद बीज रहित किस्मों में, थॉमसन सीडलैस और इसके क्लोनल चयन जैसे; तास-ए-गणेश, सोनाका, सुपर सोनाका, माणिक चमन, इत्यादि का क्षेत्रफल के साथ-साथ उत्पादन में भी दबदबा है। साथ ही रंगीन अंगूर की किस्मों की मांग दिन-ब-दिन बढ़ती जा रही है। किशमिश चर्नी से कुछ स्वदेशी रूप से पहचाने गए क्लोनल चयन जैसे कृष्णा सीडलैस, सरिता सीडलैस, नाथ सीडलैस और नानासाहेब पर्पल सीडलैस और बाहर से लाए गई किस्में उदाहरण के रूप में रैड ग्लोब, फैंटासी सीडलैस, क्रिमसन सीडलैस और फ्लेम सीडलैस बड़े क्षेत्र में उगाई जा रही हैं और उपभोक्ता-वरीयता में बढ़ती प्रवृत्ति दिखा रही हैं। विदेशी बाजारों में बहुत विशिष्ट पेटेंट वाली अंगूर की किस्मों की मांग को पूरा करने के लिए, कुछ समूहों द्वारा कुछ किस्मों का पहले ही समावेशन किया जा चुका है और आंकलन अध्ययन प्रगति पर हैं।

## तुड़ाई हेतु परिपक्वता सूचकांक

चूंकि अंगूर गैर-क्लाइमैक्टरिक फल है, इसलिए जब वे पूरी तरह से पक जाते हैं तभी उन्हें तोड़ा जाना चाहिए क्योंकि तुड़ाई के बाद न तो गुच्छों के रंग और न ही स्वाद में सुधार होता है। तुड़ाई का समय, किस्म, फलत छंटाई का समय, जलवायु परिस्थितियों, टीएसएस, अम्लता और शर्करा अम्लता अनुपात द्वारा निर्धारित किया जाता है, यह इस बात पर निर्भर करता है कि उत्पाद की आपूर्ति देश के भीतर स्थानीय या दूर के बाजारों में की जाएगी अथवा निर्यात उद्देश्य के लिए की जायेगी। एगमार्क के तहत तय अंगूर के परिपक्वता मानकों में कहा गया है कि न्यूनतम टीएसएस 16 डिग्री ब्रिक्स और शर्करा अम्लता अनुपात 20:1 होना आवश्यक और इसका अनुपालन निर्यात और घरेलू बाजार में करना चाहिये। हालांकि मणि में शर्करा की मात्रा को उनके पकने के स्तर का संकेतक माना जाता है, शर्करा/अम्लता का अनुपात पकने का सही सूचकांक है, क्योंकि यह अनुपात मणि के स्वाद को इंगित करता है।

शारीरिक दिखावट को प्रमुख मानदंड माना जाता है जिसके तहत एक समान रंग के साथ गुच्छा और मणि का आकार महत्वपूर्ण है। रंगीन किस्मों में विशेष समान रंग का विकास पकने का एक विश्वसनीय सूचकांक है। सफेद किस्मों में निर्यात बाजार में एक समान हरा रंग पसंद किया जाता है। हरे रंग का भूसे या अम्बर रंग में परिवर्तन को पकने के चरण को इंगित करने के लिए प्रयोग में नहीं लिया जाना चाहिए क्योंकि अनावृत गुच्छे छायांकित गुच्छों की तुलना में कम परिपक्वता पर भी अधिक रंग परिवर्तन प्रदर्शित करते हैं। मणि की परिपक्वता के साथ ही डंठल का रंग भी बदल जाता है।

## तुड़ाई

गुणवत्ता की आवश्यकता को न्यूनतम रूप से पूरा करने वाले आकर्षक गुच्छों को ही तोड़ा जाना चाहिए। तुड़ाई कुशल कामगारों द्वारा नर्म दस्तानों को पहनकर और काटने के लिए नुकीली कैंचियों से की जानी चाहिए। कटाई, परिवहन, सफाई और पैकिंग के दौरान अंगूर की सावधानी से संभालना, चोट और घर्षण को रोकने के लिए बहुत आवश्यक है। गुच्छा को हमेशा तने/डंठल से पकड़ना चाहिए। अपरिष्कृत संभलाव के परिणामस्वरूप ब्लूम नष्ट हो जाता है (मणि की सतह पर मोम का पतला लेप) जिससे मणि सड़ने के लिए अतिसंवेदनशील हो जाती हैं।

मणि का तापमान 20° सेल्सियस से ऊपर जाने से पहले सुबह के समय गुच्छों की तुड़ाई की जानी चाहिए। तुड़ाई को 10 बजे तक बंद करने की सलाह दी जाती है अन्यथा छह घंटे के निर्धारित समय के भीतर पूर्व-शीतलन करके मणि का तापमान 4 डिग्री सेल्सियस

तक नहीं लाया जा सकता है। उच्च तापमान के दौरान तोड़े गए गुच्छों से शारीरिक वजन में अधिक कमी आती है और डंठल सूख जाता है। यदि तुड़ाई से ठीक पहले वर्षा हुई है, तो फलों को कम से कम 3–4 दिनों तक नहीं तोड़ा जाना चाहिए, क्योंकि मणि की सतह पर मौजूद मुक्त नमी से कवक संक्रमण हो सकता है।

## तुड़ाई की विधि

तुड़ाई करने से एक दिन पूर्व, टूटी हुई, विकृत, छोटे आकार की और विवर्णित मणियों को एक लंबी नाक वाली तेज कैंची का उपयोग करके, चयनित गुच्छों से उनके डंठल से काटकर हटा देना चाहिये। कैंची से अन्य मणि घायल न हो सकें, के लिए सावधानी बरती जानी चाहिए। सफाई, कटाई या काट–छाँट करते समय गुच्छों को कभी भी नग्न हथेली में नहीं रखना चाहिए। रबर के दस्ताने पहनकर गुच्छों को उनके डंठल से पकड़ना चाहिए। इस बात का ध्यान रखा जाना चाहिये कि मणि की सतह से 'ब्लूम' नामक महीन मोम की परत न मिटने पाये।

## गुच्छा संग्रह

कटे हुए गुच्छों को साफ छिद्रित प्लास्टिक की क्रेटों में धीरे से रखा जाना चाहिये और पैक–हाउस में स्थानांतरित होने तक लताओं की छाया में छोड़ दिया जाना चाहिए क्रेट की कुशनिंग के लिए साफ बबल शीट लगाई जानी चाहिए और अंगूरबाग की धूल के संदूषण से बचने के लिए जमीन पर फैले अखबारों पर क्रेट रखी जानी चाहिये। गुच्छों को इस तरह रखा जाता है कि उनके डंठल दूसरे गुच्छों की मणियों को नुकसान न पहुँचायें।

## छँटाई और ग्रेडिंग की आवश्यकता

घरेलू बाजार में उपज का अच्छा मूल्य प्राप्त करने के लिए अंगूर के गुच्छे की छंटाई और ग्रेडिंग बहुत आवश्यक है। ताजा अंगूर को एगमार्क मानकों के अनुसार ग्रेड देना आवश्यक है। एगमार्क के अनुसार अंगूर के तीन मानक हैं; एक्स्ट्रा क्लास, क्लास–I और क्लास–II ।

## घरेलू और निर्यात विपणन के लिए पैकेजिंग

ताजे अंगूरों को इस तरह से पैक किया जाना चाहिए कि परिवहन और हैंडलिंग के दौरान उत्पाद उपयुक्त रूप से सुरक्षित रहे। पैकेजिंग आमतौर पर नालीदार या ठोस फाइबर बोर्ड के डिब्बों में की जाती है। अंगूर को फटने से बचाने के लिए कार्टन के नीचे बबल पैड या सुरक्षात्मक लाइनर की एक परत रखी जाती है और इसके ऊपर एक पॉलीइथाइलीन लाइनिंग रखी जाती है।

इन तौले हुए ढेरों के गुच्छों को छोटे, पतले और साफ खाद्य ग्रेड पॉलीथीन पाउच में रखा जाता है। प्रत्येक पाउच में एक या अधिकतम दो गुच्छों का वजन 350 ग्राम से कम या 650 ग्राम से अधिक नहीं होता है। पाउच में 150 ग्राम से कम वजन का कोई गुच्छा नहीं रखा जाता है। इसके बाद अंगूरों को 4 °से. के तापमान पर पूर्व–शीतलन किया जाता है और फिर अंगूर के ऊपर शोषक टिशू पेपर में संलग्न सल्फर डाइऑक्साइड उत्पन्न करने वाला पैड रखा जाता है। इसके बाद इसे पॉलीइथाइलीन लाइनिंग से ढक दिया जाता है और बॉक्स को बंद कर दिया जाता है।

पैकिंग के दौरान इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि टूटने, फूटने या चोट लगने से फल को नुकसान न हो। एक क्रेट के भीतर बहु–परतों में पैकिंग करने से निचले गुच्छों की मणियों पर शीर्ष गुच्छों द्वारा लगाए गए दबाव के कारण डंठल से जुड़ाव कमजोर हो जाता है। ताजे अंगूरों को इस तरह से पैक किया जाना चाहिए कि उत्पाद को ठीक से संरक्षित किया जा सके। 'एक्स्ट्रा क्लास' के मामले में, गुच्छों को एक परत में पैक किया जाना चाहिए। पनेट पैकिंग भी मांग में है। पैक किए गए गुच्छों को आसानी से रेफ्रिजरेटर में रखा जा सकता है। थर्मोकोल बॉक्स में पैक करने पर मणियाँ अधिक समय तक ताजा बनी रहती हैं।

## भंडारण

### अ. पूर्व–शीतलन

क्षेत्र की गर्मी को कम करने के लिए पूर्व–शीतलन अवश्य किया जाना चाहिये। तोड़ी गई मणियों से खेत की गर्मी को तुरंत हटाना

अंगूर की ताजगी को लंबे समय तक बनाए रखने का सबसे अच्छा तरीका है। पैक हाउस में तापमान 18–20° सेल्सियस पर बनाए रखा जाना चाहिए और अंगूर को तुड़ाई से 4–6 घंटे के बाद पूर्व–शीतलन इकाइयों में ले जाया जाना चाहिए। पूर्व–शीतलन इकाइयों में छह से आठ घंटे के भीतर कटे हुए अंगूरों का तापमान 4° सेल्सियस से कम होना चाहिए। तापमान को कम करने में हुई देरी से अंगूर की गुणवत्ता में कमी आती है।

### ब. शीतगृह

पूर्व–शीतलन के पश्चात, दोहरे रिलीजिंग सल्फर डाइऑक्साइड पैड (ग्रेप गार्ड) को उनकी लेपित सतहों के साथ भरे हुए प्लास्टिक पाउच पर नीचे की ओर रखा जाता है और प्लास्टिक शीट लाइनिंग से ढक दिया जाता है। बक्से बंद कर दिए जाते हैं और ठंडे भंडारण कक्षों में स्थानांतरित कर दिए जाते हैं जहां तापमान और आर्द्रता क्रमशः 0°±0.5° सेल्सियस और 93±2% सापेक्षिक आर्द्रता बनाए रखी जाती है। 0° सेल्सियस का तापमान और 95% की आर्द्रता ताजगी बनाए रखने और क्षय को रोकने के लिए सर्वोत्तम हैं। भंडारण और पारगमन के दौरान तापमान और आर्द्रता को सख्ती से बनाए रखने के लिए देखभाल की जानी चाहिए।

❄❄❄

# निर्यात योग्य अंगूर के लिए कीटनाशक अवशेष निगरानी योजना

**डॉ. कौशिक बॅनर्जी**
**निदेशक**

कीटनाशक आवश्यक कृषि आदान हैं। फसलों के वांछित उत्पादन और उत्पादकता सुनिश्चित करने के लिए तुड़ाई पूर्व और पश्चात के स्तर पर उनके अनुप्रयोग आवश्यक हैं। एक बार जब खेत में कीटनाशक अनुप्रयोगित किया जाता है, तो अनुप्रयोगित की गई मात्रा का एक हिस्सा काटी हुई फसल में रह सकता है, जिसे कीटनाशक अवशेष के रूप में नामित किया गया है।

## कृषि रसायन अवशेषों के स्रोत

### अंगूर में, कृषि रसायन अवशेष निम्नलिखित स्रोतों से उपस्थित हो सकते हैं

**प्रत्यक्ष स्रोत:** कृषि रसायन अधिकतर कार्बनिक यौगिक होते हैं जो भौतिक-रासायनिक घटक (जैसे सूरज की रोशनी, गर्मी, आर्द्रता, वायुमंडल में रासायनिक घटक, आदि) जिनका समय के साथ गैर-विषाक्त मेटाबोलाइट्स में ह्रास होता है और एंजाइमों, सूक्ष्मजीवीय उपापचय, आदि जैसे जैविक कारकों के साथ परस्पर क्रिया करते हैं। जब पौधों पर कृषि रसायन अनुप्रयोगित किए जाते हैं तो इसका एक अंश पौधे की सतह पर अधिशोषित हो जाता है, जो अंततः अवशोषित हो जाता है और पदार्थ मैट्रिक्स को दूषित करता है। कीटनाशक को गैर-पता लगाने योग्य स्तर या गैर-विषैले मेटाबोलाइट्स में गिरावट का समय यौगिक की रासायनिक प्रकृति और अधोगति कारकों के प्रति इसकी संवेदनशीलता के आधार पर भिन्न हो सकता है। यदि इस तरह के सुरक्षित प्रतीक्षा अवधि से पहले फसल की कटाई की जाती है, तो फल या सब्जी के नमूनों के विश्लेषण के परिणामस्वरूप एक या अधिक कृषि रसायन अवशेषों का पता लगाया जा सकता है। एक निश्चित सांद्रता से परे एक कृषि रसायन का अवशेष मानव और पशु स्वास्थ्य के लिए विषाक्त हो सकता है, और ऐसे दूषित खाद्य पदार्थों का उपभोग तीव्र और दीर्घ विषाक्तता के परिणाम में प्रदर्शित हो सकता है ।

**अप्रत्यक्ष स्रोत:** प्रत्यक्ष क्षेत्र अनुप्रयोगों के अलावा, कृषि रसायन के अवशेष भी विभिन्न अप्रत्यक्ष स्रोतों से भी पाये जा सकते हैं। इनमें आसपास के फसल खेतों से छिड़काव बहाव, दूषित मिट्टी और सिंचाई के पानी और दूषित कृषि-आदानों, जैसे खाद-उर्वरकों, इत्यादि जैसे कुछ नाम शामिल हैं ।

## अधिकतम अवशेष सीमा (एमआरएल) और उचित कृषि क्रियाओं के साथ इसका संबंध

एमआरएल भोजन में या पर एक कीटनाशक के अवशेषों की अनुज्ञप्त सांद्रता है, यह दोनों श्रेणियों को ध्यान में रखते उचित कृषि क्रियाओं (गैप) का पालन करके उपभोग हेतु प्रस्तुत भोजन पर वास्तव में शेष अवशेषों से व्युत्पन्न है। एमआरएल व्यापार मानक है जिसे सार्वजनिक स्वास्थ्य की चिंता, विशेष रूप से कमजोर उप जनसंख्या समूहों के संबंध में (बच्चों और अजंमे के रूप में) से निर्धारित किया जाता है। गैप इस तरह से पर्याप्त कीट नियंत्रण प्राप्त करने के लिए आवश्यक कीटनाशकों की न्यूनतम मात्रा के अनुप्रयोग को ध्यान में रखता है जो कि भोजन में अवशेषों की न्यूनतम संभव मात्रा है। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर एफएओ/डब्ल्यूएचओ का कोडेक्स एलिमेंटेरियस कमीशन एमआरएल का फैसला करता है। कीटनाशक अवशेषों पर कोडेक्स समिति (सीसीपीआर) का गठन संयुक्त राष्ट्र द्वारा भोजन में कीटनाशकों के लिए एमआरएल स्थापित करने के प्राथमिक अधिदेश के साथ किया गया था। कीटनाशकों का एमआरएल आमतौर पर फसल या खाद्य पदार्थ विशिष्ट होता है।

यद्यपि कोडेक्स एमआरएल (http://www.fao.org/fao-who-codexalimentarius/codex-texts/dbs/pestres/en/) सभी राष्ट्रों पर लागू होते हैं, लेकिन अलग-अलग देशों के अपने एमआरएल नियम भी हो सकते हैं। कृषि निर्यात के लिए यह आवश्यक है कि वस्तुओं को आयातक देशों के नवीनतम एमआरएल विनियमों का अनुपालन करना चाहिए, जो आमतौर पर उनकी सरकारी वेबसाइटों में उपलब्ध होते हैं। उदाहरण के लिए, यूरोपीय संघ (ईयू) द्वारा निर्धारित एमआरएल का अनुपालन यूरोपीय संघ के किसी भी सदस्य देश को भारत से फल और सब्जियों के निर्यात के लिए किया जाना चाहिए। इससे पहले यूरोपीय संघ के अलग-अलग देशों के पास अपने एमआरएल हुआ करते थे। सितंबर 2008 के बाद से, इन एमआरएल का यूरोपीय संघ के क्षेत्र

(https://ec.europa.eu/food/plant/pesticides/eu-pesticides-database/public/?event= homepage language=EN) के लिए सामंजस्य किया गया है। भारत में, एमआरएल की सिफारिश खाद्य सुरक्षा और मानक प्राधिकरण (एफएसएसएआई) द्वारा की जाती है। अवशेष आंकड़े उत्पन्न करती हैं और फसल विशिष्ट लेबल दावे या लेबल दावे के विस्तार के लिए केंद्रीय कीटनाशक कृषि रसायन बोर्ड और पंजीकरण समिति (सीआईबी एंड आरसी) को प्रस्तुत करती हैं। सीआईबी और आरसी द्वारा अवशेष रिपोर्ट एफएसएसएआई को अग्रेषित की जाती, जहां एक वैज्ञानिक पैनल उन आंकड़ों का मूल्यांकन करता है और आर्थिक सहयोग और विकास संगठन (ओईसीडी) द्वारा अनुशंसित एमआरएल–कैलकुलेटर (https://read.oecd-ilibrary.org/environment/mrl-calculator-users-guide-and-white-paperš9789264221567-enpage14) का उपयोग करके एमआरएल का अनुमान लगाता है। इन जोखिम मूल्यांकन आधारित एमआरएल (https://fssai.gov.in/ upload/uploadfiles/files/ Contaminants_ Regulations.pdf) का उपयोग देश में खाद्य सुरक्षा के मूल्यांकन के लिए किया जाता है। यदि जोखिम मूल्यांकन आधारित एमआरएल उपलब्ध नहीं है, तो ऐसे कृषि रसायन का पता 001 मिलीग्राम/किलोग्राम के डिफ़ॉल्ट मूल्य या परिमाणन की विश्लेषणात्मक सीमा (एलओक्यू) पर विनियमित किया जाता है।

अंगूर और किसी भी अन्य वस्तुओं में कृषिरसायनों का चरम अवशेष भार मुख्य रूप से इसकी पर्यावरण–स्थिरता और अपव्यय प्रतिमान पर निर्भर करता है। अपव्यय की दर फिर भी काफी हद तक फल वृद्धि चरण के दौरान अनुप्रयोगित डोज और सांद्रता, प्रारंभिक निक्षेप और मौजूदा पर्यावरणीय स्थितियों पर निर्भर करती है। शीतोष्ण जलवायु में कृषि रसायनों की जड़ता और अपव्यय प्रतिमान पर उपलब्ध आंकड़े उष्णकटिबंधीय पर्यावरण के लिए अच्छे नहीं हो सकते हैं क्योंकि उष्णकटिबंधीय पर्यावरण के तहत धूप और वायुमंडलीय तापमान की अवधि जैसे कारक अधिक प्रमुख हैं । इसी तरह एक फसल में कीटनाशक का अपव्यय प्रतिमान दूसरी फसल के समान नहीं हो सकता है। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए, आमतौर पर फसल विशिष्ट एमआरएल स्थापित करने के लिए पर्यवेक्षित बहु–स्थान परीक्षण किये जाते हैं। अपनी न्यूनतम प्रभावी डोज अनुप्रयोग के माध्यम से फसल पर होने वाली कीटनाशक के अधिकतम अवशेषों को प्राप्त करने के प्रयास किए जाते हैं। इस संबंध में, डोज आमतौर पर सबसे महत्वपूर्ण उपयोग स्थितियों, यानी अधिकतम संभावित कीट और रोग दबाव और प्रथाओं के संबंधित अनुशंसित पैकेज को ध्यान में रखते हुए तय की जाती है। इस संबंध में अपने मेटाबॉलिक मार्ग के साथ कीटनाशकों के विषाक्तता अध्ययनों के परिणामों पर भी विचार किया जाता है। इस तरह के एक सुरक्षा मूल्यांकन नमूने से आहार जोखिम की तुलना अधिकतम अनुमेय सेवन (एमपीआई) से की जाती है, जो एक औसत आबादी के शरीर के वजन के साथ स्वीकार्य दैनिक सेवन (एडीआई) को गुणा करके निर्धारित किया जाता है। अवशेषों के लिए एक उपभोक्ता के आहार जोखिम विशेष भोजन या वस्तुओं के समूह जहां एक ही रासायनिक लागू किया जाता है की औसत प्रति व्यक्ति दैनिक खपत के साथ अवशेष जमा की मात्रा गुणा द्वारा गणना की जाती है । भारत में, खाद्य उपभोग के आंकड़े राष्ट्रीय पोषण संस्थान के माध्यम से उपलब्ध हैं। यदि आहार अनावृत्ति एमपीआई से ऊपर पाया जाता है, तो खाद्य वस्तु मानव उपभोग के लिए अयोग्य होने का निर्णय लिया जाता है। इसके अलावा, लाभकारी और गैर–लक्षित जीवों पर उनके प्रभाव को निर्धारित करने के लिए सभी संभव मेटाबोलाइट्स का विषाक्तता से मूल्यांकन किया जाता है। ऐसा इसलिए है क्योंकि; कई मामलों में मेटाबोलाइट्स पैरेंट कंपाउंड की तुलना में अधिक जहरीले हो सकते हैं।

एमआरएल पर ज्ञान उत्पादकों और सरकार के फाइटो–सैनिटरी प्रमाण पत्र जारी करने वाले अधिकारियों के लिए एक मूल्यवान मार्गदर्शक के रूप में कार्य करता है। यह इस तथ्य के बारे में एक उत्पादक को अलार्म करता है कि यदि वह प्रथाओं के अनुशंसित पैकेज का पालन नहीं करता है, तो कीटनाशकों का अंतिम अवशेष स्तर स्वीकार्य एमआरएल से अधिक हो सकता है और उसे कानूनी खतरों के साथ वापस सेट विपणन का सामना करना पड़ सकता है । राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर नियामक निकाय इस जानकारी का उपयोग यह तय करने के लिए कर सकते हैं कि कोई वस्तु घरेलू और अंतर्राष्ट्रीय बाजारों में बिक्री के लिए उपयुक्त है अथवा नहीं।

## कटाई पूर्व अंतराल को बनाए रखना–कीटनाशक अवशेषों को कम करने के लिए व्यावहारिक दृष्टिकोण

एमआरएल के आधार पर कीटनाशकों के कटाई पूर्व अंतराल (पीएचआई) की गणना की जाती है। पीएचआई सुरक्षित प्रतीक्षा अवधि है, जो दिनों में न्यूनतम समय है जिसे कीटनाशक के अंतिम अनुप्रयोग और उपज की कटाई के बीच प्रदान किया जाना चाहिए ताकि

फसल कटाई पर इसका अवशेष स्तर एमआरएल से नीचे पहुंच सके। विभिन्न कृषि रसायनों के लिए पीएचआई पर उत्पन्न आँकड़े आमतौर पर अच्छी कृषि प्रथाओं के दिशा-निर्देशों में अनुशंसित होते हैं, जो आमतौर पर फसल विशिष्ट होते हैं, और फसलों में व्यापक रूप से अलग हो सकते हैं। कीटनाशक की पीएचआई का आकलन करने में आदर्श रूप से बहु-स्थान क्षेत्र परीक्षण शामिल होते हैं जिनमें गैप के दिशानिर्देशों का पालन करते हुए कीटनाशकों को लागू किया जाता है। प्रतिनिधि नमूनों को उपचार किए गए पौधों से एकत्र किया जाता है और अवशेषों के लिए विश्लेषण किया जाता है। नमूना अंतिम अनुप्रयोग के दिन से शुरू किया जाता है और फसल कटाई तक नियमित समय अंतराल पर जारी रखा जाता है। प्रत्येक नमूने में अवशेषों के सटीक अनुमान के बाद, अवशेष आंकड़ों को समय की प्रगति के साथ अपव्यय को सहसंबंधित करने के लिए सांख्यिकीय रूप से संसाधित किया जाता है। यद्यपि पहले ऑर्डर रेट काइनेटिक्स का उपयोग काफी हद तक पीएचआई का आकलन करने के लिए किया जाता है, कई मौकों पर, गैर-रैखिक काइनेटिक्स बेहतर लागू होते हैं (उदाहरण के लिए, पहला + पहला ऑर्डर मॉडल), जहां अवशेष गैर-रैखिक संबंधों के बाद समय के साथ नष्ट हो जाते हैं। ऐसे मौकों पर अपव्यय दर आमतौर पर शुरुआत में तेज होती है, जो समय बीतने के साथ धीमी हो जाती है। यह गिरावट के एक गैर-रैखिक प्रतिमान को इंगित करता है और अक्सर इसका तात्पर्य यह होता है कि अधिकांश कीटनाशकों के अपव्यय व्यवहार को समझने और पीएचआई की भविष्यवाणी करने के लिए पर्याप्त नहीं हो सकता है। भाकृअनुप-राअंअनुके में, अंगूर और अन्य बागवानी वस्तुओं में कई कृषि रसायन के अवशेष अपव्यय प्रतिमान का अध्ययन किया गया है, जिनकी सिफारिश उनकी अनुशंसित आवेदन दर और पीएचआई के संबंध में की गई है।

**अंगूर में अवशेष विश्लेषण – देश में स्थापित प्रणाली:** निर्यात उद्देश्य के लिए, 100% पंजीकृत खेतों से बेतरतीब ढंग से तैयार किए गए नमूनों का विश्लेषण मान्यता प्राप्त प्रयोगशालाओं द्वारा (आईएसओ/आईईसी 17025 के दिशानिर्देशों के अनुसार) भाकृअनुप-राअंअनुके द्वारा विकसित एक सुसंगत और मान्य परीक्षण प्रक्रिया का उपयोग करके किया जाता है। प्रयोगशालाओं का प्रदर्शन नियमित अंतराल पर किए गए भौतिक निरीक्षण, डेस्कटॉप ऑडिट और प्रवीणता परीक्षण दौरों में प्रदर्शन के माध्यम से एनआरएल द्वारा नियमित निगरानी द्वारा सुनिश्चित किया जाता है।

अवशेष विश्लेषण में जीसी-एमएस/एमएस और एलसी-एमएस/एमएस पर आधारित बहुअवशेष तकनीक द्वारा निष्कर्षण, सफाई और अंतिम अनुमान शामिल हैं। पिछले साल कृषि नमूनों के 100% में लगभग 240 रसायनों की एक सूची पर नजर रखी गई थी जो निर्यात के लिए पंजीकृत हैं। इस सूची का विस्तार उन सभी रसायनों को शामिल करने के लिए किया जा रहा है जो वर्तमान में सीआईबी एवं आरसी में पंजीकृत हैं। यदि परीक्षण परिणाम यूरोपीय संघ के एमआरएल से अधिक होते हैं, तो परीक्षण प्रयोगशाला तुरंत (24 घंटे के भीतर) इस मामले को एनआरएल के ध्यान में लाती है और इस जानकारी के आधार पर, एनआरएल निर्दिष्ट भूखंडों से अंगूर के निर्यात को रोकने के लिए 24 घंटे के भीतर आंतरिक चेतावनी जारी करता है। चूंकि अवशेषों की निगरानी तुड़ाई पूर्व स्तर पर की जाती है, इसलिए पीएचआई के बाद और फिर से नमूने पर फिर से नमूने की संभावना होती है, यदि नमूने एमआरएल का अनुपालन करते हैं, तो प्रयोगशाला तुरंत ग्रेपनेट के माध्यम से एनआरएल को सूचित करती है और एनआरएल चेतावनी को रद्द कर देता है। अलर्ट जारी करते समय या उसे रद्द करते हुए एनआरएल के अधिकारी क्रोमेटोग्राम और मास स्पेक्ट्रा के संबंध में परीक्षाण परिणामों की जांच करते हैं और यदि सब कुछ संतोषजनक होता है तो उसके बाद ही कार्रवाई शुरू की जाती है। अंगूर में अवशेषों की निगरानी की सफलता के साथ ही अनार, भिंडी आदि सहित अन्य बागवानी फसलों में भी इसी तरह की व्यवस्था लागू की जाती है।

## ग्रेपनेट – एक पूर्ण पता लगाने की क्षमता वाला सॉफ्टवेयर

ग्रेपनेट यूरोपीय संघ के देशों को निर्यात के लिए ताजा अंगूर की निगरानी के लिए देश में स्थापित पहला इंटरनेट आधारित अवशेष ट्रैसेबिलिटी सॉफ्टवेयर सिस्टम है । इस सॉफ्टवेयर को एपीडा द्वारा अंगूर उद्योग के सभी हितधारकों के इनपुट के साथ विकसित किया गया था। भारत में यह अपनी तरह की पहल है जिसने कीटनाशक अवशेषों की निगरानी, उत्पाद मानकीकरण प्राप्त करने और नमूना, परीक्षण, प्रमाणन और पैकिंग के विभिन्न चरणों के माध्यम से भारतीय उत्पादक के खेत से खुदरा बिक्री तक की पूर्ण पता लगाने की सुविधा प्रदान करने के लिए एक अंत से अंत तक प्रणाली है।

यह सॉफ्टवेयर प्रणाली अंगूर निर्यात की आपूर्ति श्रृंखला में सभी हितधारकों को एकीकृत करती है, नामत किसान, राज्य सरकार के बागवानी विभाग, अवशेष परीक्षण प्रयोगशालाएं, एगमार्क प्रमाणन विभाग, फाइटो-सैनिटरी विभाग, पैक हाउस, निर्यातक और एपीडा। प्रत्येक हितधारक के यूरोपीय संघ के लिए ताजे अंगूर के अवशेष मुक्त निर्यात के लिए प्रदर्शन करने हेतु कुछ कर्तव्य हैं। ग्रेपनेट को बहुत अच्छी तरह से विकसित किया गया है और आपूर्ति श्रृंखला में सभी हितधारकों द्वारा सक्रिय रूप से उपयोग किया गया है। भारत से यूरोपीय संघ तक 2007 के मौसम के दौरान से ताजा अंगूर की हर खेप पर इस सिस्टम के द्वारा नजर रखी जाती है। यह प्रणाली अपने हितधारकों को अंगूर निर्यात प्रक्रिया में शामिल निम्नलिखित गतिविधियों को पूरा करने की अनुमति देती है।

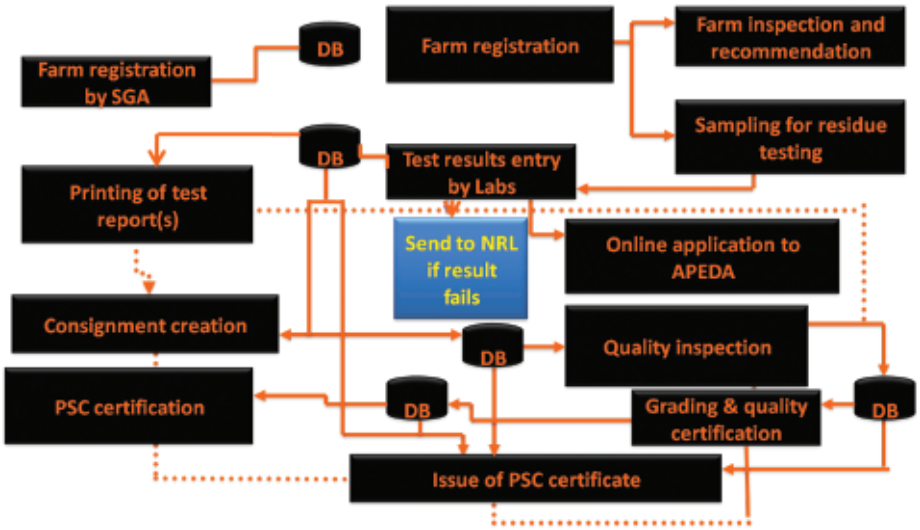


DB: Database, PSC: Phyto-sanitary certificate, SGA: State Govt. Authority

इस प्रणाली का अनुप्रयोग प्रक्रिया की जड़ से शुरू होता है; राज्य बागवानी विभागों के जिला मुख्यालयों पर किसानों के भूखंड स्तर तक का पंजीकरण और बाद में किसानों को पंजीकरण प्रमाण पत्र जारी करना। प्रत्येक किसान, जो सीधे निर्यात करने या किसी निर्यातक को ताजा अंगूर की आपूर्ति करना चाहता है, को अपने खेत और भूखंड (डों) का पंजीकरण प्राप्त करना आवश्यक है। प्लॉट स्तर तक प्रत्येक फार्म को एक रजिस्ट्रेशन नंबर दिया जाता है। फार्म/प्लॉट केवल निम्नलिखित कोड प्रारूप में एक अद्वितीय 12 अंकों की पंजीकरण संख्या आवंटित की जाती है:

| राज्यकोड | जिला कोड | तालुका कोड | उत्पाद कोड | फार्म कोड | प्लॉट कोड |
|---|---|---|---|---|---|
| ए. ए. | 01 | 01 | 001 | 0001 | 01 |

एक भूखंड 1 हेक्टेयर या उसके हिस्से का अधिकतम क्षेत्रफल होना चाहिए और 1.2 हेक्टेयर तक बढ़ाया जा सकता है। पंजीकरण प्रणाली राज्य बागवानी विभागों को खेतों में अपनी यात्राओं को पूरा करने पर अपने निरीक्षण विवरण को सारणीबद्ध करने की सुविधा प्रदान करती है, जिसके बाद वे कृषि रसायन अवशेषों की जांच के लिए नमूने लेने के लिए प्रयोगशालाओं को सिफारिश कर सकते हैं। किसान अपने उत्पाद के परीक्षण के लिए देश की किसी भी एपीडा मान्यता प्राप्त प्रयोगशालाओं से संपर्क कर सकते हैं।

प्रयोगशालाओं में प्रत्येक भूखंड से जांच के लिए निकाले गए नमूनों का ब्यौरा दर्ज किया जाता है और कृषि रसायनों के लिए कड़ी जांच की जाती है। यह प्रणाली स्वचालित रूप से हुए परीक्षण परिणामों से पता चलता है कि नमूना निर्दिष्ट देशों को निर्यात के लिए उत्तीर्ण करता है, और उनकी परीक्षण रिपोर्ट विकसित की जाती है। ये प्रयोगशालाएं दुनिया में सर्वश्रेष्ठ हैं, जो उच्च परिशुद्धता और अंशांकित उपकरणों से लैस हैं, और आईएसओ 17025 के अनुरूप हैं।

## निष्कर्ष

हालांकि अवशेष विश्लेषण पर पैसे खर्च होते हैं, यह कृषि उत्पादन में एक महत्वपूर्ण मूल्य वृद्धि करता है, विशेष रूप से अंगूर की तरह एक जिंस, जिन की खेती में अधिकांशत: कीटनाशकों का अनुप्रयोग किया जाता है। एक वाणिज्यिक उत्पाद जब अवशेष परीक्षण रिपोर्ट के साथ बेचा जाता है जो नहीं या नाममात्र (विषाक्त रूप से तुच्छ) अवशेषों के स्तर का संकेत देता है, तो यह उपभोक्ताओं में आत्मविश्वास की वृद्धि करता है और बेहतर मूल्य प्राप्त करने की सुविधा प्रदान करता है। इसके किसानों की आय बढ़ने और उनके जीवन स्तर में सुधार करने में मदद मिलती है । सूचना विस्फोट के आगमन के साथ, उपभोक्ता जागरूकता सुरक्षित भोजन के अधिकार के संबंध में बढ़ रही है। समाज में कोई भी व्यक्ति अपने पोषण हेतु लिए गए भोजन से होने वाले खतरे को बर्दाश्त करने के लिए तैयार नहीं है। दूसरी ओर, उष्णकटिबंधीय बेल्ट में होने के नाते हमारे पास कीट प्रबंधन में कृषि रसायन के उपयोग से बचने की विलासिता नहीं है। एक अच्छी फसल सुनिश्चित करने के लिए उद्देश्यपूर्ण रूप से कृषि रसायनों का उपयोग किया जाता है। यह अनुप्रयोग की डोज तथा समय है, जो सुरक्षित और असुरक्षित उपयोग को अलग करता है। यदि गैप और पीएचआई की सिफारिशों का ईमानदारी से पालन किया जाता है, तो अंगूर में कृषि रसायनों के अवशेष भार को कम करना निश्चित रूप से संभव है, जो बदले में उपभोक्ताओं और पर्यावरण के स्वास्थ्य के लिए सुरक्षा सुनिश्चित करेगा। अंगूर के माध्यम से अवशेष निगरानी प्रणाली का कार्यान्वयन पूरे देश में एक मॉडल प्रणाली के रूप में उभरा है और हॉर्टिकनेट की ट्रैक्टेबिलिटी सिस्टम के माध्यम से सभी बागवानी वस्तुओं को समय पैमाने पर कवर करने के लिए इसका विस्तार किया जा रहा है।

❋❋❋

# भाकृअनुप-राष्ट्रीय अंगूर अनुसंधान केन्द्र

डाक पेटी सं. 3, मांजरी फार्म डाक घर, सोलापुर मार्ग, पुणे – 412307

## ICAR-National Research Centre for Grapes

P. B. No. 3, Manjari Farm P. O. , Solapur Road, Pune – 412307

Tel: +91-20-2695-6000(EPABX), 2695-6002(Director's Office), Fax: +91-20-2695-6099

E-Mail: director.nrcg@icar.gov.in Website: https://nrcgrapes.icar.gov.in


## अनुबंध–5

(यह एक परिवर्तनीय दस्तावेज है)

दिनांक: 12 अक्टूबर, 2023

### अंगूर में उपयोग के लिए सीआईबी और आरसी लेबल दावे वाले रसायनों की सूची

| क्रमांक | प्रमुख रोग एवं कीटों के लिए अनुशंसित रसायन | रसायन की प्रकृति | सूत्रीकरण के आधार पर प्रमाण | ईयू एमआरएल (मिलीग्राम/किग्रा) | कटाई से पहले का अंतराल (पीएचआई दिनों में) |
|---|---|---|---|---|---|
| **I** | **डाउनी मिल्ड्यू** | | | | |
| 1.* | ऑमिसलब्रोम 17.7% एस सी डब्ल्यू/डब्ल्यू (20% एस सी डब्ल्यू/व्ही) | एन एस | 375 मिली/हे | 0.5 | 59 |
| 2.* | अजोक्सीस्ट्रोबिन 23 एस सी | एस | 494 मिली/हे | 3.0 | 7 |
| 3. | कॅप्टन 50 % डब्ल्यूपी | एन एस | 2500 ग्रा/हे | 0.03 | 70 |
| 4. | कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 50 डब्ल्यूपी | एन एस | 2.5 ग्रा/ली, 2.4 ग्रा/ली | 50.0 | 42 (फल लगने के बाद उपयोग करने से बचें) |
| 5. | कॉपर हाइड्राक्साईड 53.8 डीएफ | एन एस | 1.5 ग्रा/ली | 50.0 | 12 |
| 6. | साइजोफॅमिड 34.5% एस सी | एन एस | 200 मिली/हे | 2.0 | 50 |
| 7.* | डाइमेथोमॉर्फ 50% डब्ल्यूपी | एस | 0.50–0.75 ग्रा/ली | 3.0 | 34 |
| 8. | फोसेटील एएल 80% डब्लूपी | एस | 1.4–2.0 ग्रा/ली | 100.0 | 30 |
| 9.* | क्रेसॉक्सिम मिथाइल 44.3 एस.सी | एस | 600–700 मिली/हे | 1.5 | 30 |
| 10. | मेंकोजेब 75% डब्ल्यूपी | एन एस | 1.5–2.0 ग्रा/ली | 5.0 | 66 |
| 11.* | मैंडिप्रोपामिड 23.4% एस सी | एन एस | 0.8 मिली/ली | 2.0 | 5 |
| 12.* | मेटीराम 70% डब्ल्युजी | एन एस | 2000 ग्रा/हे | 5.0 | 66 |
| 13. | प्रोपिनेब 70% डब्ल्यूपी | एन एस | 3.0 ग्रा/ली | 0.05 | 75 (फल लगने के बाद उपयोग करने से बचें) |
| 14. | ॲमेटोक्ट्राडिन 27% + डाइमेथोमॉर्फ 20.27% एससी | एनएस+एस | 800–1000 मिली/हे | 6.0+3.0 | 34 |
| 15.* | अजोक्सीस्ट्रोबिन 8.3% + मेंकोजेब 66.7% डब्ल्युजी | एस+एन एस | 1500 ग्रा/हे | 3.0+5.0 | 66 |

| क्रमांक | प्रमुख रोग एवं कीटों के लिए अनुशंसित रसायन | रसायन की प्रकृति | सूत्रीकरण के आधार पर प्रमाण | ईयू एमआरएल (मिलीग्राम/किग्रा) | कटाई से पहले का अंतराल (पीएचआई दिनों में) |
|---|---|---|---|---|---|
| 16.* | अजोक्सीस्ट्रोबिन 11 % + टेबुकोनाज़ोल 18.3% डब्ल्यू/डब्ल्यू | एस+एस | 750 मिली/हे | 3.0+0.5 | 60 |
| 17. | बेनालाक्सिल-एम 4% + मेंकोजेब 65% डब्ल्युपी | एस+एन एस | 2750 ग्रा/हे | 0.7+5.0 | 66 |
| 18. | कॉपर सल्फेट 47.15% + मेंकोजेब 30% डब्ल्युजी | एन एस | 5000 ग्रा/हे | 50.0+5.0 | 66 |
| 19. | कॉपर सल्फेट पेंटाहाइड्रेट 23.99% एससी | एन एस | 2.5 मिली/ली | 50.0 | 30 |
| 20. | सिमोक्सानिल + मेंकोजेब 8 + 64 डब्ल्युपी | एस+एन एस | 2.0 ग्रा/ली | 0.05 + 5.0 | 66 |
| 21.* | डाइमेथोमॉर्फ 12% + पाइराक्लोस्ट्रोबिन 6.7% डब्ल्यूजी | एस+एस | 1500 ग्रा/हे | 3.0 + 0.3 | 55 |
| 22.* | फैमॉक्साडोन 16.6 % + सिमोक्सानिल 22.1% एससी | एस+एन एस | 500 मिली/हे | 2.0+0.05 | 55 |
| 23.* | फेनामिडोन + मेंकोजेब 10 + 50 डब्ल्यूजी | एस+एन एस | 2.5-3 ग्रा/ली | 0.01*+5.0 | 85 |
| 24.* | फेनामिडोन 4.44% + फोसेटाइल- ए एल 66.66% डब्लूडीजी | एस | 2000-2500 ग्रा/हे | 0.01+100 | 90 |
| 25. | फ्लुओपिकोलाइड 4.44% + फोसेटाइल- ए एल 66.67% डब्ल्यूजी | एस | 2.25-2.5 किग्रा/हे | 2.0+100 | 40 |
| 26.* | इप्रोवॅलीकार्ब 5.5% + प्रोपीनेब 61.25% डब्ल्यूपी | एस+एन एस | 2.25 ग्रा/ली | 2.0+0.05 | 75 |
| 27.* | क्रेसॉक्सिम मिथाइल 18% + मेंकोजेब 54% डब्ल्यूपी (72% डब्ल्यूपी) | एस+एन एस | 1500 ग्रा/हे | 1.5+5.0 | 66 |
| 28. | मेटालेक्जिल 8% + मेंकोजेब 64% डब्ल्यूपी | एस+एन एस | 2.5 ग्रा/ली | 2.0+5.0 | 66 |
| 29. | मेटालेक्जिल - एम + मेंकोजेब 4 + 64 डब्ल्यूपी | एस+एन एस | 2.5 ग्रा/ली | 2.0+5.0 | 66 |
| 30. | मेटीराम 44% + डाइमेथोमोर्फ 9% डब्लूजी | एन एस+एस | 2500 ग्रा/हे | 5.0+3.0 | 66 |
| 31. | ऑक्साथियापिप्रोलिन 3% + मैंडिप्रोपामिड 25% डब्ल्यू/व्ही (280 एससी) | एस+एन एस | 700 मिली/हे | 0.7+2.0 | 30 |
| 32.* | पाइराक्लोस्ट्रोबिन 5% + मेटिराम 55% 60 डब्ल्यूजी | एस+एन एस | 1.50-1.75 किग्रा/हे | 0.3+5.0 | 66 |

| क्रमांक | प्रमुख रोग एवं कीटों के लिए अनुशंसित रसायन | रसायन की प्रकृति | सूत्रीकरण के आधार पर प्रमाण | ईयू एमआरएल (मिलीग्राम/किग्रा) | कटाई से पहले का अंतराल (पीएचआई दिनों में) |
|---|---|---|---|---|---|
| **II** | **पाउडरी मिल्ड्यू** | | | | |
| 2r.* | अजोक्सीस्ट्रोबिन 23 एस सी | एस | 494 मिली/हे | 3.0 | 7 |
| 33. | ब्यूप्रिमेट 25% डब्ल्यू/व्ही (26.7% डब्ल्यू/डब्ल्यू/) एस सी | एस | 3.0 मिली/ली | 1.5 | 45 |
| 34. | साइफ्लुफेनामाइड 5% ईडब्ल्यू | एस | 500 मिली/हे | 0.2 | 50 |
| 35.* | डाइफेनकोनॅझोल 25 ईसी | एस | 0.50 मिली/ली | 3.0 | 45 |
| 36.* | फ्लुसीलाज़ोल 40 ई.सी | एस | 25 मिली/200ली | 0.01 | 60 |
| 37.* | हेक्जाकोनाजोल 5 ई.सी | एस | 1.0 मिली/ली. | 0.01 | 60 |
| 9r.* | क्रेसॉक्सिम मिथाइल 44.3 एस.सी | एस | 600-700 मिली/हे | 1.5 | 30 |
| 38. | मेप्टाइलडिनोकैप 35.7% ईसी | एन एस | 308.6-342.8 मिली/हे | 0.2 | 50 |
| 39. | मेट्राफेनोन 50% एससी | एस | 250 मिली/हे | 7.0 | 22 |
| 40.* | माइक्लोबूटानिल 10 डब्ल्यूपी | एस | 0.40 ग्रा/ली | 1.5 | 30 |
| 41.* | पेन्कोनाजोल 10 ई.सी | एस | 0.50 मिली/ली | 0.5 | 50 |
| 42. | पॉलीओक्सिन डी जिंक नमक 5% एससी | एस | 600 मिली/हे | 0.01 | 35 |
| 43. | सल्फर 40 एससी, 55.16 एससी, 80 डब्ल्यूपी, 80 डब्ल्यूडीजी, 85 डब्ल्यूपी | एन एस | 3.0 मिली, 3.0 मिली, 2.50 ग्रा, 1.87-2.50 ग्रा, 1.50-2.0 ग्रा/ली, क्रमश: | कोई एमआरएल आवश्यक नहीं | पीएचआई लागू नहीं है |
| 44.* | टेट्राकोनाज़ोल 3.8 ईडब्ल्यू | एस | 0.75 मिली/ली | 0.07 | 60 |
| 16a.* | अजोक्सीस्ट्रोबिन 11% + टेबुकोनाज़ोल 18.3% डब्ल्यू/डब्ल्यू | एस+एस | 750 मिली/हे | 3.0+0.50 | 60 |
| 45.* | बोस्केलिड 25.2% + पाइराक्लोस्ट्रोबिन 12.8% डब्ल्यू/डब्ल्यू डब्ल्यूजी | एस+एस | 500-600 ग्रा/हे | 5.0+0.3 | 55 |
| 46.* | फ्लुओपाइरम 200 + टेबुकोनाज़ोल 200 एससी | एस+एस | 0.563 मिली/ली | 2.0+0.5 | 60 |
| 47. | फ्लक्सापाइरोक्सैड 25% + पाइराक्लोस्ट्रोबिन 25% एससी | एस+एस | 200 मिली/हे | 3.0+0.3 | 60 |

| क्रमांक | प्रमुख रोग एवं कीटों के लिए अनुशंसित रसायन | रसायन की प्रकृति | सूत्रीकरण के आधार पर प्रमाण | ईयू एमआरएल (मिलीग्राम/किग्रा) | कटाई से पहले का अंतराल (पीएचआई दिनों में) |
|---|---|---|---|---|---|
| 48.* | फ्लक्सापाइरोक्सैड 75 ग्राम/लीटर + डिफेनोकोनाज़ोल 50 ग्राम/लीटर एससी | एस+एस | 800 मिली/हे | 3.0+3.0 | 45 |
| 49.* | टेबुकोनाज़ोल 50% + ट्राइफ्लोक्सीस्ट्रोबिन 25% डब्लूजी | एस+एस | 0.175 ग्रा/ली | 0.5+3.0 | 34 |
| **III** | **एन्थ्रेक्नोज** | | | | |
| 50. | कार्बेन्डाजिम 50 डब्लूपी, 46.27 एससी | एस | 1.0 ग्रा/ली, 1.0 मिली/ली | 0.30 | 50 |
| 4 अ. | कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 50 डब्लूपी | एन एस+एस | 2.5 ग्रा/ली, 2.40 ग्रा/ली | 50.0 | 42 (फल लगने के बाद उपयोग करने से बचें) |
| 13 अ. | प्रोपिनेब 70% डब्ल्यूपी | एन एस | 3.0 ग्रा/ली | 0.05 | 75 |
| 51. | थायोफैनेट मिथाइल 70 डब्ल्यूपी | एस | 0.71– 0.95 ग्रा/ली | 0.10 | 73 |
| 15 अ. | अजोक्सीस्ट्रोबिन 8.3% + मेंकोजेब 66.7% डब्ल्युजी | एस+एन एस | 1500 ग्रा/हे | 3.0+5.0 | 66 |
| 52. | कार्बेन्डाजिम 12% + मेंकोजेब 63% डब्ल्यूपी | एस+एन एस | 1500 ग्रा/हे | 0.30+5.0 | 66 |
| 18 अ. | कॉपर सल्फेट 47.15% + मेंकोजेब 30% डब्ल्यूडीजी | एनएस+ एनएस | 5000 ग्रा/हे | 50.0+5.0 | 66 |
| 46 अ. | फ्लुओपाइरम 200 + टेबुकोनाज़ोल 200 एससी | एस+एस | 0.563 मिली/ली | 2.0+0.5 | 60 |
| 53. | कासुगामाइसिन 5% + कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 45% डब्ल्यूपी | एस+एन एस | 750 ग्रा/हे | 0.01+50.0 | 70 (फूल आने के बाद उपयोग से बचना चाहिए) |
| 27 अ. | क्रेसॉक्सिम मिथाइल 18% + मेंकोजेब 54% डब्ल्यूपी (72% डब्ल्यूपी) | एस+एन एस | 1500 ग्रा/हे | 1.5+5.0 | 66 |
| **IV** | **जीवाणु करपा** | | | | |
| 53 अ. | कासुगामाइसिन 5% + कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 45% डब्ल्यूपी | एस+एन एस | 750 ग्रा/हे | 0.01*+50.0 | 70 (फूल आने के बाद उपयोग से बचना चाहिए) |

| क्रमांक | प्रमुख रोग एवं कीटों के लिए अनुशंसित रसायन | रसायन की प्रकृति | सूत्रीकरण के आधार पर प्रमाण | ईयू एमआरएल (मिलीग्राम/किग्रा) | कटाई से पहले का अंतराल (पीएचआई दिनों में) |
|---|---|---|---|---|---|
| **V** | **फ्लीया बीटल** | | | | |
| 54. | इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल | एस | 0.30-0.40 मिली/ली. | 0.7 | 70 (फूल आने से पहले और फूल आने की अवस्था के दौरान इमिडाक्लोप्रिड के उपयोग से बचना चाहिए) |
| 55. | लैम्ब्डा साइहेलोथ्रिन 4.9 सीएस | एन एस | 0.25-0.50 मिली/ली | 0.08 | 45 |
| **VI** | **थ्रिप्स** | | | | |
| 56. | साइनट्रानिलिप्रोल 10 ओडी | एस | 0.70 मिली/ली | 1.5 | 60 |
| 57. | इमामेक्टिन बेंजोएट 05 एसजी | एन एस | 0.22 ग्रा/ली | 0.04 | 30 |
| 58. | फिप्रोनिल 80 डब्ल्यूजी | एन एस | 0.05-0.0625 ग्रा/ली | 0.005 | 75 (फूल आने से पहले केवल एक बार प्रयोग) |
| 59. | स्पिनेटोरम 11.7% एससी | एस | 300 मिली/हे | 0.4 | 30 |
| 60. | स्पिनोसैड 45% एससी | एन एस | 250 मिली/हे | 0.5 | 15 |
| **VII** | **मिलीबग** | | | | |
| 61. | बुप्रोफेज़िन 25 एस.सी | एन एस | 1.00-1.50 मिली/ली. | 0.01 | 65 |
| 62. | क्लोथियानिडिन 50% डब्ल्यूडीजी | एस | 500 ग्रा/हे | 0.70 | 60 (मिट्टी भिगोने के रूप में उपयोग के लिए) |
| 63. | मेथोमाइल 40% एसपी | एस | 1.25 ग्रा/ली | 0.01 | 75 (फूल आने से पहले केवल एक बार प्रयोग) |
| 64. | स्पाइरोटेट्रामैट 15.31% डब्ल्यू/डब्ल्यू ओडी | एस | 700 मिली/हे | 2.0 | 60 |
| **VIII** | **जैसिड्स** | | | | |
| 62a. | क्लोथियानिडिन 50% डब्ल्यूडीजी | एस | 500 ग्रा/हे | 0.700 | 60 (मिट्टी भिगोने के रूप में उपयोग के लिए) |

| क्रमांक | प्रमुख रोग एवं कीटों के लिए अनुशंसित रसायन | रसायन की प्रकृति | सूत्रीकरण के आधार पर प्रमाण | ईयू एमआरएल (मिलीग्राम/किग्रा) | कटाई से पहले का अंतराल (पीएचआई दिनों में) |
|---|---|---|---|---|---|
| **IV** | **माईट** | | | | |
| 65. | एबामेक्टिन 1.9% (डब्ल्यू/डब्ल्यू) ईसी | सीमित प्रणालिक; ट्रांसलैमिनार क्रिया | 0.75 मिली/ली | 0.01 | 30 |
| 66. | बाइफेनाज़ेट 22.6% एस.सी | एन एस | 500 मिली/हे | 0.70 | 30 |
| 64a. | स्पाइरोटेट्रामैट 15.31% डब्ल्यू/डब्ल्यू ओडी | एस | 700 मिली/हे | 2.0 | 60 |
| **V** | **पादप वृद्धि नियामक** | | | | |
| 67. | 1-नेफ़थाइल एसिटिक एसिड 4.5% एल | एस | 100 पीपीएम | 0.06 | 15 |
| 68. | क्लोर्मीक्वेट क्लोराइड 50 एसएल | एस | 600-1000 पीपीएम | 0.05 | - |
| 69. | एथेफॉन 39% डब्ल्यू/डब्ल्यू एसएल | एस | 1250-1750 मिली/हे | 1.00 | 110 |
| 70. | फोरक्लोरफेनुरॉन (सीपीपीयू) 0.1% एल | एस | 1-2 पीपीएम | 0.01 | 60 |
| 71. | जिब्रेलिक अम्ल (जीए3) | एस | 100 पीपीएम (संचयी उपयोग) | कोई एमआरएल आवश्यक नहीं | पीएचआई लागू नहीं है |
| 72. | हाइड्रोजन साइनामाइड 50 एसएल | एस | 30-40 मिली/ली | 0.01 | 90-120 |
| **VI** | **खरपतवार नाशक** | | | | |
| 73. | इंड़ाज़िफ्लेम 20 + ग्लाइफोसेट आईपीए 540 एससी (1.65% डब्ल्यू/डब्ल्यू + 44.63% डब्ल्यू/डब्ल्यू) | एस+एस | 1875-2125 मिली/हे | 0.01+0.5 | 108 |
| 74. | पैराक्वाट डाइक्लोराइड 24 एसएल | एन एस | 5 मिली/ली | 0.02 | - |

एनएस = गैर-प्रणालीगत, एस = प्रणालीगत

*. सेल्यूलोज संश्लेषण जीन (PvCes-3) सीएए कवकनाशी (डाइमेथोमोर्फ, आईप्रोवालिकार्ब, और मैंडिप्रोपामिड) के खिलाफ और पाउडरी मिल्ड्यू पर CYP51 जीन (14α-डेमिथाइलेज़) के आधार पर ट्राईज़ोल कवकनाशकों (पेनकोनाजोल, हेक्साकोनाजोल, मायक्लोबुटानिल, फ्लूसिलाजोल, डाइफेनोकोनाजोल, टेट्राकोनाजोल) के खिलाफ प्रतिरक्षा भारत के प्रमुख अंगूर उगाने वाले क्षेत्रों में पाई गई है। इन फफूंदनाशकों वाले फॉर्मूलेशन का उपयोग कम से कम किया जाना चाहिए और उच्च जोखिम अवधि के दौरान इससे बचा जाना चाहिए।

$. संक्रमण की संभावना को कम करने के लिए छंटाई के 65 दिनों के बाद या 6-8 मिमी बेरी का आकार प्राप्त होने के बाद फोरक्लोरफेनुरॉन (सीपीपीयू) के प्रयोग से बचना चाहिए।

**टिप्पणी**

- ऊपर उल्लिखित सभी प्रमाण उच्च मात्रा वाले स्प्रेयर के लिए हैं, जहां सामान्य स्प्रे मात्रा 1000 लीटर/हेक्टेयर है। हालाँकि, उपयोग किए गए स्प्रेयर की दक्षता के अनुसार स्प्रे की मात्रा को बदला जा सकता है। हालाँकि, जैव-प्रभावकारिता सुनिश्चित करने और कीटनाशक अवशेषों को कम करने के लिए 1 हेक्टेयर क्षेत्र के लिए 1000 लीटर स्प्रे समाधान के आधार पर अनुशंसित प्रत्येक कीटनाशक की सक्रिय सामग्री के आधार पर मात्रा को सख्ती से बनाए रखा जाना चाहिए।
- अनुशंसित पीएचआई केवल तभी मान्य होगी जब तालिका में विशेष उल्लेख के मामले को छोड़कर अनुशंसित प्रमाण पर 7-15 दिनों के अंतराल पर प्रति फलने वाले मौसम में कृषि रसायन के दो अनुप्रयोग दिए जाते हैं।
- यदि कोई भी कीटनाशक लक्षित बीमारियों या कीटों को नियंत्रित करने में अप्रभावी पाया जाता है, तो यह सलाह दी जाती है कि फॉर्मूलेशन का बार-बार उपयोग न करें क्योंकि इससे अवशेषों की समस्या हो सकती है और लक्षित रोगज़नक़ों या कीड़ों की प्रतिरोध आबादी में वृद्धि हो सकती है।
- इस दस्तावेज़ में दी गई जानकारी सलाहकारी प्रकृति की है। उपरोक्त किसी भी कीट और बीमारी के प्रबंधन के लिए रसायनों के उपयोग और ईयू-एमआरएल आवश्यकता के अनुसार उत्पाद के अनुपालन की जिम्मेदारी उत्पादकों की होगी।
- चूँकि एक से अधिक कीटों का खतरा एक साथ हो सकता है, यदि उचित कीटनाशक का उपयोग किया जाए, तो गैर-लक्षित कीटों का नियंत्रण किया जा सकता है। लक्षित कीट के लिए सुझाई गई मात्रा, आवेदनों की संख्या और पीएचआई का अनुपालन करना आवश्यक है और इसे सख्ती से पालन करना चाहिए।

# Important table grape varieties

**Dr. Roshni Samarth**

Grapes is one of the economically beneficial fruit crops and this fruit is grown in temperate to warm climatic regions of different countries. Globally it is mainly grown for wine purpose, but in India majority of grape area under cultivation is for table purpose. Attractive bunch appearance is one of the important criteria for marketing along with the seedlessness, crisp berries and thin skin. While the grape grower demands for naturally bold berries, loose bunches and good shelf life. Compared to wine grapes, table grapes have low sugar and more pulp content. Salient features of some major table grape varieties are discussed here.

## Thompson Seedless

It is a major table grape variety grown all over the world. Commercially it is being extensively cultivated for table purpose in India from six to seven decades. The variety is also being used for raisin making. It can yield 20-24 tons per hectare of quality grapes and requires approximately 130-145 days for harvesting after fruit pruning. The average berry size is 20-22 mm diameter with the use of plant growth regulators. Other varieties obtained from clonal selection in Thompson Seedless are Tas-A-Ganesh, Manik Chaman, Sonaka, 2A Clone, H-5, etc. are also being grown widely.

## Red Globe

The variety is developed at University of California, Davis, USA and was introduced during 1985 in India. It is a late ripening, seeded, coloured variety and requires around 135-150 days for harvest. It is popular due to its large bunches (800-1000 g average bunch weight) and very bold berries. Berries are red, round, pulpy with the average size of 22-25 mm diameter. It is harvest at 17 to 18˚ Brix sugar content. It is well known for good shelf life and can be easily stored for minimum three months. The fruit yielding capacity is 20-25 tons per hectare.

## Crimson Seedless

It is a hybrid developed at United State Department of Agriculture, California. It is late ripening coloured variety and take more than 135 days from fruit pruning to harvest. Vines are vigorous in nature. Bunches are medium in size and conical shaped. Berries are red, cylindrical-oval, seedless and large. Berries have firm pulp, thick skin and neutral flavour. The variety has no/minimum requirement of gibberellic acid for bunch thinning or berry sizing. Clusters may require minimum manual thinning for bunch and berry development. Comparatively fruits are acidic and harvested at more than 25 sugar acid ratio for domestic market. It has potential for distant market because of good shelf life and can be stored up to 20 weeks.

## Flame Seedless

The variety is developed through hybridization programme at Fresno University, California, USA. It is an early maturing variety and harvested at 110-115 days after fruit pruning. Vines are vigourous and yield an average of 10-12 tons per acre. Bunches are well filled, medium to large in size and conical shaped. As the north Indian conditions receives rains at fruit maturity of other commercial varieties like Thompson Seedless, it is well suited under such climate regimes. Better colour development can be achieved if ripening coincides with the cooler conditions along with the retention of muscat flavour. It does not suit distant market due to sensitive to handling and fruits can be stored up to 10 weeks under cooler conditions.

## Fantasy Seedless

The variety is a result of hybridization programme at USDA Fresno, California. It is a short duration variety and takes 115 to 125 days after fruit pruning to harvest. Because of vigorous character of vine, selection of rootstock, water and nutrient control play pivotal role for the fruitfulness. The requirement of gibberellic acid for thinning and sizing is nil. Bunches are medium in size and natural loose. Berries are seedless, black, medium to bold in size with the average size of 16-18 mm, thin skin and firm pulp. It is sensitive to berry cracking under cold or excessive humid conditions. The storage capacity of the variety is low and can be cold stored for 8 weeks.

## Sharad Seedless and clones

Sharad Seedless is originated through natural selection from a Russian variety Kishmish Chernyei during 1980's. It requires around 125 days after fruit pruning for harvest and yield about 22-26 tons per ha. Berries are bluish black, seedless, oblong to elliptical shape and firm. The variety is harvest at 18-20˚Brix with 0.5-0.7 per cent acidity. Most of the commercially grown black seedless variety are originated from the Sharad Seedless such as Nanasaheb Purple Seedless, Sarita Seedless, Krishna Seedless, Nath Seedless, Jay Seedless, etc. These all are very responsive to gibberellic acid treatment for achieving bold berry size. Nanasaheb Purple Seedless is popular for extra bold berries while Sarita Seedless and Krishna Seedless for elongated berries.

## Gulabi

Muscat Hamburg variety is known as Gulabi in India. The maturity period of variety is early as compared to other commercial varieties available (110-115 days after fruit pruning). It is popular in southern India and principally grown in Tamil Nadu especially at Theni and Dindigul districts. Locally it is popular as Paneer grapes. Berries are reddish purple, round with the average size of 15-16 mm. The average productivity is 14-16 tons/ha.

# Canopy management practices to produce quality grapes

**Dr. R.G. Somkuwar**
**Principal Scientist (Horticulture)**

A grapevine is a climber. It has indeterminate growth with weak stem. It needs support not only to support the weight of its aerial parts and fruits but also to maintain the canopy architecture. The trellis and the training system shape the canopy architecture of vines. The fabricated structure used for training the vines is called the trellis while the process of shaping the canopy is called training. The manner in which a grapevine is trained does not only influence the vine growth, productivity and quality but also brings about variation in microclimate. Canopy management starts with the interaction of the cultivar, vineyard site, seasonal climate, inputs and the trellis system.

The basic concept in the canopy management of perennial trees is to make the best use of land and climatic factors for increased productivity. Factors like Tree vigour, sunlight, temperature and relative humidity of that region plays a great role in the production and quality of fruits.

## Canopy management

Canopy refers to the size and shape of vine structure. The components of a vine canopy are its primary arms and secondary arms, which form the permanent framework of the vines, canes, shoots and leaves. While the size of canopy is dependent on the number and length of primary and secondary arms, the number of canes, the number and length of shoots and the number and size of leaves, the shape of the canopy is determined by the length and orientation of the arms and the shoots.

## Ideal Canopy

The ideal canopy should fulfil the following conditions:

1. It should have adequate number of canes, which are the fruiting units.
2. It should allow sufficient light and ventilation into the canopy during the growth season (May-August).
3. It should have sufficient coverage to nourish and protect the bunches during the fruiting season (November-March).
4. It should avoid overlapping of the foliage to facilitate efficient photosynthesis by every leaf.
5. It should offer scope for effective coverage of sprays with pesticides and growth regulators.
6. It should not build up microclimate that is congenial for disease development.

Aim of canopy management in grapes

1. To control vine vegetative growth
2. To improve sunlight exposure to fruit and foliage
3. To increase airflow in the canopy so as to reduce disease pressure
4. To improve the coverage and effectiveness of pesticide applications

5. To facilitate easy cultural practices like thinning, dipping, pruning and harvest
6. To improve the fruit yield and quality

Benefits of a reduced canopy microclimate

1. This helps in easy entry of light and air into the canopy environment
2. It lowers the incidence of almost all diseases by reducing humidity levels and allowing sunlight and wind to dry out leaves and fruit easily.
3. This also helps in improving spray penetration to interior of the canopy
4. It allows sunlight to penetrate into the canopy interior for more efficient photosynthesis
5. It helps the grape bunches to look better, makes the grapes appear better quality

Requirements during fruiting season

1. Open canopy and good ventilation up to berry set.
2. Adequate foliage up to veraison.
3. Berry development.
4. Minimum disease development.

## Strategies and practices in canopy management

Canopy management refers to the practices for obtaining the maximum yield of export quality grapes. These practices envisage at strong growth of the vines and transform the growth to productivity. The strategies and practices of canopy management for the production of export quality grapes are outlined below.

### Leaf removal

The major requirement after fruit pruning is uniformity in bunch appearance so that the sprays of plant growth regulators can be taken at a time. To achieve this, all buds should sprouts uniformly. Hence, leaf removal is done 15 days before the actual fruit pruning. This is done by two means i.e., either manually or with the use of chemical (ethephon). The leaf removal exposes the bud to sunlight due to which the consolidation of food material in the bud takes place. This helps to bulge the bud before the pruning is done. The bud sprouts thus becomes fast and early.

**Fig. 1. Leaf removal by chemical (left) and manual (right)**

However, the care should be taken that the irrigation water is stopped at least 5-6 days before the chemical sprays. This will help to put the vine under stress and the leaf fall will be effective. Sometimes, immediately after the ethephon spray the growers' experiences rainfall, under such situation, the repeat spray after 3-4 days is necessary. After the spray, the ethylene in the vine gets increased and the auxin is reduced. The slow increase in the proportion of ethylene results into transport of food material from the leaf to the bunch. The detachment of petiole from the shoot takes place exposing the bud to the sunlight. For effective results, the slow leaf fall by complete yellowing of leaf up to 10-11 days from the time of application will be better.

While manual leaf removal can also be done 15 days before the fruit pruning. Leaf removal can be attended in the fruiting zone only i.e., removal of 4th to 10th will be sufficient to expose the targeted bud.

## Bud testing

Collect the canes of different sizes and also different types (<6mm, 6-8mm, 8-10mm and sub cane and straight canes, etc.) leaving one bud on the cane. The canes are then wrapped in the wet gunny cloth and sent to the laboratory for bud testing. This helps us to know the actual position of healthy and strong bud on the cane. The bud testing helps to avoid the errors in the pruning.

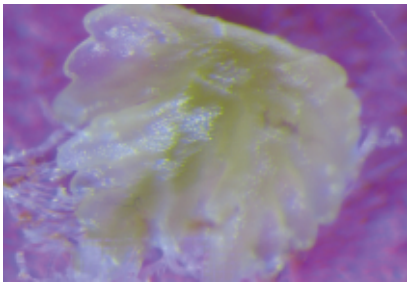

**Fig. 2. Bunch visible under microscope**

## Fruit pruning

Based on the bud testing report and also after complete leaf fall, fruit pruning is done. In the situation of non-availability of bud testing facility, earlier experience of the vineyard management is used for pruning. In case of sub cane, pruning just after one bud near the knot is sufficient. The bud available on the knot is also called as tiger bud. This bud is important from the point of higher yield. This bud will have the bunch with higher weight as compared to other buds. Hence, sprouting of this bud is important. In case of straight cane pruning, short intermodal length should be considered for pruning. This is generally available at 6-7 and 7-8 bud position on a cane. However, in case of canes less than 6mm size, the pruning should be done leaving 4-5 buds on the cane.

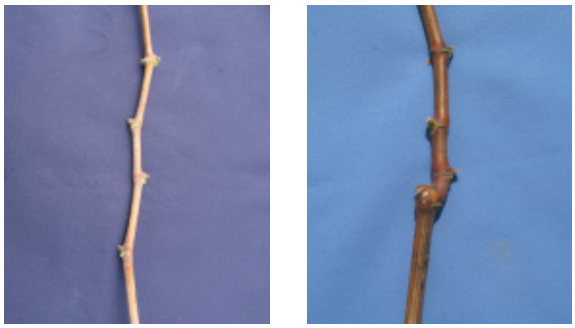

**Fig. 3. Straight cane (left) and sub cane (right)**

## Application of hydrogen cyanamide

Hydrogen cyanamide is bud breaking chemical used only for the purpose of uniform and early bud sprout. The concentration used for swabbing the buds depends on weather condition (temperature and relative humidity available during the period) and cane thickness and percent leaf fall before pruning.

**Table 1: The detail of the condition and concentration to be used is given in the following table.**

| Temperature | Conc. to be used | Cane dia (mm) | Conc to be used |
|---|---|---|---|
| 35-40 °C | 30 ml | 6-8mm | 30 ml |
| 30-35 °C | 35 ml | 8-10 mm | 35 ml |
| 25-30 °C | 40 ml | 10-12 mm | 40 ml |
| Up to 25 °C | 50 ml | >12 mm | 50 ml or 40 ml twice |

## Cane twisting

The uniform cultural practices were followed during foundation pruning time for the production of uniform canes. However, there might have been some lacunae in following canopy management practices that were resulted into variation in the cane size. Under such situation, all the canes will not sprout due to uneven bud size available on these canes. This will result into erratic and irregular bud sprouts. To avoid this, the practice of cane twisting on the selected canes (thick canes only) should be followed. This will help in uniform bud sprout.

## Bud sprouting

The bud sprouting starts 6-7 days after the fruit pruning. The bud sprouting will depend upon the weather condition, cane diameter and the concentration of hydrogen cyanamide used. Under the condition of temperature ranging between 32-35°C and 80-90% relative humidity, the bud sprouting will be on 7th day. Sometime, sudden rainfall and cloudy weather increases the relative humidity in the atmosphere. This results into increase in gibberellins and reduction in cytokinin level in the vine. The increase in gibberellins in the vine reflects into high vigour of vine. The continuous rainfall during bud sprouting stage in the vineyard saturates into root zone closing all the pore spaces. Under such conditions, the fruitful bud gets converted into filage. Hence, care should be taken to remove the stagnated water from the root zone and field.

## Pre-bloom stage

After the bud sprouts, the bunch becomes visible at fifth leaf. The temperature (30-35°C) and relative humidity (above 60%) during this period is ideal for growth and development of vine. Hence, the vegetative growth will be at faster rate with emergence of one leaf on every third day. The leaf grows into numbers making the shoot and thus the shoot growth converts into canopy.

## Removal of excess shoots and bunches

The flower inflorescence (also called “bunch”) will be completely visible on 13-14th days after the fruit pruning. At this stage, the excess shoots are to be removed. This will facilitate for development of open canopy. Under this canopy the build-up of disease inoculums will be less.

Removal of unwanted shoots

No of bunches to be retained For 10’x6’ spacing

- Strong vine 1 Bunch/sqft (60)
- Medium vine ¾ Bunch/sqft (45)
- Weak vine ½ Bunch/sqft (30)

**Fig. 4. Stage of excess shoot removal**

**Table 2: Retention of bunches and shoots based on the purpose**

| Cane thick-ness | Purpose | | |
|---|---|---|---|
| | **Local market** | **Export** | **Raisin production** |
| <6mm | Single bunch & single shoot | Such canes are to be removed | Single bunch & single shoot |
| 6-8mm | Single bunch & single shoot | Single bunch & single shoot | Two bunches and one supporting shoot |
| 8-10mm | Two bunches and one supporting shoot | One bunch and one supporting shoot | Three bunches and one supporting shoot |
| >10mm | Two bunches and two supporting shoot | | |

## Requirement of leaves on each shoot

Under a wide range of climatic conditions, a desirable leaf area to crop ratio can vary from around 10 to 12 $cm^2$/g berry weight. In table grape varieties, the leaf area is around 160-180$cm^2$. The bunch appears at fifth leaf and the growth continues till berry setting beyond which the shoot growth stops. During the vegetative growth stage (pre-bloom to berry set), generally 16-17 leaf can be obtained on each shoot. Hence, 10-12 leaf above the bunch is considered sufficient. The extra leaf arising will act as sink and thus the source: sink relationship will be disturbed. Hence, to maintain proper growth of a bunch, the leaf requirement needs to be considered.

**Fig. 5 . Leaf requirement upto berry setting**

## Source: sink relationship for bunch development

Carbon compounds produced through photosynthesis along with minerals from the soil are transported from sources to sinks. In grapes, sugar accumulation in fruit has an important economic role. The grapevine produces food material using active leaf through the process of photosynthesis and transport to the sink to support the vine growth, bunch development and also maintenance of permanent parts like trunks and roots.

1. The source: The vine parts supplying food material to the developing bunch is called source.
2. Leaf: Leaves are the most important organ for photosynthesis, a process in which light energy is captured by green plants (mainly by the chlorophyll in leaves) and used to synthesize reduced carbon compounds from carbon dioxide and water.
3. Cane: Balance between vegetative growth and fruit production is necessity. It is too important to practice removal of some of them from the vine for the best quality grapes.
4. Trunk: The trunk supports the above ground vegetative and reproductive structure of the vine.
5. Arms: The arms are basically primary and secondary arms derived from the trunk. The secondary arm of a vine produces the fruitful canes used after the fruit pruning for bunch development.
6. Roots: In addition to the anchoring the vine, the root absorb nutrient and water from the soil and stores carbohydrate and other food material required for further use. The majority of the grapevine root system is reported to be within the top three feet soil depth, however, the roots goes even up to 5 feet depth provided the condition for root anchoring is proper. The distribution of roots is influenced by the soil type.

**Table 3: Movement of carbohydrates in grapevine**

| S. No. | Stage | Sink | Source |
|---|---|---|---|
| 1. | Bud break to Panicle emergence | Growing tip Immature leaves | Cane and arm |
| 2. | Panicle emergence to fruit set | Immature leaves Growing panicle | Mature leaves and cane |
| 3. | Fruit set to veraison | Growing berry Immature leaves | Mature leaves |
| 4. | Veraison to harvest | Shoot | Mature leaves |

## Bunch and berry thinning

Achieving the desired improvements in grape berries, berry thinning practice has been used by the grape growers. To fulfil the requirement of table grape market, the berries must be of uniform size. The berry thinning increases the berry size by reducing the competition for food among the other berries in a bunch. Berry thinning has been used to obtain for loose bunch with large berries, highest berry weight and early ripening. Hand thinning plays an important role with some grape varieties like Thompson Seedless and its clones since it can help to maintain the desired berries in a bunch to obtain better quality.

**Fig 6 . Berry thinning stage**

**Fig. 7 . Photosynthetically active vine**

## Training of shoots

The berry setting is completed 50 days after the fruit pruning. During this stage, the berry grows at a faster rate. However, the shoot growth stops once the berry setting is completed. During the bunch developmental stage (at 8-10mm berry size), bunches in addition to the leaves, require uniform sunlight on the berries for photosynthesis. The over crowed shoots are therefore separated from each other and placed on the foliage wire so that individual leaf and berries in a bunch will receive uniform sunlight for photosynthesis. This will help to produce the food material and supply to the developing bunch.

## Protection of bunches

The shoot and leaf growth continues till berry setting and thereafter the berry development stage starts. Under different conditions of canopy and weather, the grape bunches require protection. These conditions are as below.

**Fig. 8. Bunches covered with paper**

**Sun burn:** Under the condition of reduced canopy during berry growth stage, the berries in a bunch show sun burning symptoms. This condition is generally observed during 14-16 mm berry growth stage or even before the berry softening stage. The berries once damaged with high intensity of sunlight, becomes unfit for eating. The sugar development hampers in such bunches. To protect bunches, shade nets are generally used to cover the canopy.

## Pink berry

The grape berry growth continues from 3-4 mm stage till the veraison stage. During this stage, the temperature

and relative humidity plays an important role. However, the variation in the maximum and minimum temperature in the atmosphere results into the conversion of green pigmentation to pink pigmentation. In general, the pink color expression starts at the time of near veraison stage. This stage generally coincides with 14-16 mm berry diameter stage. The conversion of green pigment into pink pigment is seen only in coloured varieties. When the maximum temperature goes up to 35°C and the minimum temperature falls below 7°C in the vineyard creating more variation between the maximum and minimum temperature, the pink color development is more. To avoid this, reducing the gap between the maximum and minimum temperature is important. This can be achieved through covering of a bunch with paper.

**Fig. 9 . Export quality grapes**

## Veraison to harvest stage

The veraison stage starts from 85 to 95 days after fruit pruning depending upon the weather condition in the vineyard. This stage is also called as berry softening stage. The berry can be pressed at the time of softening in white varieties, while in case of color varieties, the color starts changing from green to pink in addition to the berry pressing. In export quality grapes, the berry size at this stage is between 16to 17 mm, however, in case of local grapes, the size will be approximately 14-16mm. The management practices in the vineyard including the crop load play an important role in sugar development. During this stage, protection of bunches under the shade is important considering the uniformity of color.

❄❄❄

# Appraisal of soil and water quality for grape cultivation

**Dr. Yukti Verma**
**Scientist (Soil Science)**

In India, grape is mainly grown in the semi-arid tropics with more than 90 % of the area concentrated in Maharashtra and Karnataka. Majority of the vineyards are either raised on heavy soils or on marginal lands. Though grapes can be cultivated on varied soil conditions, deep and well-drained soils with pH range of 6.5-8.0 is ideal. The soil pH above or below this range is known to restrict availability of some nutrient elements and thus inhibit growth and development. The weather is mostly dry with less number of rainy days (30- 40 days) during the year. Once planted, vines at the site for at least 10-15 years. Favourable rooting environment and proper understanding of the phenology is key to efficient water and nutrient management. Being double pruned and single cropped, the nutrient requirement differs between both the pruning seasons.

## Soil texture

This is the inherent property of the soil and does not change with management practices. However, for establishing the vineyard requires opening a trench 2.5 – 3 ft. depth and after addition of FYM, the trench is filled. This sometimes leads to subsoil mixing with the top soil thereby, affecting the textural as well as soil structure (Fig.1). In general, the loamy soil with 30-50% sand, 30-50% silt and 7-27% clay is the most suitable for viticulture. Sandy soils have good aeration but poor water and nutrient supplying ability and hence, the vines are affected during drought. Clay soils have good water holding and nutrient supplying ability, but slow water intake and poor aeration, limits root depth and root distribution.

**Fig. 1. Soil profile and effect of trenching on redistribution of soil from subsoil to top soil**

## Soil Depth

The soil depth has a direct relation with the root distribution and its penetration, and moisture holding capacity depending upon soil texture. The soil depth has direct impact on the inducing moisture stress, a requirement for reducing vigour of the vines during fruit bud differentiation stage. Moderate soil depth (2.5 to 3 ft) is suitable for vine growth. More soil depth will lead to management issues with vigorous varieties like Fantasy Seedless, Crimson Seedless etc.

## Soil structure

Defined by the way individual particles of sand, silt, and clay are assembled. Single particles when assembled appear as larger particles. These are called aggregates. Soil structure has profound effects on water infiltration,

available water capacity, drainage, aeration and root penetration. The soil structure is influenced by Texture (finer particles create finer pores), Organic matter content, Biological activity (larger pores are good), Chemistry (Ca > 60% in exchange complex increases aggregation whereas Na degrades), Previous management (compaction, tillage, vegetative cover crop) and Wetting and drying cycles.

**Fig. 2. Root distribution in different soils**

Peacock and Christensen (2000) have developed guidelines for interpreting soil suitability for grapevines. The same are given in table 1.

**Table 1: Guidelines for Interpreting Laboratory Data on Soil Suitability for Grapes**

| Possible problem and unit of measurement | No problem (less than 10% yield loss expected) | Increasing problems (10 to 25% yield loss expected) | Severe problems (25 to 50% yield loss expected) |
|---|---|---|---|
| pH | 5.5-8.5 | - | - |
| Salinity ECe (dS/m) | 1.5 to 2.5 | 2.5 to 4 | 4 to 7 |
| Permeability ESP (est.) | Below 10 | 10 to 15 | Above 15 |
| Toxicity | | | |
| Chloride meq/l | Below 10 | 10 to 30 | Above 30 |
| Boron mg/1 or ppm | Below 1 | 1 to 3 | Above 3 |
| Sodium (meq/l) | -- | Above 30 (690 ppm) | -- |

Peacock and Christensen (2000) - Interpretation of soil and water analysis (http://iv.ucdavis.edu/files/24409.pdf)

Irrigation water having electrical conductivity less than 1dS/m, residual sodium carbonate less than 1.25 meq/L, sodium adsorption less than 8, chlorides less than 4 meq/L and boron less than 1 ppm are considered safe for irrigating the vineyards. However, availability of poor quality of irrigation water provides considerable challenge to the grape growers to efficiently manage their vineyards for attaining optimum yield. Usually vineyard productivity is reduced noticeably before visual symptoms are noticed on the vines. To cope up with salinity, vines were raised on Dogridge rootstock. However, studies at NRC Grapes suggest that it cannot exclude sodium. Under saline irrigation, vines grafted on Dogridge rootstock has shown the tendency to accumulate sodium in excess leading to K deficiency, reduced fruitfulness and death of perennial vine parts. The rootstock 110R and B-2/56 (a clone of 110R) has the property to exclude sodium and can perform under such conditions as compared to Dogridge rootstock. Use of soil amendments like gypsum based upon soil test value in combination with green manuring, compost or FYM along with heavy doses of Sulphate of Potash as soil application helps in reducing this problem.

❄❄❄

# Irrigation scheduling and moisture conservation techniques

**Dr. Ajay Kumar Upadhyay**
**Principal Scientist (Soil Science)**

In arid and semiarid areas, that remain essentially dry during major part of the year, water and not the land becomes the most limiting resource for production. Under such conditions, increasing productivity per unit water use as compared to the land use becomes an important strategy. Water scarcity and low availability of nutrient often limit crop growth and production potential in agro-ecosystems because most crops are sensitive to water and nutrient deficits during different critical stages. At the same time excess water use can increase the cost of production, and at the same time cause environment pollution. Grape is no exception. For quality grape production, management of canopy, nutrient, water, pest and disease and their timely operations are important. Amongst the inputs, water holds the key to achieving higher production and is known to contribute towards 60-70% in realising the genetic potential of the crop. Climate change is becoming a reality. Even though the total rainfall remains same for a given area, nevertheless, the number of rainy days is decreasing and high intensity rains over a shorter period is becoming more frequent. This calls for proper use of water for meeting the crop need.

What a grower needs to understand

a. What is irrigation water requirement during Foundation as well as Fruit pruning season?

b. What is root zone of grapevine? Majority of the roots are located in top two feet of the soil as the crop is drip irrigated. Soil type and its depth will have direct impact on root proliferation and water and nutrient use.

c. Do I understand the quality of water available for irrigation?

d. What is the status and efficiency of my irrigation system?

e. What are the water-saving techniques that should be adopted during the irrigation season?

## Growth stage of vine and their importance for water management

The need for water varies with different stages of vine growth. For some stages of the vine moisture stress is beneficial and for some stages it is harmful.

During the stage covering the period from foundation pruning to bud differentiation stage (normally mid-April to May) the water requirement is maximum. Vines should not be stressed in order to obtain canes of desired thickness (8-10 mm) and sufficient canopy. In the bud differentiation stage, irrigation should be reduced to facilitate better bud differentiation. Shoot maturity and fruit bud development stages coincides with rainy season but still there is a need to irrigate the vines as the rainfall is highly erratic and distribution is not uniform. There are hardly 40-50 rainy days in a year. Most of the soils are heavy textured with low infiltration rate and much of the rainwater is lost as run off. Irrigation should be withheld till the soil is at field capacity after the rain.

The effect of water stress from shoot growth to canopy maturity stage during foundation pruning could reduce the fruitfulness of vines. Studies carried out at ICAR-NRC Grapes in heavy soils in year 2013 has clearly shown that irrigating at 50 % of recommended schedule followed by no irrigation during fruit bud differentiation

stage reduces the yield of Thompson Seedless vines by 10% over the recommended schedule. Subsequently, in the next year, it was observed that irrigating at 50 % of recommended schedule followed by no irrigation during fruit bud differentiation stage till 100 days of crop growth reduced the fruitfulness by 25%.

In the fruit pruning season (normally during the month of October) the vines should receive sufficient irrigation to promote strong shoot growth and adequate leaf area. Water stress during pre-bloom stage will lead to uneven and poor sprouting which will have adverse impact on number of bunches. Mild stress during berry set to shatter stage helps in reducing berry set which are otherwise to be thinned. However, bunches can be completely desiccated by high levels of water stress during flowering, resulting in complete yield loss. Further at the time of fruit setting, high levels of water stress can reduce yield due to berry drop or poor berry development. Berry growth to veraison period is most critical stage and water stress at this stage reduces the berry size and yield. During the period from veraison to harvest the vines should not be over-irrigated in order to avoid berry cracking and delay in harvest. Depending upon the stored water in soil the irrigation may be stopped a week before to increase sugar content in the berries. Moisture stress at this stage however results in berry drop. Severe water stress during ripening results in poor sugar accumulation, which is crucial for quality-raisin production. At ICAR-NRC Grapes, it was observed that irrigating vines 50 % of the recommended irrigation schedule at berry development stage to harvest in heavy soils reduced the yield by 8.90% compared to recommended irrigation in year 2013. The yield losses could be higher in light textured soils, the water holding capacity is low in these soils as compared to heavy soils.

Factors related to water quality in grape production

1. **Salinity:** Salts are added to the soil by irrigation water and accumulate in soil.
2. **Soil permeability:** Salt water or relatively high sodium water may reduce soil permeability.
3. **Toxicity:** Chlorides and boron accumulate in the leaves. Excessive accumulation cause leaf burn and reduce yields. Damage from leaf absorption is much less if the relative humidity remains above 30-40 per cent.
4. Problems associated with a water pH above 8.40 or below 6.5 are usually related to toxicity, nutritional imbalances or soil permeability. Nutrients such as nitrogen may cause excessive vigour and lowered yields. Water high in bicarbonate may result in an objectionable white deposit of lime on leaves or berries. Problems related to high bicarbonate in irrigation water can be reduced by addition of sulphuric acid at controlled rate to reduce water pH to 6.50.

Water salinity with ECw less than 1 dS/m is considered excellent for grapes under average vineyard management. Water salinity in excess of ECw 1.0 dS/m may still be satisfactory if appropriate soil management practices are adopted.

There is a saying ‘Hard water produce soft soils and soft water produce hard soils’. Extremely low salt water result in poor water penetration. Relatively high sodium reduce water infiltration and calcium improves it. Salinity effects on soil permeability are relatively less in clay than sandy loam. Low permeability soils should be irrigated more frequently or for longer duration.

## Strategies for improving water use efficiency in grapes

### Provide need-based irrigation

The adequacy of the irrigation water should also be ensured before selecting a site for grape cultivation. Water

requirement of grapes varies with the atmospheric aridity and the stage of the growth of the vines. Scheduling of water is to be based on the pan evaporation reading, which is an index of water lost from the plant. Further, quantum of water applied should conform to the crop requirement at a given stage. This calls for irrigation scheduling.

The grapes grafted on rootstocks have better root systems for exploitation of soil moisture from deeper layers and hence less irrigation water is required compared to own rooted vines. On the basis of experimental data generated at this institute, the best irrigation scheduling for grape grafted on rootstock under saline irrigation is given in table 2. In case, the irrigation water quality is good, about 20% less irrigation water will be required. On the basis of pan evaporation reading, the water requirement of grapes can be worked out as per crop growth stage.

**Table 2. Recommended irrigation schedule for grapevine based upon pan evaporation**

| Growth Stage | Expected duration (days after pruning) | Water requirement (litres/day/ hectare per mm of evaporation) | Month of operation | Expected monthly Pan evaporation (mm) in different grape growing regions | Approximate water (litres /hectare/ day) |
|---|---|---|---|---|---|
| **Foundation Pruning** | | | | | |
| Shoot growth | 1-40 | 4200 | April-May | 8-12 | 33,600-50,400 |
| Fruit bud differentiation | 41-60 | 1400 | May-June | 8-10 | 11,200-14,000 |
| Cane maturity and Fruit bud development* | 61-120 | 1400 | June-August | 0-6 | 0-8,400 |
| 121 days - fruit pruning* | 121 - | 1400 | August- Fruit pruning | 0-6 | 0-8,400 |
| **Fruit Pruning** | | | | | |
| Shoot growth | 1-40 | 4200 | October- November | 6-8 | 25,200-33,600 |
| Bloom to Shatter | 41-55 | 1400 | November- December | 4-6 | 5,600-8,400 |
| Berry growth and development | 56-70 | 4200 | December - January | 3-6 | 12,600-25,200 |
| Berry growth and development | 71-105 | 4200 | December - January | 3-6 | 12,600-25,200 |
| Ripening to Harvest | 106- harvest | 4200 | January - March | 8-10 | 33,600-42,000 |
| Rest period | Harvest to Foundation pruning (20 days) | - | March-April | 8-10 | - |

* The above growth stages generally coincide with rainy season and no irrigation may be required in heavy soils.

** The schedule has been worked based on experiment carried out in heavy and calcareous soils using saline irrigation water (EC ranging from 1.7-1.8 dS/m) and therefore this may be taken as guideline for stage wise irrigation for other soil types other than the one specified here.

**Note:**

- Depending on water quality, the amount of water needed may change. Irrigation should not be applied after the soil has reached field capacity after rain.
- Irrigation requirement will be less by 20% compared to above given schedule if low salinity water (EC less than 1.0 dS/m) is used.

## 2. Water saving techniques

### a. Use of antitranspirants and mulching

Mulching and antitranspirants reduce the soil evaporation as well as transpiration losses from the leaf. Many types of material, organic and inorganic, may be used as mulch (Fig.1). The height of organic mulch should be at least 2" and should cover at least 1.5' on both the sides of the vine. Organic mulch not only helps in reducing evaporation but also improves soil conditions through organic addition. Plastic mulching can also be used; however, they should be properly anchored to the ground to prevent being blown away. The thickness of the plastic should be at least 25 microns. Both plastic and organic mulch also reduces weed incidence in the vineyards.

Antistress is a biodegradable acrylic polymer which when sprayed on plants minimize the water loss through evapo-transpiration. The usage of Antistress or any antitranspirant, should be checked for any restrictions on its application based on Good Agricultural Practices etc. Three sprays on Thompson seedless vines during foundation pruning i.e. 4-6 ml antistress / litre after 30, 60 and 90 days after pruning and two sprays @4 ml antistress / litre at 25 and 55 days after fruit pruning in combination with bagasse mulching could save 25% of irrigation water.

**Fig. 1. Mulching in vineyards**

### b. Subsurface method of irrigation

The ever-present problems of lower availability of irrigation water, presents the farmers with difficult question of sustaining higher yield with lesser availability of water. One of the solutions could be sub surface irrigation, wherein the irrigation water is conveyed directly to the root zone. The method involves the usage of one feet length PVC pipes (2.5 inch diameter) placed nine inches below the soil with holes on all sides of the pipe (Fig. 2). The micro tubes attached to the existing drip lines are directly placed in the pipes. This reduces the evaporation losses from the surface. Further, the roots escape the effect of salinity as more roots are distributed near the water application source i.e. at subsurface. By this method, saving to the extent of 25 % of irrigation water can be achieved.

### c. Partial rootzone drying

In this technique, one half of the root system will be always in a dry or drying state while the other half is irrigated. The wetted and dried sides of the root system are alternated on a 7- to 15-day cycle depending upon the soil type. The roots that are drying leads to the synthesis of Abscisic acid and this is then transported to the

leaves. Stomata respond by reducing aperture, thereby restricting water loss. Thus, the transpiration is reduced due to partial stomatal closure. This reduces the quantum of water required for profitable yield.

**Fig. 2. Subsurface irrigation**

## Other cultural practices to be followed

a. **Use of Cocopeat:** Light textured soil has low water holding capacity and use of cocopeat improves water holding capacity. Cocopeat has the ability to retain 6-8 times its weight in water and also can store and release nutrients to plants for extended periods. It also improves soil aeration that is important for healthy root development. For conserving moisture, cocopeat should be kept atleast 3-4 inches depth in the soil just below the dripper. Depending upon use of FYM, 1.5 – 2 kg dry weight cocopeat is required per vine.

b. **Nutrient Use:** Many vineyards have poor soil conditions and hence, the ability to hold water and retain nutrients in the soil is limited. Application of FYM/ green manures/ compost/ vermicompost will improve soil physico-chemical and biological properties. Normally for nutrient uptake in the plants, soil moisture is crucial as the nutrients dissolves in water and then is taken up by the plant. Thus, moisture stress will affect the nutrient uptake in the vines, particularly, potassium, calcium, magnesium and micronutrients. Heavy doses of fertilizers directly in the soil are not recommended under limited irrigation water availability, as the presence of unutilised fertilizer under limited water will increase soil salinity. This will further reduce the moisture availability to vines. Hence, fertigation and frequent foliar applications is the recommended way of supplying the nutrients to the vines. Foliar application of fertilizer on mature leaves should not exceed 0.50% concentration. Lower and frequent application on young leaves are more beneficial.

c. If the irrigation water is saline, the only way to reduce salinity is to apply more water to leach the salts. When irrigation water availability is low, it is suggested to saturate or flood the root zone just before the pruning to leach the salts below the root zone, so that the sprouting and initial growth is not affected. With age of the leaves, the impact of the salinity developed at a later stage will be less. Further, immediately after saturating the bund, apply mulch to keep the soil moist.

d. **Timely harvest –** Harvesting the grapes as and when they are ready, reduces the water requirement of the vine as the water use reduces when the crop is harvested.

# Nutrient management in calcareous and sodic soils

**Dr. Ajay Kumar Upadhyay**
**Principal Scientist (Soil Science)**

In India, grape is mainly grown in the semi-arid tropics. Though grapes can be cultivated on varied soil conditions, deep and well-drained soils with pH range of 6.5-8.0 is ideal. The weather is mostly dry with less number of rainy days (30-40 days) during the year. Being double pruned and single cropped, the nutrient requirement differs between both the pruning seasons. However, this region suffers from abiotic stress namely moisture and salinity stress.

Nutrients are required by the plants mostly for the synthesis of carbohydrates, proteins, fats, electrolytes. Protein is composed of C, H, O, N, P and S; carbohydrates are composed of C, H, and O and fats are also composed of C, H, and O. In addition to these, Chlorine, K, Na, Ca, Mg and certain other elements are required to maintain the electrolytic balance in the plants. Fe, Mg, Mn, Cu, B, Zn and Mo are actually required as a part of enzyme system for carrying out enzymatic activities.

All the above mentioned elements are called as essential plant nutrients. There are 16 essential elements C, H, O, N, P, K, Ca, Mg, S, Fe, Mn, Cu, B, Zn, Mo and Cl required by plants.

## Determining fertilizer requirements of the grapevines

Soil analysis can reveal what is potentially available to the vine, but does not give good indication of soil-plant interactions. Soil testing is, however, quite helpful in understanding fertilization approaches when a need is identified. Petiole tests are better approach for determining the vine needs. The amount of fertilizer dose required will differ for different soils types and varieties even if the petiole test value is same.

## What is fertigation?

Application of nutrients through irrigation water is generally referred to as fertigation. The main advantages are control of timing, concentration, location and proportion of the nutrients. Fertigation has become the need of hour in Indian viticulture also to sustain the production of grapes and minimize soil and environment related hazards. The recommended fertigation schedule and economics of fertigation is given in table 1.

## Secondary and Micronutrients

- Sulphur deficiency is rarely observed in vineyards since considerable quantities are indirectly added by use of S containing fertilisers like SOP and S as fungicide
- Calcium deficiency in calcareous soils is not common and do not require specific fertiliser application unless vineyard soil has high pH or sodium. Certain climatic conditions (cold or rainy) or nutrient imbalance in soils may cause Ca deficiency in fruits (berries) which can be corrected by two to three foliar applications or bunch dipping between fruit set and veraison stage @ 0.3 to 0.5% (calcium chloride or calcium nitrate)
- Apply magnesium sulphate @ 100 kg per hectare per pruning season in four splits for maintenance dose. However, the application must be done only if need is established based on petiole test value since in many vineyards ground water irrigation source may add substantial quantities of Mg in soil.
- Amongst the micronutrients, zinc and iron are the most commonly deficient nutrients.

**Table 1: Fertigation schedule for table grapes (Thompson Seedless 2 to 5 year age) example (266 kg N, 177.50 kg $P_2O_5$ and 266 kg $K_2O$/ha/year) under saline irrigation**

| Growth Stage | Expected duration (days after pruning) | Month of operation | Nutrient application (kg/ha) | | |
|---|---|---|---|---|---|
| | | | N | $P_2O_5$ | $K_2O$ |
| **Foundation Pruning** | | | | | |
| Shoot growth | 1-30 | April-May | 60 | - | - |
| Shoot growth | 31-40 | April-May | 20 | 35.5 | - |
| Fruit bud differentiation | 41-60 | May-June | - | 71 | - |
| Cane maturity and Fruit bud development* | 61-120 | June-August | - | - | 80 |
| 121 days - fruit pruning* | 121 - | August- Fruit pruning | - | - | - |
| **Fruit Pruning** | | | | | |
| Shoot growth | 1-40 | October- November | 80 | - | - |
| Bloom to Shatter | 41-55 | November- December | - | 26.5 | - |
| Berry growth and development | 56-70 | December - January | - | 26.5 | - |
| Berry growth and development | 71-105 | December - January | 80 | - | 80 |
| Ripening to Harvest | 106- harvest | January - March | - | - | 80 |
| Rest period | Harvest to foundation pruning (20 days) | March-April | 26 | 18 | 26 |

*Note:* The nutrient doses given for fertigation should be modified according to the petiole nutrient status of the vines, as over the year's nutrient build up in the soil increases.

- Due to large variation in the type and content of calcium carbonate in soil, no specific recommendations are available. However, under established deficient conditions, on an average 50 kg per hectare each of zinc sulphate, ferrous sulphate and manganese sulphate should be applied per season.
- Micronutrients are preferably applied as foliar application and based on petiole analysis. On an average, 3-4 sprays of 0.2–0.4 % of sulphate forms of Zn, Mn and Fe in a pruning season meet the crop needs.
- Boron is strictly applied on the basis of petiole analysis report.

## Fertilizers and their grades used for fertigation

i) All the nutrients are available in optimal quantity in the soil in the pH range of 6.0 - 6.5. The pH and EC of the commonly used liquid fertilizers is given in Table 2. The fertilizer solution with pH less than 3.5 is highly corrosive to metals. Further, in high bicarbonate waters acidic fertilizers should be added to avoid or at least minimize precipitation of $CaCO_3$, which may clog the drippers.

ii) Fertilizers that are used in fertigation system must have a high rate of solubility. e.g. urea, ammonium nitrate, ammonium sulphate, mono-ammonium phosphate, phosphoric acid, potassium nitrate to name a few from many grades available in the market.

**Table 2. pH and EC of some fertilizers at a concentration of l g/l of distilled water**

| Fertilizer | pH | EC (dS/m) |
|---|---|---|
| Ammonium sulphate | 5.4 | 1.06 |
| Urea | 8.0 | 0.001 |
| Liquid ammonium nitrate | 6.6 | 0.87 |
| Potassium nitrate | 8.5 | 1.00 |
| Mono-ammonium phosphate | 4.0 | 1.00 |
| Mono-potassium phosphate | 4.5 – 5.0 | 0.75 |

iii) Mixing the solutions of two soluble fertilizers can sometimes result in the formation of a precipitate. Such cases indicate that these fertilizers are not mutually compatible, and special attention has to be paid to avoid mixing them in one tank. Their solutions should be prepared in two separate tanks. If two chemical compounds with a relatively high water solubility rate are mixed and mixing new compounds with a lower solubility are created, this will always be the direction of reaction.

Table 3 makes it clear that neither phosphoric nor sulphate fertilizers should be mixed with calcium fertilizers in the same tank. This separation prevents precipitation of calcium phosphate or calcium sulphate compounds in the tank or in the pipeline.

**Table 3. Inter-compatibility of soluble fertilizers**

| Fertilizer | Abbr. | Ur | AN | AS | MAP | MKP | PN | PN+ Mg | PN+P | SOP | CN | CaCl2 | Mg+N |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| Urea | Ur | | | | | | | | | | | | |
| Ammonium nitrate | AN | C | | | | | | | | | | | |
| Ammonium sulphate | AS | C | C | | | | | | | | | | |
| Mono-ammonium phosphate | MAP | C | C | C | | | | | | | | | |
| Mono potassium phosphate | MKP | C | C | C | C | | | | | | | | |
| Multi-K (potassium nitrate) | PN | C | C | L | C | C | | | | | | | |
| Multi-KMg | PN+Mg | C | C | L | L | L | C | | | | | | |
| Multi-NPK | PN+P | C | C | C | C | C | C | X | | | | | |
| Potassium sulfate | SOP | C | C | C | C | C | C | C | C | | | | |
| Calcium nitrate | CN | C | C | L | X | X | C | C | X | L | | | |
| Calcium chloride | CaCl2 | C | C | L | X | X | C | C | X | L | C | | |
| Magnesium nitrate | Mg+N | C | C | C | X | X | C | C | X | C | C | C | |
| Magnesium sulfate | MgS | C | C | C | X | X | L | C | X | C | L | L | C |

C – Compatible, L – Limited compatibility, X - Incompatible

**Calcareous soil:** Calcareous soils have high calcium carbonate content that upon dissolution results in a high bicarbonate ($HCO_3$-) concentration in solution which buffers the soil in the pH range of 7.5 to 8.5. In general, the presence of $CaCO_3$ directly or indirectly affects the chemistry and availability of nitrogen, phosphorus, magnesium, potassium, manganese, zinc, copper and iron.

Improving calcareous soils requires not only reducing the soil pH but also neutralizing calcium carbonate in soil. For this the most cost-effective solution is elemental Sulphur. Application of 50-100 kg elemental Sulphur in each pruning season on a per acre basis will be desirable depending upon CaCO3 content. If soil has high calcareous content, regular application for at least 2-3 year will be required. Even reduction in soil pH will improve the availability of phosphorus and micronutrients in the soil.

To maximise the nitrogen use under such situations, it is imperative that ammonium sulphate or urea are applied in splits through fertigation so, that along with water the nitrogen reaches to the root zone where they are utilised immediately and not left for ammonia volatilisation losses on the surface.

Soluble P fertilizers (phosphoric acid, triple superphosphate, ammonium phosphates etc.) are the preferred source in calcareous soils. Organic matter has been found to interfere in the fixation reactions of P with lime. Thus, application of more organics in the soil will improve the P availability to the vines. 3-4 foliar application of potassium during foundation as well as fruit pruning season is advised.

**Fig 1. Calceareous soil**

Application of soluble magnesium sources like Magnesium sulphate, magnesium nitrate etc. in multiple splits through fertigation will improve the magnesium availability to the grapevine. Apart from that, 3-4 foliar application of magnesium during foundation as well as fruit pruning season is advised.

Iron is considerably less soluble than Zn or Mn in soils with a pH value of 8. Wherever, the problem of lime induced iron chlorosis is there, inorganic iron fertilizers like Ferrous sulphates should be applied in more splits and in high quantity through fertigation to make it available to the plants. The other option is soil application of Fe-EDDHA, chelated form of iron. Foliar sprays (2-3) of ferrous sulphate (@ 2-3g/L) will provide temporary relief. However, the pH of the spray solution should be acidic. This should be followed by application of ferrous sulphate @ 25-30 kg/ acre through fertigation in multiple splits or Fe-EDDHA.

Zinc is also less available in calcareous soil due to high pH of the soil. Zinc forms precipitates like Zinc hydroxides and Zinc Carbonate that are insoluble and unavailable to the vines. Chelated Zn remains soluble and available to plants considerably longer than the inorganic forms like Zinc sulphate. But the availability of zinc sulphate can be improved by split application through fertigation. Around 15-20 kg Zinc Sulphate on per acre basis will be sufficient per pruning season. This should be coupled with foliar sprays (1-2 g ZnSO4/L) to improve the petiole zinc content.

Soil pH affects boron availability more by sorption reactions than by formation of less soluble compounds. Availability of boron is highest in the pH range of 5.5-7.5. High levels of Ca at high pH reduce the uptake of B. This may explain the fact that high boron levels in calcareous soils, considered as toxic in other conditions, may not produce boron toxicity in vines.

## Sodic soil

Soils are considered sodic if more than six percent of the CEC is occupied by sodium, and highly sodic if the figure is greater than 15 percent. The sodium dominates the exchange complex in comparison to calcium and magnesium and thereby affects the soil structure. Dispersion of clay particle and swelling of the soil occurs. The clay particles then block the pore spaces thereby restricting the movement of water and air through the soil. This leads to water logging, less water storage in soil, soil crusting and more runoff from the soil.

The problems related to sodicity in different regions are becoming obvious in vineyards having ESP in the range of 6-8 percent depending on soil potassium levels and soil type. Irrigation water is the major source of sodium hence those having irrigation water high in sodium needs planning to reduce its build up right from planting stage. The impact of the sodicity is both direct and indirect. The indirect impact is due to poor soil structure. Soil with poor structure or compact soil will reduce the root growth, soil aeration and ultimately nutrient uptake thus making the vine weak. The weak vines will be vulnerable to disease and pest attack.

**Fig. 2a. Leaf blackening**

**Fig. 2b. necrosis caused by sodium toxicity and potassium deficiency**

Leaf blackening and necrosis has been found in the vineyards due to sodium toxicity and potassium deficiency. The symptoms are sometimes observed first on upper leaves of the shoot and sometimes on the lower leaves (Fig 1.).

The most common method to improve sodic soil is by applying amendments like gypsum or sulphur (Table 4). Gypsum is calcium sulphate ($CaSO_4$ $2H_2O$). It acts by replacing the sodium on the soil exchange complex and the sodium thus, displaced from exchange complex is leached by applying more water. In case of calcareous soils, sulphur should be used as amendment. The sulphur reduces the pH of the soil thereby leading to dissolution of calcium carbonate. This calcium then replaces sodium in the exchange complex. If subsoils are sodic, deep ripping may be necessary to help distribute the gypsum in the deeper layers before planting the vines.

**Table 4: Estimated efficiencies for various materials to reclaim sodic soils compared to gypsum**

| Material | Tons of materials equivalent to 1000 kg of gypsum |
|---|---|
| Gypsum | 1000 |
| Sulfuric acid | 570 |
| Sulfur | 180 |
| Lime-sulfur | 750 |

# Judicious use of Plant Growth Regulators in Grapes

**Dr. S.D. Ramteke**
**Principal Scientist (Plant Physiology)**

## Plant Growth Regulators

In plants, many behavioural patterns and functions are controlled by hormones. These are "chemical messengers" influencing many patterns of plant development. Plant hormones – a natural substance (produced by plant) that acts to control plant activities.

- Are produced in one part of a plant and then transported to other parts, where they initiate a response.
- They are stored in regions where stimulus are and then released for transport through either phloem or mesophyll when the appropriate stimulus occurs.
- Plant growth regulators – include plant hormones (natural & synthetic), but also include non-nutrient chemicals not found naturally in plants that when applied to plants, influence their growth and development.

5 recognized groups of natural plant hormones and growth regulators.

- Auxins
- Gibberellins
- Cytokinins
- Ethylene
- Abscisic acid

Plant's growth and development are under the control of two sets of internal factors.

- Nutritional factors such as the supply of carbohydrates, proteins, fats and others constitute the raw materials required for growth.
- Proper utilization of these raw materials is under the control of certain "chemical messengers" which can be classified into hormones and vitamins.

**Hormone:** The site of synthesis is different from the site of action. Plant hormones are physiologically active. The term Hormone is derived from a Greek root 'hormao' which means 'to stimulate' (Beylis and Starling, 1902). Thimann (1948) suggested using the term 'Phytohormone' for Hormones of plant.

**Phytohormones** are organic substances produced naturally by the plants which in minute/low concentration increase, decrease or modify the growth and development.

## Classification:

**Natural hormone:** Produced by some tissues in the plant. Also called Endogenous hormones. e.g. IAA.

**Synthetic hormone:** Produced artificially and similar to natural hormone in physiological activity. Also called Exogenous hormones. e.g. 2, 4-D, NAA etc.

**On the Basis of Nature of Function**

**Growth promoting hormones/Growth promoter:** Increase the growth of plant.

e.g. Auxins. Gibberellins, Cytokinins etc.

**Growth inhibiting hormones/Growth retardant:** Inhibit the growth of plant.

• e.g. ABA, Ethylene.

**Table 1: Application of bioregulators in Grapes at different stages after fruit pruning**

| S. No. | Days after pruning | Growth Stage | Chemical | Concentration /dose |
|---|---|---|---|---|
| 1 | 1-2 | After pruning | Hydrogen cyanamide 50 SL | 30-40 ml/l |
| 2 | 21-24 | Parrot green (Prebloom) spray | Gibberelic acid (GA3) technical | 10 ppm |
| 3 | 23-27 | 2nd prebloom dip | GA3 technical | 15 ppm |
| | | | Urea phosphate | 1000 ppm |
| 4 | 48-50 | After berry set 3-4 mm | GA3 | 40 ppm |
| | | For white seedless | Forchlorfenuron (CPPU) 0.1% L | 2 ppm |
| | | For color seedless | Forchlorfenuron (CPPU) 0.1% L | 0.5 ppm |
| 5 | 60-62 | After berry set 6-7 mm | GA3 | 30 ppm |
| 6 | 50-70 | Once before or at veraison | Calcium nitrate | 5000 – 10000 ppm |

## Do's and Don'ts for application of bioregulators

### Cluster and berry thinning

**Do's**

- Spray GA3 @ 10 ppm at parrot green stage of cluster and 15 ppm GA3 after 4-5days of 1st spray.
- GA3 spray solution should be acidic (pH 5.5 - 6.5). Use citric or phosphoric acid or urea phosphate as a adjuvant to lower down the pH of spray solution.
- Dip the clusters with 40 ppm GA3 at 50% flowering if necessary. Treat individual cluster selectively.
- Cut the tips of clusters immediately after set by retaining 8-10 apical branches depending on the number of leaves available for a bunch.
- Thin the berries manually before 3-4 mm berry size stage.
- If thinning is inadequate remove the alternate branch of the rachis to retain 5-6 branches and clip the tip of the bunch 8 days after set.
- Use sufficient spray solution to have optimum coverage of foliage as well as clusters.

**Don'ts**

- Do not use the solvent (acetone / methanol) more than 30 ml per g of GA3.
- Do not spray GA3 at pre-bloom stage without fungicide if the weather is cloudy and humid, particularly if it is likely to rain, to avoid excessive flower drop.

- Do not spray GA3 at full bloom or immediately after berry set to avoid berry shatter and formation of shot berries.
- Do not girdle the vines before 3-4 mm berry size stage.
- Avoid injury to the berries while thinning mechanically by scissors.
- Do not use IAA along with GA3 for cluster elongation.

## Berry size

**Do's**

- 1-2 ppm CPPU to 30-40 ppm GA3 and dip the clusters in the mixed solution once at 3-4 mm stage and again at 6-7 mm berry size stage. Selection of concentration of growth regulators for dipping should depend on the number of leaves available per bunch.
- Clip off the tip of the cluster by 1/3rd or 1/4th of its length, since the under developed berries are mostly formed in the lower half of the bunch.
- Ensure that all berries in a cluster receive all GA3 treatments uniformly.
- Ensure adequate leaf/fruit ratio for a developing bunch (6-8 berries/ leaf).

**Don'ts**

- Do not allow the clusters to develop on a shoot having less than 8 leaves.
- Do not treat the clusters with CPPU when the bearing shoot has inadequate leaf area, and the shoots are less vigorous.
- Do not delay berry thinning beyond 8-10 mm stage of berry.

❄❄❄

# Weather forecasting and its importance in disease management

**Dr. Sujoy Saha**
**Principal Scientist (Plant Pathology)**

Downy mildew (*Plasmopara viticola*), Powdery mildew (*Uncinula necator*) and Anthracnose (*Elsinoe ampelina*, anamorph *Sphaceloma ampelinum* (Syns.) *Gloeosporium ampelophagum*), are the three most important diseases of grape. These diseases have rapid repeating cycles in the same season and have potential to develop into epidemics if proper control measures are not taken in time and can cause severe to near total losses.

In major grapes growing areas in Maharashtra, Telangana and Karnataka regions adjoining Maharashtra, 'two pruning - one yield' system of grape cultivation is followed wherein foundation pruning is done during April and forward or fruit pruning is done during October. The growth after foundation pruning is not exposed to high disease risk, as by the time rain start the leaves are already matured. Only young growth when gets wet or humid conditions are in risk of diseases and infections on young growth leads to economic losses. In most grape growing areas mentioned above, normal time of forward pruning is around 15th of October, but it can range from first week of July to last week of November. From disease management point of view forward pruning taken before 15th of October, has greater risk of downy mildew, as there are more chances of rains and temperature is warmer. After forward pruning about 8-10 days are needed for sprouting of buds. Thereafter, on an average every three days interval, new leaf is developed. At fifth leaf there will be a bunch, which takes about 35 to 45 days from forward pruning to develop to flowering stage and by 50 to 55 days for fruit set in. First 50 to 55 days after pruning, risk of damages due to downy mildew infection on bunches is very high. Rains and heavy dew during this period helps development of downy mildew on bunches. Leaf wetness for continuous period of three hours after sunrise is favorable for new infection. If such conditions prevail during first 55 days of pruning sprays of fungicides are needed at shorter intervals for effective control of downy mildew. Berries develop to 10 to 12 mm size within first 70-75 days of forward pruning and thereafter the risk of downy mildew gradually reduces. Rains during November and December are rare, but in years when it rains during November or thereafter, heavy losses due to downy mildew are observed. Normally, 5 to 6 sprays of fungicides are required during first 55 days of pruning for effective management of downy mildew. This number of sprays may be increased to 9 in the event of rains during November December, while it can be reduced to 3-4 when wet weather is absent after forward pruning.

Because all these three diseases can cause near total losses under favourable environmental conditions, growers as a precaution rigidly follow predetermined spray schedules throughout the susceptible period. While such a system may be advantageous when environmental conditions are continuously favourable for disease development, it often leads to increase in cost of cultivation due to extra use of fungicides and labour. Under unfavourable weather conditions to diseases, risk of losses due to diseases are much less and plant protection cost can be reduced by increasing gap between two preventive sprays or by using less costly non-systemic fungicides instead of costly systemic fungicides, during low disease risk periods.

The occurrence and severity of these diseases is dependent on weather conditions and hence, it is possible to forecast likely risk of development of these diseases in prevailing meteorological conditions based on thorough

knowledge of their epidemiology. For such predictions 'Disease Forecasting Models' have been developed. These models are used for taking day to day decisions on spraying of fungicides in vineyards for disease management. The data on critical weather parameters for disease development are primary inputs for such models. Even though diseases are the interaction of host plant, the pathogen and environment, the disease forecasting models estimate disease risk in prevailing weather conditions, assuming the active pathogen is always present. Thus decision on sprayings can be taken after considering condition or growth stage of the host plant.

Some of the relevant information for forecasting of above three diseases has been summarised below:

## Downy mildew

### Primary inoculum

In southern India from April to June the pathogen survives in soil as oospores or resting sporangia or on twigs as dormant mycelium. Primary inoculum becomes active if soil and / or foliage remains wet at least for 22 to 24 hours due to rain / irrigation / dew and when temp. is above 9–10°C (Mathew and Heyns, 1969; Magarey and Wicks, 1985). Primary inoculum produces sporangia, which germinate to develop water-borne zoospores. These zoospores infect foliar plant parts through stomata or lenticles. The 'oil spots' and downy growth consisting of wind borne sporangia are developed after about 3-7 days of incubation, depending on temperature and plant growth stage.

### Secondary inoculum

Sporangia developing out of infections caused by primary inoculum are secondary inoculum and are responsible for spread and development of the disease in vineyard under favourable conditions of weather, plant growth stage etc.

**Weather parameters**

**(i) Sporulation:**

- At least 4 hours of darkness, more than 98 % RH, and temperature more than 13°C is required for sporulation on lesions (Bleaser and Weltrian,1978; Brook, 1979).

**(ii) Infection:**

- Availability of viable sporangia and > 2 hrs. leaf wetness during early morning, is required for infection.
- The disease is developed early and is more severe in vineyards irrigated at shorter intervals than in those irrigated at longer intervals.
- On the basis of regression analysis scientists have indicated that following conditions favour primary infection

  i. Rainy weather for 3-4 days sufficient to keep the leaves wet

  ii. Temperature: 17-32.5°C

  iii. Afternoon RH more than 48 %

- For secondary spread mean maximum temperature from 27-30 °C, mean minimum temperature from 11-22.5 °C and RH from 88-90 °C were favourable.

- Similarly, it has been shown that the disease can occur when temperature is in the range of 10.2 to 31.5 °C, and RH is in the range of 47–97% for three days. However, the rate of disease multiplication becomes zero if during these three days the temperature remains more than 28 °C for 17 hours, and more than 90% RH is maintained for only 9 or less hours.

### Growth stage and disease

Earliest downy mildew infection can occur at 3-leaf stage after budbreak. A new leaf becomes susceptible after every 3 days. Relatively older leaves (34-48 days old) develop disease faster than younger (14-18 days old) leaves. Flower buds show maximum downy growth. In case of mustard and pea size berries downy growth is restricted to pedicle end, while no growth is seen on berries whose diameter is more than 12.5 mm or 1 month after their set.

## Powdery mildew

### Primary and secondary inoculum

Dormant mycelium in buds is the primary source of inoculum, which becomes active as the new shoot develops from the bud. Conidia, which are air borne, and develop on foliar parts are responsible for secondary spread. It is believed that the powdery mildew is active throughout the year in at least one grape growing area in southern India.

**Weather parameters**

- Low humidity, cloudy weather are favourable for disease development, while heavy rains, and hot and dry weather are unfavourable for the disease.
- The pathogen does not grow if temperature is below 10°C or above 37.7°C (Butler and Jones, 1949).
- Minimum temperature in the range of 20.1-21.9°C and RH in the range of 57.6-68.2% were favourable for powdery mildew.
- More than 40% RH during afternoon, with temperature ranging between 17-34°C helps in the establishment of epiphytotic of powdery mildew.
- Temperature in the range of 11-32°C and more than 57% RH favoured the disease development. While temperature below 8.6°C or above 34°C and RH below 47% show zero rate of disease development.

### Growth stage and disease

The fungus can attack all growth stages of vines. Berries are susceptible from 2 weeks after bloom till veraison. After veraison normally the disease is not developed on berries, but green rachis can develop powdery mildew infection affecting shelf life of the table grapes.

## Anthracnose

### Primary and secondary inoculum

Cankerous lesions on the canes, bud spurs, stems and branches are the main primary inoculum. Rain / dew are required for the sporulation of the pathogen. Young developing tissue in the foliage are susceptible. The fungus can invade directly. The conidia developing from lesions caused by primary inoculum are secondary inoculum. The secondary inoculum produces conidia which again causes infection. This cycle repeats itself many times in the season depending on weather conditions.

**Weather parameters**

- Presence of high temperature along with high RH during new shoot development favours the disease. Relative humidity and precipitation were more important for disease development than temperature. Rain or dew favoured the spread of the spores and their germination. Already formed lesions continue to increase in size even in the absence of rain.
- The fungus grows in temperature between 9-35°C, while maximum growth and sporulation was observed at 29°C and no growth at 40°C.
- The disease appeared when mean max. temperature was in the range of 29–29.8°C, mean min. temperature was in the range of 21–22°C, and when the RH was in the range of 82–95%.
- Rainfall of 49.99 mm distributed over 3-16 days per week and prevalence of cloudy weather helped to cause severe infection on susceptible young tissues.
- Darkness was most congenial followed by diffused light for the growth and sporulation of the fungus

## Growth stages

The disease occurs on all young green plant parts of the grapevine. A 20-day-old leaf becomes resistant to anthracnose.

## Methods of disease forecasting

Above mentioned epidemiological information is used for developing forecasting models, where regression equations are established indicating relations of key factors such as weather parameters (Rain, Temperature, R.H., Leaf wetness period etc.), Susceptible growth stage/ variety, Time lapsed after last spray (systemic/ nonsystemic) of fungicide, with rate of disease development. With the help of such equations one can estimate the rate of disease development under prevalent conditions in specific area or vineyard. With the help of such estimated rate of disease development predictions are made on the possibility of disease outbreak with reasonable accuracy and well in advance of actual outbreak of the disease. Growers thus can undertake suitable control measure well in time and only when it is actually required. Forecasting of diseases thus will be beneficial in two ways

1. For effective control of disease by application of suitable fungicides when inoculum load is minimum and before the severe outbreak of the disease
2. For avoiding unnecessary sprays when there is no possibility of disease outbreak

**Basic requirements for forecasting diseases:**

1. Weather data recording device, which can record data continuously at predetermined intervals
2. Forecasting model that can predict the possibility of disease outbreak using recorded weather data and other vineyard information
3. Specific recommendations on control measures to be adopted under predicted severity of disease outbreak

Currently compact computerized devices consisting of all three above requirements are available commercially for the forecasting of specific diseases of specific crops. Computer softwares for forecasting grape diseases and pests are also available outside the country, which can be used on any PC if weather data is available.

## Forecasting based disease management

### Downy mildew

What is actually done on computer can also be done manually? One such forecasting model for forecasting of downy mildew in grapes was proposed and it is mentioned below as an illustrative example.

Tentative forecasting can be done with the help of manually recorded observations. However it is practically very difficult to record the needed observations as many of them are to be observed during night. Automatic weather data recorder therefore is indespensible to record authentic data on which the accuracy of the forecasting is dependent. In India several organizations offers Automatic Weather Stations (AWS) alongwith software for disease forecasting which can be easily installed in vineyards, which shows weather data and disease risk on small LCD screen with press of button. ICAR-NRC for Grapes, has developed and commercialized model for management of downy mildew and powdery mildew which can take data from any AWS.

### Powdery mildew forecasting model

For germination of the spores minimum temperature should not be less than 6°C. For infection and spread 17°C temperature is required. Germination of spores, infection and spread of the disease is maximum between 21-30°C temperature. If the leaf temperature is between 31.5-33.5°C, then spores will not germinate.

Research conducted at Agriculture Meteorology Centre for Higher Studies, Agriculture College, Pune has shown that maximum incidence of powdery mildew will be at 10.5-30.7°C temperature and 53.4-97% RH. Powdery mildew does not grow at temperature below 7.7 or above 33.3°C or at RH below 47.4%. Based on temperature and relative humidity the 'climatic disease severity values' were fixed in a scale of 0-2 as shown below:

| **Micro-climate at canopy** | **Climatic disease severity value** | | |
|---|---|---|---|
| | **0** | **1** | **2** |
| Minimum temperature (°C) | <7.7 | 7.7-10.5 | >10.5 |
| Maximum temperature (°C) | >33.3 | 31.1-33.3 | <31.0 |
| Maximum RH (%) | >99 | <86 | 86.99 |
| Minimum RH (%) | <47 | 47-57 | >57 |

Using daily observations on all four parameters, disease severity values for the day are estimated. The cumulative values are estimated for 4 to 8 successive days. When the cumulative total of these values exceeds 34 the risk of powdery mildew starts. Severity of the disease risk is determined on number of days required to accumulate cumulative value 34. The spray for management of powdery mildew should be taken up during the risk period. While choice of fungicides and time of spray is based on severity of risk and actual growth stage in vineyard in question.

Growers can record the data on temperature and RH in their vineyards by the use of minimum-maximum thermometer and wet and dry bulb thermometer and use this chart to forecast powdery mildew in their vineyards. ICAR-NRC for grapes, Pune has made the disease forecasting and decision support system available to grape growers and the program is installed in computer, and input on weather parameters and growth stage in entered manually to get the estimated risk of powdery mildew and advice on actions to be taken for management of the diseases.

## Weather forecasting and disease management

All disease forecasting methodologies mentioned above are based on actual weather data recorded on weather stations. However, now technology is available to forecast weather very accurately for next 7 days. Forecast on possibility of rain, extent of cloud cover, temperature, humidity, etc is obtained using satellite information. Many website give such forecast free of cost. NRC for Grapes, Pune gives summery of weather forecast of 7 days, for major grape growing areas on their web site. http://nrcgrapes.nic.in/ On this website click on menu "Weekly Advisory" to get the weather forecast and related advice on plant protection. To know more details on weather at location of your interest one can see different links given on this page. Those links are

https://www.wunderground.com/?cm_ven=cgi
https://imdagrimet.gov.in/weatherdata/BlockWindow.php
https://www.timeanddate.com/weather/india

All above sites give information based on relatively low resolution data of satellites, where level of accuracy is relatively low. Information given is village or city specific. Now a days, very small location specific weather forecast can be generated, using high resolution satellite data. Using GPS (Geographical Positioning System) one can easily find out longitude and latitude of location of interest, and locate that location on globe in digital map. Using the geographical position of any location, and high resolution satellite data, one can generate weather forecast for that location. If the weather forecast is accurate, one can estimate level of risk of the important diseases in a similar manner as it is estimated from recorded weather data. In case of grapes, risk of disease is normally associated with growth stage also. If both, weather related risk and growth related risk is known one can take decision whether control measure is needed or not.

## How weather forecast helps in scheduling sprays for management of downy mildew and powdery mildew?

Location specific weather forecast for next 5 to 7 days is now a days available on internet. Information on forecast of rain is often useful in scheduling sprays for management of downy mildew, especially during critical stages of growth. In most cases rainy condition do not last for period more than 2 to 3 days. Preventive spray given before rains often protects vineyard from downy mildew for 2 to 3 days of rainy condition. Even if new downy mildew infection takes place, its establishment and appearance of first symptom such as oily spots and subsequent sporulation needs at least 3 days after infection in most favourable conditions. This means if the preventive spray is given just before rains, the grower can safely wait for 3 to 4 days of rainy weather and give subsequent spray only after rains have stopped. However, this can be effectively done when location specific weather forecast is available. If probable time of expected rains is known sprays can be given 1 to 2 days before rains and then if required next spray can be given after receiving few showers and on the day when rains are not likely. Second spray can also be decided on the basis of actual presence of active disease in vineyards, and forecast on possibility of rains during next few days. With such a strategy many sprays can be avoided and sprays can be given when actually needed.

Overcast cloudy conditions often present continuously for long period without actual rain in the area. Such conditions often increase the risk of powdery mildew. Powdery mildew sprays are often given at long intervals based on growth stages. These intervals can be reduced or extended based on information on cloud cover.

## Strategies for choice of fungicides in disease management

List of recommended fungicides for use in grapes for management of different diseases is updated every year by ICAR-NRC for Grapes, Pune. All the fungicides listed the list not only have been tested effective by ICAR-

NRC for Grapes, Pune or the Centres of All India Co-Ordinated Research Project, but necessarily have label claim registered with Central Insecticide Board (CIB), where in target disease, dose, PHI (Pre-harvest interval), and MRL (Maximum Residue Limit) is mentioned. Therefore any of the fungicide listed in the list can be used for management recommended target pathogen.

The fungicides have been classified in to two catogories viz. systemic fungicides and non-systemic fungicides. Downy mildew risk after forward pruning starts after 3 leaf stage (10 to 12 days after forward pruning) and lasts normally up to fruit set (About 50 days after forward pruning.). During this period shoot is continuously growing giving out one leaf at 3 days interval. This means at every 3 days one leaf on each can will be emerged which is not protected by fungicide sprays. To protect such leaves systemic fungicides are needed. Fungicides are efficiently systemic in young growing leaves, hence they are best used on young leaves.

Systemic fungicides are very specific in their mode of action and thus pathogen can develop resistance against systemic fungicides relatively with ease. Non-systemic fungicides have multipoint mode of action and so, resistance development against non-systemic fungicides is very rare. Resistant fungus to systemic fungicide can be killed by non-systemic fungicide. Hence, use of systemic fungicide along-with non-systemic fungicide, or spray of non-systemic fungicide within short interval after the spray of systemic fungicide, will often help in reducing the chances of field establishment of resistant pathogen against systemic fungicide in vineyard.

Suggested spray interval for most systemic fungicide formulations is 5 days during risk period for downy mildew. If presence of favourable conditions for target disease within 5 days after spray of systemic fungicide are observed, additional spray of non-systemic fungicide effective against same target disease is suggested for better disease management.

The pathogens develop resistance against some systemic fungicides, much faster than other fungicides. Such fungicides are classified as high risk fungicide. FRAC (Fungicide Resistance Action Committee) a official technical group of "Crop Life International" collects all relevant information and classify every fungicide under high risk, medium risk, low risk and no risk groups. The detail updated information is available on their website http://www.frac.info/frac/publication/q_publication.htm The FRAC also prepare resistant management strategy for every group of fungicides.

Like fungicides some pathogens develop resistance to most systemic fungicides much faster than other pathogens. Such pathogens are also high risk pathogen. For example downy mildew develops resistance much faster than powdery mildews. Thus use of high risk fungicides for downy mildew has double risk.

Theoretically, chances of development of resistance are more when high risk fungicide is used as curative instead of preventive. Hence, high risk fungicides should not be used as curative, or after the outbreak of the disease. However, in case of downy mildew very few fungicides have been classified as medium risk or low risk fungicides. Fungicides amisulbrom, cymoxanil, dimethomorph, and iprovalicarb are medium risk fungicides among recommended fungicides for management of downy mildew. Hence, it is suggested to use them during early growth stages or as curative when unavoidably needed.

For management of powdery mildew, fungicides belonging to triazole group (SBI fungicides) are more preferred, over strobilurin (QOI fungicides) fungicides as later are high risk fungicides.

In the recent times, use of biological control agents are highly recommended along with fungicides.

## Integrated disease management for residue free grapes

Commercial grape varieties belonging to Vitis vinifera are highly susceptible to three important disease viz. downy mildew, powdery mildew and anthracnose. However, during recent times rust infection is becoming serious in certain areas, especially in the nurseries. Similarly in hotter areas, where warm and humid conditions prevail bacterial infection is also seen. Both rust and bacterial spot diseases cause premature leaf drop. Grapevine leaf roll associate virus-3 too has been observed in some vines. The incidence and severity of most of the grape diseases depend on young growing tissues and weather conditions. Generally from April to first week of June the climate is hot, and hence there is less chance of disease development, but during south-west monsoon season chances of infection of powdery mildew, downy mildew and anthracnose are increased. Thus, the strategy of disease management after foundation pruning, aims at providing protection during wet weather to reduce the disease.

### 1. Downy mildew

Downy Mildew (c.o. *Plasmopara viticola*) is the most destructive disease of grape and causes colossal losses under favourable conditions. White downy growth is seen on the leaves, cluster, flowers, rachis, pedicle, young berries or young shoots. On the upper leaf surface yellow circular spots with an oily appearance in white grape varieties and red spots in coloured grape varieties are observed while the white downy growth later can be seen on the lower leaf surface on the underside of these spots (Fig 1A and B). Young clusters turn necrotic and young infected berries appear greyish (Fig. 1C).

A temperature of 17 to 28ºC with a rainfall/irrigation of 10 mm and relative humidity more than 40% favors infection. Wetness of leaf or soil further predisposes the plants to the disease. If running water flows in the vines for 2-3 days, then there is a high probability of disease incidence. A moist, dark condition following a period of light favours maximum sporulation.

**Fig. 1A. White downy growth underside of leaves**

**Fig. 1B. circular spots with an oily appearance on upper side of leaves**

**Fig. 1C. Young clusters turn necrotic**

Downy mildew infections are first observed after the start of the monsoon rain and when the maximum temperature is below 30ºC. Several cultural practices like removal and burning of infected leaves as well as removal of excess new shoot growth during monsoon may help in reducing primary infection. Proper tying of shoots to the trellis and avoidance of excess doses of nitrogen also reduces the primary inoculum.

Systemic fungicides for the control of downy mildew are not encouraged after foundation pruning. Low risk systemic fungicides are used during 25 days after fruit pruning and after high risk fungicides are used. In one fruiting season maximum 5 sprays of low risk systemic fungicides and 2 to 3 sprays of high risk fungicides are recommended. Prophylactic use of Mancozeb 75WP is recommended as it inhibits the formation of secondary haustoria and growth of mycelium. A tank mix of potassium salt of phosphorus acid @4g/L and Mancozeb75WP

@ 2g/L gives a good control of the disease. The current list of fungicides, their nature, recommended doses, pre harvest interval (PHI) and the European Union Maximum Residues Limit (MRL) are given in Annexure 5 of Residue Monitoring Programme. The regularly updated list can be accessed at https://nrcgrapes.icar.gov.in/. Warning system through weather based advisory enable effective control of downy mildew with reduced numbers of sprays.

## 2. Powdery Mildew

Powdery Mildew (c.o. *Erysiphe necator*) is a serious problem during the vegetative growth phase especially when cloudy and humid conditions prevail. Thick canopy creates favorable conditions for disease development. Optimum temperature for growth is 20-27°C but no fungal growth occurs below 6˚C or above 32˚C. Relative humidity more than 60% favour and less than 30% does not favor the disease respectively.

The first powdery mildew lesions are frequently found on the undersides of leaves. As the disease progresses, lesions become apparent on the upper sides of leaves as well (Fig 2 A). Grey to whitish powder is usually seen on rachis and severe infections of the rachis can result in clusters being dropped. Berries turn into an ash grey colour and quickly become covered in spores giving them a floury appearance (Fig. 2B). Affected berries dry out and may drop off.

**Fig. 2A. Berries covered with powdery growth**

**Fig. 2B. powdery growth on the surface of leaves**

Cleistothecia of the fungi is not found in India due to the absence of mating types. Excessive use of nitrogen fertilizer should be avoided and by removing non- photo synthetically active and non-bearing shoots will help to open up the canopy and improve the efficacy of spray application. Bacillus subtilis @2g/L and Ampelomyces quisqualis@ 4-5g/L gives a good control of the disease and should be applied during the rainy season when humidity is high for their profuse multiplication. Though a number of fungicides have been evaluated against powdery mildew, at present only the following are registered for use in grapes in India. The regularly updated list can be accessed at https://nrcgrapes.icar.gov.in/.

## 3. Anthracnose

Anthracnose (c.o. *Colletotrichum gloeosporioides*) occurs during warm, wet and cloudy weather and can cause complete kill of new growth, reduce the vigor, fruit falling, yield and quality. The disease occurs mainly during monsoon corresponding to vegetative growth season.

Small, yellowish spots on the leaves are seen, which turn into circular, grey lesions (Fig. 3A). Numerous lesions are formed on the leaf and the dead tissue drop out the spots causing hole in the centre, which is a typical

symptoms of anthracnose called as “Shot Hole” (Fig. 3 B). The lesions may show cracking at the late infection stage and if the infection is at the base of the stem, the stem may crack and break.

To control the disease all shoots canes with anthracnose lesions should be removed at the time of pruning. Through a number of fungicides have been evaluated against anthracnose, at present only the following are registered for use in grapes in India. The regularly updated list can be accessed at https://nrcgrapes.icar.gov.in/.

**Fig. 3A. Yellowish spots on the leaves**

**Fig. 3B. Shot hole Symptoms due to Anthracnose disease**

## 4. Rust

Rust (c.o. *Phakospora euvitis*) can cause severe defoliation during July-August and January-February, which usually coincides with veraison and thus hampers the berry ripening and development. After the introduction and adoption of Dogridge as a rootstock for table grapes, rust was observed on Dogridge rootstock plants and from the infected Dogridge plants it was seen getting transmitted to the scion plants. Thus, in recent years rust is also being observed during September-October i.e. at the end of monsoon period on Thompson Seedless and its clones in Maharashtra.

Characteristic sign of the disease are numerous yellow-orange colored pustules present on the lower surface of the mature leaves. Sometimes these pustules are also present on the petioles, young shoots and rachis as well. Occasionally the upper surface of the leaf corresponding to the uredial pustules shows brown necrotic spots. In severe infections the entire leaf area may be covered by these fruiting bodies and the leaves fall off.

Copper based fungicides e.g. Bordeaux mixture, copper hydroxide or copper oxy-chloride or chlorothalonil provide effective control of the disease. Curative applications with triazole fungicides also showed good control of the disease.

## 5. Bacterial Blight

Bacterial Blight (c.o. *Xanthomonas citri* pv. *viticola*) occurs on all the aerial parts of the vine during wet and warm weather. Minute water soaked lesions are seen on the lower surface, which enlarge and become angular and cankerous. Stunting, cracking and irregular growth of shoots is seen in advanced stage of infection. Recent studies depict that spray of mancozeb 75WP @2-2.5g/L gives a good control of the disease. Kasugamycin 5% + Copper Oxychloride 45%WP @750g/ha is also registered against the pathogen.

# Insect pest management in vineyards

**Dr. Deependra Singh Yadav**
**Senior Scientist (Agricultural Entomology)**

Among major grapevine pests in peninsular India, thrips, leafhopper, mealybug, stem borers, flea beetle, caterpillars and red spider mite are very important and cause considerable damage to the grapes almost every year. Further, stem girdler beetle is also an occasional pest of new vineyards. During rainy season, snail may also appear in vineyards occasionally and cause damage to grapevine leaves and germinating green manure crop planted in inter-row spaces. Before taking decisions on pest management interventions, the knowledge of their biology consisting of key stages in life cycle, identification characteristics, symptoms and nature of their damage, are very important.

## 1 Thrips

Thrips are the sucking pests which prefer to feed on all the above ground succulent and tender grapevine parts, like young leaves, leaf tips, leaf veins, stem, shoots, pre-flowering bunch, bunch peduncle, flowers, rachis and young berries. This insect enjoys the warm, bright sunlight combined with slightly higher temperature and low relative humidity. The thrips disperse very easily in the vineyard as they are very active insects. Mainly two thrips species, viz., *Scirtothrips dorsalis* (Figure 1) and *Rhipiphorothrips cruentatus* (Figure 2) cause damage to table grapes in peninsular India. A third thrips species, *Retithrips syriacus* is also reported in grapevine, however, it remains only on old leaves and does not cause any economic damage either to berries, flowers or leaves. Nymphal stage of Retithrips is reddish in colour and farmers often confuse it with red spider mites, therefore, correct identification is important.

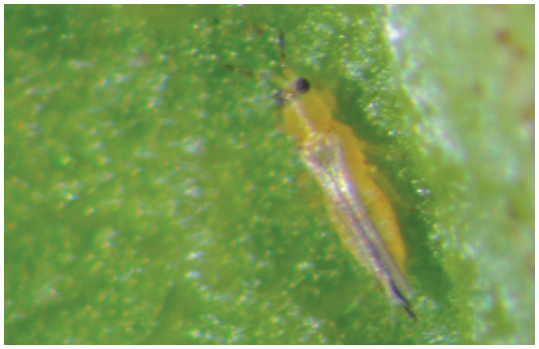

**Fig. 1 *Scirtothrips dorsalis***

**Fig. 2 *Rhipiphorothrips cruentatus***

**Fig. 3 Leaf cupping due to thrips damage**

**Fig. 4 Thrips Damage on Bunch**

Both nymphs and adults suck the vine sap, which result in the curling and cupping of young leaves (Figure 3). The damage after the foundation pruning is mainly confined to vegetative parts of the vine but after the fruit pruning, in addition to the damage on vegetative parts, they also damage the pre-flowering bunches, flowers and young berries. On pre-flowering stage bunch, the thrips damage can lead to necrotic spots on berries and the whole bunch may die if not controlled timely. Thrips suck the sap from the ovaries of flowers in the berry setting stage, which leads to flower shedding and loss in yield. This is the loss in terms of quantity; however the loss in terms of quality is also very serious as rasping and sucking of young berries by thrips results in the brownish net-like appearance on the berry surface called as berry scarring (Figure 4). Therefore, the new flush emergence stage, pre-flowering, flowering, berry setting and early berry development, stages are the critical stages for damage by thrips.

There are certain points which should be considered for management of thrips. Regular monitoring and timely management interventions are very important for the effective management of thrips. To monitor thrips population, tap grapevine shoot on white paper and count the number of thrips fallen on the paper. It was observed that during fruit pruning season, higher thrips population is found on canopy during afternoon hours in comparison with morning or evening hours. Therefore, the monitoring for thrips should be done during afternoon. The time of spraying of insecticides does not have any effect on efficacy of the insecticides against thrips.

Sometimes there may be a situation when thrips population reaches remarkably high levels, like, when shoot is tapped on white paper, more than 40 thrips per shoot may be noticed. In conditions like this, the single spray of effective insecticide may not be sufficient to bring the thrips population under control. Therefore, two insecticidal applications, at gap of one day in between, may be given. Repetitive applications of insecticides with same mode of action should not be done and insecticides with different modes of action should be used to avoid development of resistance in thrips against insecticides. Most of the insecticides recommended for use against thrips generally take time of 2-3 days for providing desirable efficacy, therefore, it is advisable to wait for 2-3 days to see the effect of sprayed insecticide. However, some reduction in thrips population is seen one day after the spray. If there is no reduction in thrips population next day of spray or the thrips population increases, it may mean that the insecticidal spray was ineffective. In such scenario, decision of spraying effective insecticide may be considered.

## 2 Leafhopper

Leafhopper, *Amrasca biguttula biguttula* (Figure 5) mainly infests vineyards in Maharashtra and Karnataka during mid-September to mid-December months of the calendar year with the peak during mid-October to mid-November months. The reasons for this high population build up may be the favourable weather conditions, presence of most of the vineyards in the highly susceptible stage and shift of leafhoppers from other host plants to grapes due to reduction of food resources post monsoon period as weeds start drying in empty fields. The leafhopper population is higher in vineyards where heavy weed growth is there in the vineyard or in the empty fields adjacent to the vineyards. Therefore, the vineyards and adjacent areas should be kept weed free. The grapevines upto about 40-50 days after fruit pruning are highly susceptible for leafhopper damage. They suck the sap from young leaves which results in leaf curling

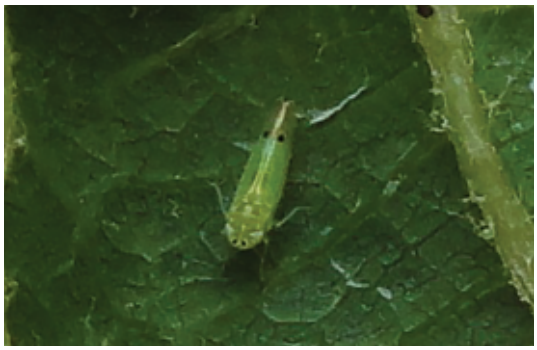

**Fig. 5 Jassid adult**

(Figure 6). Removing excess shoot growth after berry setting after forward pruning may help in reducing leafhopper incidence.

**Fig. 6 Damage symptom due to leafhopper Infestation**

To monitor leafhopper population, gently hold the shoot and count number of leafhoppers per shoot. It was observed that during fruit pruning season, higher leafhopper population is found on canopy during evening hours and night in comparison with morning or daytime. Therefore, the monitoring for thrips should be done during late evening. The spraying of insecticides for leafhopper management should be carried out during late evening during dark. At the time of spraying, a high wattage white light bulb may be installed at the back side of the tractor. The leafhoppers are attracted towards light and installing light behind tractor will make leafhoppers active and they will come into direct contact with the insecticide providing better efficacy.

The most effective way to manage leafhoppers is to install near ultra-violet light (black light) traps near vineyards and run them between 7 to 11 pm every night during September to December months. The care should be taken that a light trap should not be installed inside the vineyards, otherwise the plants in vicinity of the trap may have higher pest damage. It is because all the attracted insects will not be trapped and killed. The light trap can also be made at home by using any high wattage white light bulb as shown in Figure 10 and a plastic tub. The care should be taken that the bulb should not become too hot, otherwise insects will not come near it. Place the tub under the light and fill it upto half with water and pour kerosene or any contact insecticide over water surface to kill attracted insects. Number of the traps to be installed depends on the luminance capacity of the light bulb.

## 3 Mealybug

Pink mealybug, *Maconellicoccus hirsutus* (Figure 7) is the major mealybug species infesting grapes in peninsular India. Both the adults and nymphs suck the plant sap from the tender vine parts. At the time of forward pruning, majority of the mealybugs remain hidden under the bark of main trunk and cordons. During the new flush emergence stage especially after fruit pruning, mealybug feeding leads to the curling and malformation of growing shoot and thereby arresting it's further growth. During veraison stage, mealybugs migrate from the main trunk, cordons and shoots to developing berries and produce profuse quantity of honeydew leading to sooty and sticky bunches (Figure 8) which considerably reduces the quality and marketability of the fruits. Ants association with these pests will further aggravate the problem as they help the pest to migrate easily from one vine to another besides protecting from the natural enemies.

**Fig. 7 Adult female mealybug and eggmass**

**Fig. 8 Mealybug and honeydew on bunches**

The mealybugs increase in numbers due to imbalance in the ecosystem. In a balanced agro-ecosystem, mealybug

populations are usually kept under check by their natural enemies. Two prunings in grapes and use of broad-spectrum insecticides reduce natural enemy activity and upset the balance. Two prunings seem to be a necessity to ensure fruitfulness in semiarid tropics like Maharashtra, Karnataka, Telangana and Andhra Pradesh grape growing regions but by avoiding use of broad spectrum insecticides, natural enemies can be conserved and pest populations can be kept under check naturally, which can ultimately lead to lesser insecticidal applications and less number of residue detections.

Broad-spectrum insecticides such as fipronil, lambda cyhalothrin, methomyl and imidacloprid should be used only sparingly and should be completely avoided when natural enemy activities are higher. For example, during rainy season due to high humidity conditions mealybug natural enemies such as *Anagyrus* spp. and *Scymnus* spp. increase in numbers and control mealybugs naturally. Therefore, use of such chemicals should be avoided during this period. Alternatively, entomogenous fungus such as *Metarhizium*, *Lecanicillium*, and *Beauveria* can be used. The establishment of these fungi is favoured by prevailing high relative humidity conditions. If use of broad-spectrum insecticides such as methomyl, chlorpyrifos, cartap hydrochloride, profenofos, etc. is avoided during rainy season, the mealybug infestation during coming fruiting season is expected to be lesser due to natural enemy activity. During fruit pruning season, frequent preventive applications of *Beauveria*, *Metarhizium* and *Lecanicillium* at about every 15 days intervals will help in reducing mealybug population build up. If insecticidal application becomes necessary to control mealybugs, buprofezin 25 SC @ 1.25 ml/L water should be the preferred option as it is safer to natural enemies. Soil drenching of systemic chemicals is beneficial as compared to spraying as it helps to conserve natural enemies thus should be preferred option.

## 4 Flea beetle

*Scelodonta strigicollis* (Figure 9) is the major species of flea beetle infesting grapes in India. These are metallic brown beetles with black spots on the dorsal side. They are active especially during the bud breaking stage of the vine after the pruning. Adults are damaging stage of the pest. Adults eat away the young buds and leaves. As a result the shoot growth is arrested. Linear and rectangular shaped holes on the leaves are the characteristic damage symptoms by this pest (Figure 10). Flea beetles can also feed on young stems, bunch peduncle and mature leaves. They remain hidden away from sunlight during the day and actively feed during night. Therefore, flea beetle management is better when sprayings are carried out during night. Flea beetle grubs are seen in the soil but have not been reported causing any economic damage. High flea beetle incidence is noticed in Nashik and Sangali regions.

**Fig. 9 Flea beetle adult**

**Fig. 10 Flea beetle damage on leaf**

## 5 Caterpillar

*Spodoptera litura* is the major caterpillar species causing damage in two pruning single yield viticultural system of India (Figure 11). Sometimes, hornworms may also be found infesting grapes. Caterpillars are biting and chewing type of insects and feed on mainly grapevine sprouting buds and leaves. Whenever relative humidity increases due to rainfall,

they may become serious pest. The highest damage in grapes is caused by *S. litura* during bud sprouting stage. Just after fruit pruning, there is no canopy on the grapevine. Therefore, *S. litura* larva remain hidden under loose bark of stem, in soil under leaf-litter or inside cracks in ground during daytime. They come out during night and feed, therefore, their presence in the vineyard goes undetected and they can cause huge damage during sprouting stage. They can eat away the sprouting bud and fruitful canes fail to emerge, thereby affecting yield. They can be easily monitored by regular inspection of vineyards at night during bud sprouting stage. At this stage, application of insecticides is generally not effective and frequent applications of insecticides may be required to manage them. This will also increase the cost of cultivation. The economic way of managing this pest is to wrap the main trunk and supporting bamboo with polypropylene adhesive tape (about 2 inches width) at about 2-3 feet height from the ground. Care should be taken that the sticky side of the tape is towards the stem and the shiny slippery side is outwards. The *S. litura* larva who try to climb the trunk during the night will not be able to climb due to the slippery surface and the damage can be managed very effectively. If the vineyard is old and has loose bark, then the loose bark should be removed before applying the adhesive tape otherwise the larva will remain hidden under the bark above the tape. Installation of light traps during rainy season is also very effective in controlling the moths of *S. litura*.

**Fig. 11 Spodoptera larvae**

## 6 Red spider mite

Red spider mite, *Tetranychus spp*. (Figure 12) is a major pest causing damage to grapes in peninsular India. They are also sucking pests and prefer high temperature and low relative humidity. Their population starts increasing from second week of December and reaches to a peak during February-April. They prefer to feed on older leaves but increase in population leads to their migration to even bunches. Both nymphs and adults cause damage. Their feeding causes yellowing and discolouration of leaves (Figure 13). Serious infestation may lead to extensive defoliation especially during January to April which may reduce the TSS in the berries and resulting into poor quality fruits. The defoliation also results in direct exposure of berries to sunlight causing sun-burn. Red spider mite infestation becomes higher in vineyards nearing harvest thus has potential to contribute to increased residue detections.

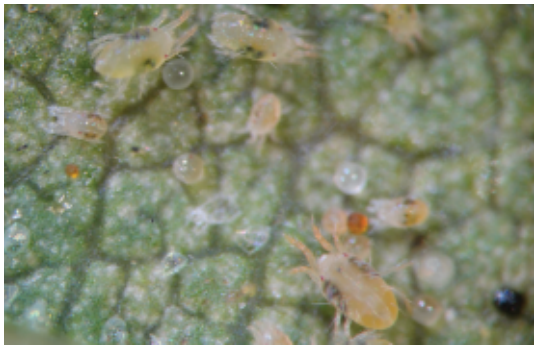

**Fig. 12 Different life stages of red spider mite**

Best strategy for mite management is timely application of acaricide to reduce population build-up. Once majority of leaves show chlorosis and webbing due to mite incidence, the mite management will become difficult. Any vineyard with more than 50 days old canopy can easily become susceptible to mite incidence. Therefore, critical monitoring for mite population build-up is necessary. With the increase in temperature during February, the mite incidence also increases

**Fig. 13 Web formation at underside of leaf due to mite infestation**

and reaches peak levels during March-April months. If temperature is high, weekly water sprays @ 1000 litres water per acre can help in washing dust from the leaf and decrease leaf temperature which can help in reducing mite population. Additionally, water sprays can also help in breaking webbings, thus increasing efficiency of insecticidal applications. Many alternate hosts plants such as *Parthenium* weed, etc. act as breeding grounds for mites, thus, they should be removed from the vicinity of the vineyards. Use of broad-spectrum insecticides such as imidacloprid, fipronil, etc. should be avoided after 50 days of fruit pruning as they can kill mite natural enemies and increase the mite populations.

## 7 Stem Borers

*Celosterna scabrator, Stromatium barbatum* and *Dervishiya cadambae* are the major stem borer species infesting grapevine in peninsular India (Figures 14, 15, 16). All three stem borer species cause extensive damage to the sapwood and heartwood of grapevine stem and reduce both vitality and productivity of the vines.

### 7.1 *Celosterna scabrator*

*C. scabrator* larva can feed only on live plants and make gallery inside. The characteristics symptoms of its damage are that it removes the frass out from hole which can be noticed around the plant and the leaves of infested plant shows interveinal chlorosis at later stages. The time of adult emergence and oviposition for *C. scabrator* is exceedingly long which starts with the initiation of monsoon and lasts for about 120-150 days. The eggs are laid inside the stem by making a cut and covering with a substance which hardens after some time. Therefore, targeting adults and eggs for management is not feasible. The larva starts feeding inside and make galleries. The best way to manage *C. scabrator* is to tag infested plants, tear apart the gallery and remove the larva. Most active period of *C. scabrator* adult is from June to September (highest number in August). They are easily visible during day time feeding on the bark of the young stem of grapes. They can be easily captured by hand and killed whenever noticed in the vineyards during this period. Spraying any insecticide is not economically effective to manage the adults. When the larva comes out of the egg and eats the stem, the grapevine secretes a watery secretion. These symptoms appear only in the morning. Grapes with these characteristics can be easily identified from October to December. On closer inspection, small amount of frass can easily be seen. The grub can be located feeding just under this frass using a iron wire and can easily be removed and killed. If the larvae are not controlled at this time, the larvae go deeper into the stem and cause damage and the yield of the plant is reduced by 4-6 kg per plant. The initial symptoms of frass fallen on the ground can be seen on infested plants. Monitor the vineyards every 10 days from December to April. Use ribbon to tag all the grape plants

**Fig. 14 *Celosterna scabrator***

**Fig. 15 *Stromatium barbatum* adult**

**Fig. 16 *Dervishiya cadambae***

showing fallen frass on the ground. Remove the fallen frass on the ground and inspect it after two days for fresh frass and mark the hole just above as the active hole. Additionally, holes with wet frass near holes in the early morning hours can also be marked as active holes. Widen the active hole and tear off the stem towards the direction of the gallery using scissors or a screwdriver and hammer until the appearance of the Celosterna grub. Remove the grubs and kill them. Tie the treated stem with the help of jute twine rope for healing.

## 7.2 *Stromatium barbatum*

*S. barbatum* species of stem borer is pest of 6-7 years or older vineyards. The grubs of this species feeds inside the stem and convert the stem wood into powder like termites. Primarily this is pest of dead wood, therefore, it prefers older vineyards in which deadwood formation is there. Adults of stem borer Stromatium barbatum may start emerging during the first week of June and by mid-June majority of adult emergence takes place. However, small numbers of stem borer adults may keep on emerging till September.

Installation of light traps outside the vineyards will be helpful in monitoring the initiation of emergence of stem borer adults so that timely management can be carried out. Adults of stem borer will remain hidden under the loose bark of grapevine stem and cordons and majority of the eggs are also laid under this loose bark. Therefore, if this loose bark is removed just before the onset of monsoon, the adults will not find places to hide and lay in the vineyard and stem borer infestation will reduce. Further, removal of loose bark will help in exposing adults and eggs, if present any, on main trunk and cordons for their management by insecticides. Neem oil or neem seed or leaf extract or simply hanging neem leaves in the vineyard acts as a repellent for adult *S. barbatum*.

The larval period is of about 9 months. There is no external symptom on the plant visible in the vineyards infected by this species. During December to March months, when larva is feeding on the dead dry wood, the feeding sound can be heard in the old vineyards. More than 100 grubs of stem borer can be found in a single plant in case of high infestation. Two to three years of infestation can reduce the productivity of vineyards by 50%. This stem borer normally goes into pupation during second fortnight of March to mid-May. The pupal period is of about four weeks and the adult will remain inside the stem and wait for monsoonal rains to start.

## 7.3 *Dervishiya cadambae*

*D. cadambae* young larvae feed under the bark and later instars bore inside stem and make galleries (Figure 17). For *D. cadambae*, regular monitoring, removal of loose bark and two stem and cordon washes with entomogenous fungus Metarhizium brunneum when the young larvae are feeding under loose bark is effective.

Note: Kindly refer Annexure V of Residue Monitoring Programme for recommended list of insecticides.

**Fig. 17 *D. cadambae* larva**

# Post-harvest management in grapes

**Dr. Ajay Kumar Sharma**
**Principal Scientist (Horticulture)**

## Introduction

Grape growing in India is becoming very popular in tropical regions. As per an estimate 169 thousand ha area was under grapes and production was 3714 thousand tons during 2022-23. As Maharashtra and Karnataka has monopoly in grape production and contributing 95% of total grape production of country. India has occupied its position and grape export from India is growing very fast. During the grape season of 2022-23, India has exported about 2,67,950 tons of grapes which is about 10.5% of total grape production. Remaining is consumed as fresh grapes within the country and about 30% produce is converted into dried grapes (raisin). Among the white seedless varieties, Thompson Seedless and its clonal selections viz.; Tas-A-Ganesh, Sonaka, Super Sonaka, Manik Chaman, etc. have dominance in the area acreage as well as production. In addition, the demand of coloured grape varieties is increasing day by day. Some indigenously identified clonal selections from Kishmish Chernyi like Krishna Seedless, Sarita Seedless, Nath Seedless and Nanasaheb Purple Seedless; and introductions e.g. Red Globe, Fantasy Seedless, Crimson Seedless and Flame Seedless are being grown on sizeable area and showing increasing trend in the consumer preference. To fulfil demand of very specific patented grape varieties in foreign markets, few varieties have already been introduced by some groups and evaluation studies are in progress.

## Maturity Indices for Harvesting

As grape is non-climacteric fruit, should be harvested when they are fully ripened since neither the colour nor the taste improves after harvesting the bunches. Harvesting period is determined by the variety, fruit pruning timing, climatic conditions, TSS, acidity and sugar acid ratio, depending on whether the produce will be supplied to local or distant markets within country or for export purpose. Maturity standards of grapes fixed under the AGMARK states that the minimum TSS of 16 °B and sugar acid ratio of 20:1 and this has to be complied or export and domestic market. Although the sugar content of the berries is considered as the indicator of their level of ripening, the ratio of sugar/acid is the correct index of ripening, since this ratio indicates the taste of berries.

Physical appearance is considered as the major criteria under which bunch and berry size with uniform colour is important. Characteristic uniform colour development is a reliable index of ripening in coloured varieties. In white varieties, uniform green colour is preferred in the export market. Change of green colour to straw or amber colour should not be taken to indicate the stage of ripening as exposed clusters shows more colour change even at less maturity as compared to shaded clusters. With the maturity of berries, the colour of peduncle also changes.

## Harvesting

Only attractive bunches fulfilling minimum quality requirement should be harvested. Harvesting should be done by skilled workers wearing soft gloves and using sharp secatures / scissors for cutting. Careful handling of grapes during harvesting, transportation, cleaning and packing is very essential to prevent injury and abrasion. The bunch should always be held the by the stem/ peduncle. Rough handling results in loss of bloom (thin wax coating on berry surface) making the berries susceptible to decay.

Bunches should be harvested during the early morning hours before the berry temperature rises above 20°C. It is advisable to close harvest by 10 a.m. Otherwise the berry's temperature can't be bring down to 4°C by pre-cooling within the stipulated time of six hours. Bunches harvested during high temperature leads to loss of more physiological weight and pedicel desiccation. If rainfall has occurred just prior to harvest, the fruit should not be picked for at least 3-4 days, as the free moisture present on the surface of the berries can lead to fungal infections.

## Method of harvesting

A day prior to picking, the broken, along with decayed, deformed, undersized, and discoloured berries are removed by cutting their pedicels from the selected bunches, using a long nosed scissors. Care must be exercised not to injure other berries by the scissors. Clusters should never be held against the naked palm while cleaning, harvesting or trimming. They should be held by their stalk, preferably by wearing rubber gloves. This care is taken not to erase the fine waxy coating called 'bloom' from the berry surface.

## Bunch collection

Harvested bunches are placed gently in clean perforated plastic crates and left in the shade of the vines for subsequent transfer to pack-house. The crates should be lined with clean bubble sheets for cushioning and kept over newspapers spread on the ground to avoid contamination with vineyard dust. The bunches are kept in such a way that their stalks should not injure berries from other bunches.

## Sorting and grading requirement

The sorting and grading of grape bunch is very much required for fetching the good value of produce in domestic market. It is essential to grade the fresh table grapes according to the AGMARK standards. The grapes have three standards viz.; Extra Class, Class I and class II as per AGMARK.

## Packaging for domestic and export marketing

Table grapes shall be packed in such a way that the produce is suitably protected during transportation and handling. Packaging is normally done in corrugated or solid fiber board cartons. A layer of bubble pad or protective liner is placed at the bottom of the carton to protect the grapes from bruising and a polyethylene lining is placed over this.

Bunches from these weighed lots are placed in small, thin and clean food grade polyethylene pouches. One or maximum two bunches weighing neither less than 350 g or more than 650 g are placed in each pouch. No bunch weighing less than 150 g is placed in a pouch. The grapes are then pre-cooled to a temperature of 4°C and then a sulphur dioxide generating pad enclosed in absorbent tissue paper is placed over the grapes. This is then covered with the polyethylene lining and the box is closed.

During packing care should be taken to avoid damage to the fruit due to shattering, splitting or bruising. Packing in multi-layers within a crate causes weakening of the pedicle attachment in the berries of the lower bunches due to pressure exerted by the bunches on top. Table grapes must be packed in such a way as to protect the produce properly. In the case of 'Extra' Class, the bunches must be packed in a single layer. Punnet packing is also in demand. The packed bunches are easily place in refrigerator. Berry remains fresh for longer duration when packed in thermocoal boxes.

## Storage

### a. Pre-cooling

The pre-cooling is practiced to reduce field heat. Prompt removal of field heat from harvested berries is the best way of retaining the freshness of grapes for a longer time. The temperature in the pack house should be maintained at 18-20 °C and the grapes should be transported to pre-cooling units with 4-6 hours of harvest. The temperature of harvested grapes should be brought down to less than 4 °C within six to eight hours in the pre-cooling chambers. The delay in bringing down to this temperature will reduce the keeping quality of grapes.

### b. Cold storage

After pre-cooling, the dual releasing sulphur dioxide pads (Grape guard) are placed with their coated surfaces facing downwards on the filled plastic pouches and covered with the plastic sheet lining. The boxes are closed and shifted to cold storage rooms where the temperature and humidity are maintained at 0 ± 0.5 °C and 93 ± 2% respectively. Temperature of 0 °C and humidity of 95% are the best for maintaining freshness and preventing decay. Care should be taken to maintain the temperature and humidity strictly during storage and transit.

❄❄❄

# Pesticide residue monitoring plan for exportable grapes

**Dr. Kaushik Banerjee**
**Director**

Pesticides are essential agro-inputs. Their applications at pre- and post-harvest levels are essential to ensure desired production and productivity of crops. Once a pesticide is applied in the field, a portion of the applied quantity may remain in the crop at harvest, which is designated as "pesticide residue".

## Sources of agrochemical residues

In grapes, the agrochemical residues may appear from the following sources:

**Direct source:** Agrochemicals are mostly organic compounds which degrade with time to non-toxic metabolites on exposure to physico-chemical agents (e.g. sunlight, heat, humidity, chemical agents in atmosphere, etc.), and interaction with biological factors viz. enzymes, microbial metabolism, etc. When agrochemicals are applied on plants, a fraction of it gets adsorbed on plant surface, which eventually gets absorbed and contaminates the commodity matrix. The time required for degradation of a pesticide to a non-detectable level or non-toxic metabolites might vary depending on the chemical nature of the compound and its susceptibility to the degrading factors. If a crop is harvested before such a safe waiting period, then analysis of the fruit or vegetable samples might result in detection of one or more of agrochemical residues. The residue of an agrochemical beyond a certain concentration could be toxic to human and animal health, and consumption of such contaminated foods might result in acute and chronic toxicities.

**Indirect source:** In addition to direct field applications, the residues of agrochemicals might also appear from various indirect sources. These include spray drift from adjoining crop fields, contaminated soil and irrigation water, and contaminated agro-inputs, e.g. manures, fertilizers, to name some.

## Maximum Residue Limit (MRL) and its relationship with the Good Agricultural Practices

MRL is the permitted concentrations of the residues of a pesticide in or on food, derived by taking into account both the ranges of residues actually remaining on the food when offered for consumption following Good Agricultural Practices (GAP). MRLs are the trade standards that are set in a way that there are no concerns for public health, especially with regard to vulnerable sub-population groups (as children and the unborn). GAP takes into account the application of minimum quantities of pesticides necessary to achieve adequate pest control in such a manner that the amount of residues in the food is smallest possible. At the international level, the Codex Alimentarius Commission of the FAO/WHO decides MRLs. The Codex Committee on pesticide residues (CCPR) was formed by United Nations with primary mandate to establish MRL for pesticides in food. The MRL of pesticides is usually crop or food item specific.

Although the Codex MRLs (http://www.fao.org/fao-who-codexalimentarius/codex-texts/dbs/pestres/en/) are applicable to all nations, individual countries may also have their own MRL regulations. For agro-export, it is thus essential that the commodities should comply with the latest MRL regulations of the importing countries, which are usually available in their Government websites. For example, the MRLs set by the European Union (EU) have to be complied for export of the fruits and vegetables from India to any of the EU member countries.

Earlier, individual EU countries used to have their own MRLs. Since September 2008, these MRLs were harmonized across the European Union territory (https://ec.europa.eu/food/plant/pesticides/eu-pesticides database/public/?event=homepage&language=EN). In India, MRL is recommended by Food Safety and Standards Authority (FSSAI). The agrochemical companies generate residue data and submit to Central Insecticides Board & Registration Committee (CIB&RC) for crop specific label claim or expansion of label claim. CIB&RC forwards the residue reports to FSSAI, where a Scientific Panel evaluates those data and estimates MRL using the MRL-calculator (https://read.oecd-ilibrary.org/environment/mrl-calculator-users-guide-and-white-paper_9789264221567-en#page14) recommended by Organisation for Economic Co-operation and Development (OECD). These risk assessment based MRLs (https://fssai.gov.in/upload/uploadfiles/files/Contaminants_Regulations.pdf) are utilized for evaluation of food safety in the country. In case where risk assessment based MRL is not available, detection of such agrochemicals is regulated at the default value of 0.01 mg/kg, or the analytical limit of quantification (LOQ).

The terminal residue load of an agrochemical in grapes and any other commodities mainly depends upon its environment-stability and dissipation pattern. The rate of dissipation again largely depends upon the quantity and concentration applied, initial deposit and the prevailing environmental conditions during fruit development stage. The data available on persistence and dissipation pattern of agrochemicals in temperate climate may not hold good for tropical environment as the factors like period of sunshine and atmospheric temperature are more prominent under the tropical environment. Similarly, the dissipation pattern of a pesticide in one crop may not be similar to another crop. Keeping in view this fact, supervised multi-location trials are usually conducted to establish a crop specific MRL. Efforts are taken to derive the maximum residues of a pesticide likely to occur on a crop through the application of its minimum effective dose. In this regard, the dose is usually decided considering the most critical use situations, i.e. maximum probable pest and disease pressure and related recommended package of practices. The results of the detail toxicological studies of the pesticides with its metabolic pathway are also considered in this regard. Such a safety evaluation is done by comparing the dietary exposure from the sample to the maximum permissible intake (MPI), which is determined by multiplying the acceptable daily intake (ADI) with the body weight of an average population. The dietary exposure of a consumer to the residues is calculated by multiplying the amount of residue deposits with average per capita daily consumption of the particular food or the group of commodities where the same chemical is applied. In India, food consumption data is available through National Institute of Nutrition. If the dietary exposure is found to be above the MPI, the food commodity is decided to be unfit for human consumption. Furthermore, all possible metabolites are toxicologically assessed to determine their effect on beneficial and non-target organisms. This is so because; in many cases the metabolites could be more toxic than the parent compound.

The knowledge on MRL acts as a valuable guide to the growers and phyto-sanitary certificate issuing authorities of the Government. It alarms a grower regarding the fact that if he does not follow the recommended package of practices, the terminal residue levels of pesticides may exceed the permissible MRLs and he might face marketing set back along with legal hazards. The regulatory bodies at the National and International levels may use this information to decide whether a commodity is fit for sale in domestic and international markets.

## Maintaining pre-harvest interval - the practical approach to minimize pesticide residues

On the basis of the MRL, the pre-harvest intervals (PHI) of pesticides are calculated. PHI is the safe waiting period, which is the minimum time in days that must be provided between last application of a pesticide and harvesting of the produce so that its residue level at harvest reaches below the MRL. The data generated on

PHI for different agrochemicals are usually recommended in the guidelines of good agricultural practices, which are usually crop specific, and could be widely different across crops. Estimating PHI of a pesticide ideally involves multi-location field trails wherein the pesticides are applied following the guidelines of GAP. Representative samples are collected from the treated plants and analyzed for residues. The sampling is initiated on the day of the final application and continued at regular time interval till harvest. After precise estimation of the residues in each sample, the residue data are statistically processed to correlate the dissipation with progress of time. Although first order rate kinetics is largely used for estimating PHI, on many occasions, non-linear kinetics are better applicable (e.g., first + first order model), where the residues dissipate with time following a non-linear relationship. In such occasions, the dissipation rate is usually faster at the beginning, which gets slowed down with passage of time. This indicates a non-linear pattern of degradation and often implies that simple first order kinetics might not be adequate to explain the dissipation behaviour of most of the pesticides and predict the PHI. At ICAR-NRC Grapes, the residue dissipation pattern of several agrochemicals has been studied in grapes and other horticultural commodities, which have been recommended in relation to their recommended application rate and PHI.

## Residue analysis in grapes – the system established in the country

For export purpose, the samples randomly drawn from 100% of the registered farms are analyzed by the accredited laboratories (as per the guidelines of ISO/IEC 17025) by using a harmonized and validated testing procedure developed by ICAR-NRC Grapes. The performance of the laboratories is ensured by regular monitoring by NRL through physical inspection, desktop audits and performance in proficiency testing rounds conducted at regular interval.

The residue analysis involves extraction, clean up and final estimation by multiresidue technique based on GC-MS/MS and LC-MS/MS. A list of around 240 chemicals were monitored in 100% of the farm samples last year that are registered for export. The list is being expanded to cover all the chemicals that are currently registered with CIB&RC. In case, the test results exceed the MRL of the EU, the testing laboratory immediately (within 24 hours) brings the matter to the notice of the NRL and on the basis of this information, the NRL issues internal alert within 24 hours to stop the export of grapes from specified plots. Since the residues are monitored at pre-harvest level, hence there is a possibility of re-sampling after the PHI and on re-sampling, if the samples comply with the MRL, the laboratory immediately intimates the NRL through the Grapenet and the NRL revokes the alert. While issuing the alerts or revoking the same, the NRL officials examine the test results with respect to the chromatograms and mass spectra and in case everything is satisfactory, then only the action is initiated. With the success of residue monitoring in grapes, a similar system is also implemented in other horticultural crops including pomegranate, okra, etc.

## GrapeNet- A complete traceability software

GrapeNet is the first internet based residue traceability software system established in the country, for monitoring of fresh grapes for export to the European Union countries. This software was developed by APEDA with inputs from all the stakeholders in grape industry. This is the first of its kind initiative in India that has put in place an end-to-end system for monitoring pesticide residue, achieve product standardization and facilitate tracing back from retail shelves to the farm of the Indian grower, through the various stages of sampling, testing, certification and packing.

This software system integrates all stakeholders in the supply chain of grapes export, namely Farmers, State Government Horticulture Departments, Residue testing laboratories, Agmark Certification Department, Phyto-

sanitary department, Pack houses, Exporters, and APEDA. Each stakeholder has certain duties to perform for residue free export of table grapes to European Union. GrapeNet has been very well received and actively been used by all stakeholders in the supply chain. Every consignment of fresh grapes during the season 2007 from India to European Union is monitored through this system. This system permits its stakeholders to carry out the following activities involved in the grapes export process as indicated in the diagram below.

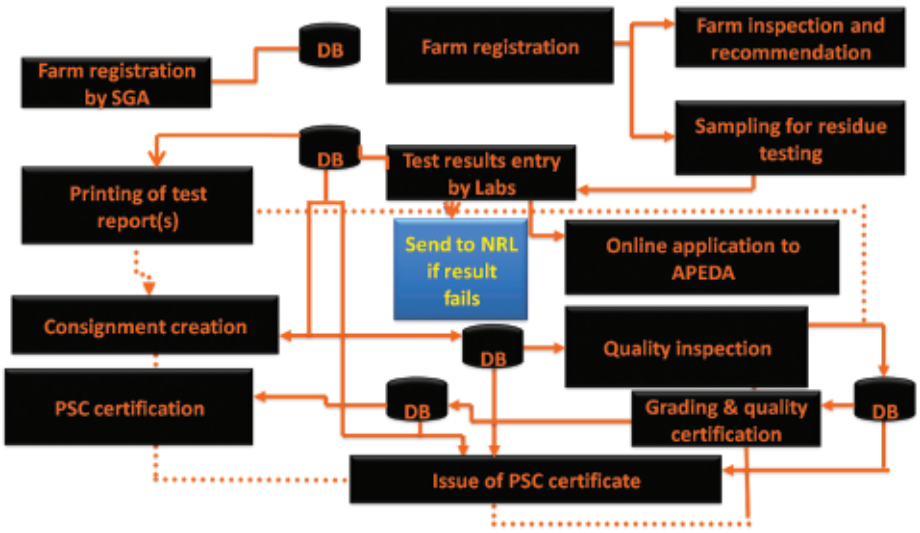


**DB: Database**
**PSC: Phyto-sanitary certificate**
**SGA: State Govt. Authority**

The application of this system starts at the very root of the process; registration of farmers up to plot level, at district headquarters, by the State Horticulture departments and subsequently issuing a registration certificate to the farmers. Each farmer, who intends to export directly or supply fresh grapes to an exporter, should get the registration of its farm and plot(s). A registration number is given to each farm upto the plot level. The farm/plot is allotted a unique 12 digit registration number only in the following code format:

| State Code | District Code | Taluka Code | Product Code | Farm Code | Plot Code |
|---|---|---|---|---|---|
| AA | 01 | 01 | 001 | 0001 | 01 |

One plot should constitute a maximum area of 1 Ha or part thereof and extendable up to 1.2 ha. The registration system facilitates the State Horticulture departments to tabulate their inspection details on completing their visits to the farms, after which they can recommend to the Laboratories to draw samples for testing of agrochemical residues. Farmers can approach any of the APEDA recognized laboratories in the country for testing their produce.

The laboratories record the details of the samples drawn from each plot for testing and conduct stringent testing for agrochemicals. This system automatically finds out from the test measurements entered whether the sample qualifies for export to specified countries and generates their test reports. These laboratories are among the best in the world, which are equipped with high precision and calibrated equipment, and are ISO 17025 compliant.

## Conclusion

Although residue analysis costs money, it adds a significant value to the agricultural produces, especially a commodity like grape, the cultivation of which frequently receives pesticide applications. A commercial product when sold with a residue test report indicating "no" or nominal (toxicologically insignificant) residue levels, it provides confidence to consumers and facilitate achieving a better price. This in turn helps in enhancing farmers' income and improving their standard of living. With the advent of information explosion, the consumer awareness is growing with respect to the right to have safe food. No one in the society is ready to tolerate the menace from the food intended for his/her nurture. On the other hand, being in tropical belt we do not have the luxury of avoiding the use of the agrochemicals in pest management. Agrochemicals are used purposefully in the environment to ensure a good harvest. It is the dose and time of application, which differentiates the safe and unsafe use. If the recommendations of the GAP and PHI are sincerely followed, it is definitely possible to minimize the residue load of agrochemicals in grapes, which in turn, will ensure safety to the health of the consumers and environment as a whole. The implementation of the residue monitoring system through Grapenet has emerged as a model system in the whole country and is being expanded to cover all the horticultural commodities on a time scale through the traceability system of Hortinet.

❄❄❄

भाकृअनुप-राष्ट्रीय अंगूर अनुसंधान केन्द्र
डाक पेटी सं. 3, मांजरी फार्म डाक घर, सोलापुर मार्ग, पुणे – 412307
ICAR-National Research Centre for Grapes
P. B. No. 3, Manjari Farm P. O. , Solapur Road, Pune – 412307
Tel: +91-20-2695-6000(EPABX), 2695-6002(Director's Office), Fax: +91-20-2695-6099
E-Mail: director.nrcg@icar.gov.in Website: https://nrcgrapes.icar.gov.in

## Annexure-5

**(This document is dynamic in nature)**

Date: 12th October, 2023

## List of chemicals with CIB & RC label claim for use in grapes

| Sr. No. | Chemical recommended for major disease & pest | Nature of chemical | Dose on formulation basis | EU MRL (mg/kg) | Pre-harvest Interval (PHI in days) |
|---|---|---|---|---|---|
| **I** | **Downy Mildew** | | | | |
| 1.* | Amisulbrom 17.7% SC w/w (20% SC w/v) | NS | 375 mL/ha | 0.5 | 59 |
| 2.* | Azoxystrobin 23 SC | S | 494 mL/ha | 3.0 | 7 |
| 3. | Captan 50 % WP | NS | 2500 g/ha | 0.03 | 70 |
| 4. | COC 50 WP | NS | 2.5 g/L, 2.4 g/L | 50.0 | 42 (avoid using after fruit set) |
| 5. | Copper hydroxide 53.8 DF | NS | 1.5 g/L | 50.0 | 12 |
| 6. | Cyazofamid 34.5% SC | NS | 200 mL/ha | 2.0 | 50 |
| 7.* | Dimethomorph 50 WP | S | 0.50 to 0.75 g/L | 3.0 | 34 |
| 8. | Fosetyl Al 80 WP | S | 1.4-2.0 g/L | 100.0 | 30 |
| 9.* | Kresoxim methyl 44.3 SC | S | 600-700 mL/ha | 1.5 | 30 |
| 10. | Mancozeb 75 WP | NS | 1.5-2.0 g/L | 5.0 | 66 |
| 11.* | Mandipropamid 23.4% SC | NS | 0.8 mL/L | 2.0 | 5 |
| 12.* | Metiram 70% WG | NS | 2000 g/ha | 5.0 | 66 |
| 13. | Propineb 70 WP | NS | 3.0 g/L | 0.05 | 75 (avoid using after fruit set) |
| 14. | Ametoctradin 27 + Dimethomorph 20.27 SC | NS + S | 800-1000 mL/ha | 6.0 + 3.0 | 34 |
| 15.* | Azoxystrobin 8.3% + Mancozeb 66.7% WG | S + NS | 1500 g/ha | 3.0 + 5.0 | 66 |
| 16.* | Azoxystrobin 11 % + Tebuconazole 18.3% w/w | S + S | 750 mL/ha | 3.0 + 0.5 | 60 |
| 17. | Benalaxyl-M 4% + Mancozeb 65% WP | S + NS | 2750 g/ha | 0.7 + 5.0 | 66 |
| 18. | Copper Sulphate 47.15% + Mancozeb 30% WDG | NS | 5000 g/ha | 50.0 + 5.0 | 66 |
| 19. | Copper Sulphate Pentahydrate 23.99% SC | NS | 2.5 mL/L | 50.0 | 30 |
| 20. | Cymoxanil + Mancozeb 8 + 64 WP | S + NS | 2.0 g/L | 0.05 + 5.0 | 66 |
| 21.* | Dimethomorph 12% + Pyraclostrobin 6.7% WG | S + S | 1500 g/ha | 3.0 + 0.3 | 55 |

| Sr. No. | Chemical recommended for major disease & pest | Nature of chemical | Dose on formulation basis | EU MRL (mg/kg) | Pre-harvest Interval (PHI in days) |
|---|---|---|---|---|---|
| 22.* | Famoxadone 16.6 % + Cymoxanil 22.1 % SC | S + NS | 500 mL/ha | 2.0 + 0.05 | 55 |
| 23.* | Fenamidone + Mancozeb 10 + 50 WG | S + NS | 2.5 to 3 g/L | 0.01* + 5.0 | 85 |
| 24.* | Fenamidone 4.44% + fosetyl-Al 66.66% WDG | S | 2000-2500 g/ha | 0.01 + 100 | 90 |
| 25. | Fluopicolide 4.44% + Fosetyl-Al 66.67% WG | S | 2.25 to 2.5 kg/ha | 2.0 + 100 | 40 |
| 26.* | Iprovalicarb + Propineb 5.5 + 61.25 WP | S + NS | 2.25 g/L | 2.0 + 0.05 | 75 |
| 27.* | Kresoxim methyl 18% + Mancozeb 54% WP (72 % WP) | S + NS | 1500 g /ha | 1.5 + 5.0 | 66 |
| 28. | Metalaxyl + Mancozeb 8 + 64 WP | S + NS | 2.5 g/L | 2.0 + 5.0 | 66 |
| 29. | Metalaxyl-M + Mancozeb 4 + 64 WP | S + NS | 2.5 g/L | 2.0 + 5.0 | 66 |
| 30. | Metiram 44% + Dimethomorph 9% WG | NS + S | 2500 g/ha | 5.0 + 3.0 | 66 |
| 31. | Oxathiapiprolin 3% + Mandipropamid 25% w/v (280 SC) | S + NS | 700 ml/ha | 0.7 + 2.0 | 30 |
| 32.* | Pyraclostrobin 5% + Metiram 55% 60 WG | S + NS | 1.50-1.75 kg/ha | 0.3 + 5.0 | 66 |
| **II** | **Powdery Mildew** | | | | |
| 2a.* | Azoxystrobin 23 SC | S | 494 mL / ha | 3.0 | 7 |
| 33. | Buprimate 25% w/v (26.7% w/w) SC | S | 3.0 mL/L | 1.5 | 45 |
| 34. | Cyflufenamid 5% EW | S | 500 mL/ha | 0.2 | 50 |
| 35.* | Difenoconazole 25 EC | S | 0.50 mL / L | 3.0 | 45 |
| 36.* | Flusilazole 40 EC | S | 25 mL/200L | 0.01 | 60 |
| 37.* | Hexaconazole 5 EC | S | 1.0 mL/L | 0.01 | 60 |
| 9a.* | Kresoxim methyl 44.3 SC | S | 600-700 mL/ha | 1.5 | 30 |
| 38. | Meptyldinocap 35.7% EC | NS | 308.6-342.8 mL/ha | 0.2 | 50 |
| 39. | Metrafenone 50% SC | S | 250 mL/ha | 7.0 | 22 |
| 40.* | Myclobutanil 10 WP | S | 0.40 g/L | 1.5 | 30 |
| 41.* | Penconazole 10 EC | S | 0.50 mL/L | 0.5 | 50 |
| 42. | Polyoxin D zinc salt 5% SC | S | 600 ml/ha | 0.01 | 35 |
| 43. | Sulfur 40 SC, 55.16 SC, 80 WP, 80 WDG,85 WP | NS | 3.0 mL, 3.0 mL, 2.50 g, 1.87-2.50 g, 1.50-2.0 g/L, respectively | No MRL required | PHI not applicable |
| 44.* | Tetraconazole 3.8 EW | S | 0.75 mL/L | 0.07 | 60 |

| Sr. No. | Chemical recommended for major disease & pest | Nature of chemical | Dose on formulation basis | EU MRL (mg/kg) | Pre-harvest Interval (PHI in days) |
|---|---|---|---|---|---|
| 16a.* | Azoxystrobin 11 % + Tebuconazole 18.3% w/w | S + S | 750 mL/ha | 3.0 + 0.50 | 60 |
| 45.* | Boscalid 25.2% + Pyraclostrobin 12.8% w/w WG | S + S | 500-600 g/ha | 5.0 + 0.3 | 55 |
| 46.* | Fluopyram 200 + Tebuconazole 200 SC | S + S | 0.563 mL/L | 2.0 + 0.5 | 60 |
| 47. | Fluxapyroxad 25%+Pyraclostrobin 25% SC | S + S | 200 mL/ha | 3.0 + 0.3 | 60 |
| 48.* | Fluxapyroxad 75 g/L + Difenoconazole 50g/L SC | S + S | 800 mL/ha | 3.0 + 3.0 | 45 |
| 49.* | Tebuconazole 50% + Trifloxystrobin 25% WG | S + S | 0.175 g/L | 0.5 + 3.0 | 34 |
| **III** | **Anthracnose** | | | | |
| 50. | Carbendazim 50 WP, 46.27 SC | S | 1.0 g/L, 1.0 mL/L | 0.30 | 50 |
| 4a. | COC 50 WP | NS | 2.5 g/L, 2.40 g/L | 50.0 | 42 (avoid using after fruit set) |
| 13a. | Propineb 70 WP | NS | 3.0 g/L | 0.05 | 75 |
| 51. | Thiophanate methyl 70 WP | S | 0.71- 0.95 g/L | 0.10 | 73 |
| 15a. | Azoxystrobin 8.3% + Mancozeb 66.7% WG | S + NS | 1500 g/ha | 3.0 + 5.0 | 66 |
| 52. | Carbendazim 12% + Mancozeb 63% WP | S + NS | 1500 g/ ha | 0.30 + 5.0 | 66 |
| 18a. | Copper Sulphate 47.15% + Mancozeb 30% WDG | NS + NS | 5000 g/ha | 50.0 + 5.0 | 66 |
| 46a. | Fluopyram 200 + Tebuconazole 200 SC | S + S | 0.563 mL/L | 2.0 + 0.5 | 60 |
| 53. | Kasugamycin 5% + Copper Oxychloride 45% WP | S + NS | 750 g/ha | 0.01 + 50.0 | 70 (Use should be avoided after flowering stage) |
| 27a. | Kresoxim methyl 18% + Mancozeb 54% WP (72 % WP) | S + NS | 1500 g /ha | 1.5 + 5.0 | 66 |
| **IV** | **Bacterial Leaf Spot** | | | | |
| 53a. | Kasugamycin 5% + Copper Oxychloride 45% WP | S + NS | 750 g/ha | 0.01* + 50.0 | 70 (Use should be avoided after flowering stage) |
| **V** | **Flea beetle** | | | | |
| 54. | Imidacloprid 17.8 SL | S | 0.30-0.40 mL/L | 0.7 | 70 (Use of imidacloprid should be avoided during pre-flowering and flowering stage) |

| Sr. No. | Chemical recommended for major disease & pest | Nature of chemical | Dose on formulation basis | EU MRL (mg/kg) | Pre-harvest Interval (PHI in days) |
|---|---|---|---|---|---|
| 55. | Lambda-cyhalothrin 4.9 CS | NS | 0.25-0.50 mL/L | 0.08 | 45 |
| **VI** | **Thrips** | | | | |
| 56. | Cyantraniliprole 10 OD | S | 0.70 mL/L | 1.5 | 60 |
| 57. | Emamectin benzoate 05 SG | NS | 0.22 g/L | 0.04 | 30 |
| 58. | Fipronil 80 WG | NS | 0.05-0.0625 g/L | 0.005 | 75 (only one application before flowering stage) |
| 59. | Spinetoram 11.7% SC | S | 300 mL/ha | 0.4 | 30 |
| 60. | Spinosad 45% SC | NS | 250 mL/ha | 0.5 | 15 |
| **VII** | **Mealybugs** | | | | |
| 61. | Buprofezin 25 SC | NS | 1.00-1.50 mL/L | 0.01 | 65 |
| 62. | Clothianidin 50% WDG | S | 500 g/ha | 0.70 | 60 (for use as soil drenching) |
| 63. | Methomyl 40 SP | S | 1.25 g/L | 0.01 | 75 (only one application before flowering stage) |
| 64. | Spirotetramat 15.31% w/w OD | S | 700 mL/ha | 2.0 | 60 |
| **VIII** | **Jassids** | | | | |
| 62a. | Clothianidin 50% WDG | S | 500 g/ha | 0.700 | 60 (for use as soil drenching) |
| **IV** | **Mite** | | | | |
| 65. | Abamectin 1.9% (w/w) EC | Limited systemic; Translamin ar action | 0.75 mL/L | 0.01 | 30 |
| 66. | Bifenazate 22.6% SC | NS | 500 mL/ha | 0.70 | 30 |
| 64a. | Spirotetramat 15.31% w/w OD | S | 700 mL/ha | 2.0 | 60 |
| **V** | **Plant Growth Regulators** | | | | |
| 67. | 1-Naphthyl acetic acid 4.5% L | S | 100 ppm | 0.06 | 15 |
| 68. | Chlormequat chloride 50 SL | S | 600-1000 ppm | 0.05 | - |
| 69. | Ethephon 39% w/w SL | S | 1250-1750 mL/ha | 1.00 | 110 |
| 70.$ | Forchlorfenuron (CPPU) 0.1% L | S | 1-2 ppm | 0.01 | 60 |
| 71. | Gibberellic acid (GA3) Technical | S | 100 ppm (Cumulative Usage) | No MRL Required | PHI not applicable |

| Sr. No. | Chemical recommended for major disease & pest | Nature of chemical | Dose on formulation basis | EU MRL (mg/kg) | Pre-harvest Interval (PHI in days) |
|---|---|---|---|---|---|
| 72. | Hydrogen cyanamide 50 SL | S | 30-40 mL/L | 0.01 | 90-120 |
| **VI** | **Herbicides** | | | | |
| 73. | Indaziflam 20 + Glyphosate IPA 540 SC (1.65% w/w + 44.63% w/w) | S + S | 1875-2125 mL/ha | 0.01 + 0.5 | 108 |
| 74. | Paraquat dichloride 24 SL | NS | 5 mL/L | 0.02 | - |

NS = Non-systemic, S = Systemic

*. Resistance in downy mildew based on Cys b gene (G143A) against QoI fungicides (Fenamidone, Azoxystrobin, Famoxadone, Kresoxim methyl, Pyraclostrobin and Trifloxystrobin), cellulose synthase gene (PvCesA3) against CAA fungicides (Dimethomorph, Iprovalicarb and Mandipropamid) and resistance in powdery mildew based on CYP51 gene (14α-demethylase) against triazole fungicides (Penconazole, Hexaconazole, Myclobutanil, Flusilazole, Difenoconazole, Tetraconazole) have been detected in India from major grape growing areas. Use of formulations containing these fungicides should be minimized and avoided during high risk periods.

$. Application of Forchlorfenuron (CPPU) should be avoided after 65 days of pruning or after 6-8 mm berry size is attained to reduce the chances of detections.

**Note**

- All the doses mentioned above are for high volume sprayers, where normal spray volume is 1000 L/ha. Spray volume can however be changed as per the efficiency of sprayers used. However, the amount of each pesticide based on its active ingredient recommended for 1 ha area on the basis of 1000 L spray solution should be strictly maintained to ensure bio-efficacy and to minimize pesticide residues.
- Recommended PHI will be valid only if two applications of an agrochemical are given per fruiting season at the interval of 7-15 days at recommended dose except in case of special mention in table.
- If any of the pesticide found ineffective in controlling the targeted diseases or pests, it is advised not to give repeated applications of the formulation since it may lead to residue issues and increase the resistance population of targeted pathogen or insects.
- The information provided in this document is of advisory nature. The responsibility of usage of chemicals for the management of any of the above pests and diseases and compliance of the produce to the EU-MRL requirement will rest with the growers.
- Since risk of more than one pest may overlap, if appropriate insecticide is used, control of non-targeted pest can be achieved. Compliance for dose, number of applications and PHI as recommended for target pest is essential and should be strictly adhered.

❄❄❄

**भाकृअनुप-राष्ट्रीय अंगूर अनुसंधान केन्द्र**

डाक पेटी संख्या 3, मांजरी फार्म डाकघर, सोलापुर रोड, पुणे – 412 307, महाराष्ट्र, भारत

दूरभाष : 020-26956000 • ई.मेल : director.nrcg@icar.gov.in

**ICAR-National Research Centre for Grapes**

P. B. No. 3, Manjari Farm P. O., Solapur Road, Pune - 412 307, Maharashtra, India

Tel. : 020-26956000 • Email : director.nrcg@icar.gov.in

वेबसाइट Website : https://nrcgrapes.icar.gov.in/